सराय

मैंने यह उपन्यास सन् १६३७ में लिखना आरंभ किया था और सन् १६३६ में समाप्त किया। ठीक सा प्रकाशक न मिलने के कारण अब तक पड़ा रह गया। आज प्रकाशन की कठिनाइयों के होते हुए भी यह छप गया है। उसी जमाने के लिखे हुए मेरे अन्य उपन्यास भी शीघ्र ही प्रकाशित होंगे।

यदि श्री रूपनारायण पाण्डेय ने इसे 'माधुरी' में धारावाहिक रूप से प्रकाशित न किया होता, तो संभवतः यह अप्रकाशित ही रह जाता। अतएव पाठकों को उनका आभारी होना चाहिए। मैं तो उनका कृतज्ञ हूँ ही।

सन् १६३६ से १६४४ के बीच का जमाना तेज़ी से गुजर गया है। मेरे विचारों में भी तब्दीलियाँ आई हैं। पर यह उपन्यास आज भी मुझे बहुत पसन्द है।

उपन्यास के पात्र तथा घटनाएँ कल्पना-लोक की नहीं हैं। इसी दुनिया की हैं—आपके और हमारे बीच की।

एप्रिल, १६४४
३१ ए, बेली रोड,
इलाहाबाद।

श्री 'पहाड़ी'

पु० सराय का दूसरा संस्करण पाठकों को सौंपते हुए प्रसन्नता हो रही है।

मई, १६४८

रेखा ? उसे कौन नहीं जानता। स्थानीय क्लबों तथा सभ्य समाज की वह तितली है। वह भले ही वास्तविक सुन्दरता के समीप न हो, उसमें एक व्यावहारिक आकर्षण है। शहर के व्यक्तियों, मुहल्ले के लोगों और गृहस्थी में नारियों के मुंह पर उसका नाम है। उसने एक कथित आदर्श के बाहर अपने आँचल को बचा कर चलना नहीं सीखा है। सिविल-लाइंस् में नम्बर दो बँगले के बाहर उसके नाम की तख्ती लगी है। उस पर खुदा है मिस रेखा, एम्० ए०, एल्०-टी०, इंसपेक्टरेस गर्ल्स स्कूल्स। सन्ध्या को लोग एक काले रंग की फोर्ड कार की ओर उँगली उठाते हैं। जिसे एक युवती क्लब वाली सड़क की ओर चलाती हुई बढ़ जाती है। लोगों का सन्देह सही निकलता है।

रेखा को इस शहर में आये हुए अभी केवल सात महीने हुए हैं। वह सीमित दायरे के आई० सी० एस्० और पी० सी० एस्० लोगों के जल्सों में शरीक़ हो, होशियारी से चलती है। वहाँ वह स्वाभाविक सन्तुष्टि पाती है। लोगों की यह धारणा है कि उसे और कोई लालसा नहीं है। वह किसी बात पर दलील करके अपनी राय देने की आदी नहीं है। न कभी अपने विचारों को व्यक्त करती है। अपनी बात तथा भावना में रहकर गम्भीर बन गई है। लोग उसे समझना चाहें, समझ लें। उसे इसकी अधिक परवा नहीं है। उसकी मूकता के कारण लोगों में कुछ सन्देह फैल रहा है। कहीं-कहीं अब वह शिकायत का रूप ले लेता है। रेखा उस बहाने से उत्साहित नहीं है। लोगों की धारणाओं से सतर्क भी नहीं। उसे [illegible] है। उससे सरो[illegible] नहीं रखती।

रेखा के जीवन-इतिहास का ज्ञान किसी को नहीं है। शहर में किसी से उसका ख़ास सखी भाव नहीं है। उसके समीप किसी की पहुँच न होने के कारण वह सब भेद-सा लगता है। घर की बूढ़ी नौकरानी लगों के सवालों का उत्तर नहीं देती। कहीं से भी लोगों को कुछ जान-सुन लेने का मौक़ा नहीं मिलता है। वैसे रेखा की आज की बातें सब को रंगीन लगती हैं। लेकिन रेखा उस ओर उत्साहित नहीं है। लोगों की सूझ तथा तत्व-व्याख्या से कोई सरोकार नहीं रखती। पिछले जीवन के सारे पन्ने धुँधले पड़ गये हैं। कभी कोई घटना सजग हो उसे बेचैन कर देती है; किन्तु समय का भारी हाथ, अवसरवादी की तरह उसे फुसला मीठी थपकियों के साथ सुझाता है—अतीत स्वप्न है और वर्तमान अटल सत्य। भविष्य में होने वाली घटनाओं पर विचार करती है तो उसका शरीर सिहर उठता है। एक असाधारण थिरकन होती है। उसका चेहरा अनायास गुलाबी पड़ जाता है। वह आने वाले दिनों पर निर्भर न रह, वर्तमान स्थिति में रल जाती है। आज वह जहाँ खड़ी है, उस समाज के व्यवहार से उसे कुछ आश्चर्य नहीं होता है। उसे आज के दैनिक जीवन का हिसाब रखना जरूरी लगता है। कभी तो वह भावुकता के आवेश में उदास पड़ जाती है। सोचती है कि वह एक सुन्दर गुड़िया है। नहीं, वह एक सुन्दर रंगीन परों वाली चिड़िया है, जो कि मुक्त उड़ती फिरती है। वह यह जानती है कि कभी-कभी बाज ऐसी चिड़िया का शिकार करता है। फिर एकाएक विचारधारा बदल जाती कि वह मोम की एक सुन्दर मूर्ति है। जिसके चारों ओर दुःख, पीड़ा और वेदना का वातावरण है। उसका दम घुटने लगता है। सोचती है कि वह नारी है। उसका जीवन नदी की गति की तरह है, जहाँ ज्वार-भाटा आकर उसे रोक लेता है।

पुरुषदल अपनी अपेक्षित धारणा के बल पर कहता है—कल वह '......' के साथ थी। वह मंगल को पैलेस सिनेमा गई थी। अब लगता है की टेनिस का साथी उसे मिस्टर '......' पसन्द है। उसकी ख्वाहिश '......' आई० सी० एस्० की पत्नी बनने की है। कुछ कहते हैं—वह शादी नहीं करेगी। नौकरी बहुत है। शादी तो एक बंधन है। जिसे नारी अपनी अर्थिक भित्ति को सँभाल लेने के लिये बेवशी में अपनाती है।

रेखा के पास लोगों का मत, अथवा किसी धारणा को जान सुन लेने के लिये समय नहीं है। न उस तक ये सब बातें पहुँचती हैं। फिर भी लोग आपस में व्यर्थ की दलील करते हैं। वे अपने पुरुषत्व का डंका पीटते हैं। घर में पत्नी से चुटकी लेने में नहीं चूकते कि रेखा साधारण नारी है। सारा पुरुषदल दावे के साथ समझाने लगता है कि रेखा का इस तरह स्वतन्त्र डोलना समाज के लिये हित कर नहीं है। यह तो रेखा की विवशता है। वे सब रेखा को आदर्श के मजबूत खम्भे से बाँधने के पक्षपाती हैं। पत्नी सब बातें कर्तव्य-सी सुनती है। पुरुष कहता है कि हमें उस सवाल का सही रूप लेना है। मन की कसौटी पर रेखा को परख लेना चाहिए। पत्नी व्यर्थ के विवाद में न पड़ कर चुप रह जाती है। वे लोग रेखा को आगे कर, व्यर्थ का जाल गढ़, उसमें स्वयं उलझ जाते हैं। हर एक पुरुष होने के नाते सोचता है कि उसका भी रेखा पर एक सामाजिक अधिकार है। इसे वह गौण मान लेने के लिये तैयार नहीं। इस ध्रुव सत्य से परे असंभव पर वह विश्वास नहीं करेगा। वह बात अनुचित होगी। पत्नी भले ही यह सब कुछ सुनना न चाहे, पति अपने जन्मसिद्ध अधिकारों को सुझाकर, अपना पूरा-पूरा कर्तव्य अदा करता है। नारी की कमजोरी की कहानी सुनाते-सुनाते थकता नहीं है।

रेखा की अवस्था का कोई ठीक-सा अनुमान नहीं लगता। बना-वट में वह खूब सुन्दर है। भले ही चिट्टी गोरी नहीं, फिर भी नारी-आकर्षण की परिभाषा में पूर्ण है। वह कुमारी है और अवस्था की उस 'कोमल धरती' पर चल रही है जहाँ सावधानी से चलने का नियम है। उसमें एक बाहरी सौंदर्य है कि बनावटी लज्जा नहीं बरतती, इसे शीलता में गिन सकते हैं। पुरुषदल द्वारा अपनी गम्भीरता, मुस्क-राहट तथा सौंदर्य की प्रशंसा सुनते-सुनते थकती नहीं। वह इसके लिये पुरुष की आभारी है। अपनी बातों में सबको आश्रय देती है। सबको बराबर मानती है। सबको जीवित रहने का सबक पढ़ाती है। इसी लिये अभी तक सुबह के समाचार पत्र में किसी निराश प्रेमी की आत्महत्या का हाल नहीं छपा।

उस दिन 'टाउनहाल' में पार्टी थी। सुहावना वातावरण था। 'रिस्तोराँ' के नौकर अपनी सुन्दर पोशाक में इधर-उधर व्यस्त थे। चारों ओर हरी-हरी दूब फैली हुई थी। एक व्यवस्थित देरी के बाद पार्टी समाप्त हुई। उसी समय मिस्टर श्याममोहन सिंह ए० एस्० पी० ने रेखा से एक युवक का परिचय कराते हुये कहा, "मिस्टर दिनेशचन्द्र !"

"आपसे मिलकर बहुत खुशी हुई।" रेखा मुस्कराकर बोली। दिनेश ने एक बार रेखा को देखा और चुप रह गया। रेखा फिर बोली, "मिस्टर सिंह अक्सर आपका जिक्र किया करते थे।"

और रेखा अपनी 'कार' पर बैठ कर चली गई। अब मिस्टर सिंह ने दिनेश से पूछा, "क्या सोच रहे हो?"

"कुछ नहीं।" कहकर, दिनेश, ने सिगरेट केस से एक सिगरेट निकाल कर मिस्टर सिंह को दी और दूसरी खुद सुलगा कर पीने लग गया।

"यह वही रेखा है दिनेश, जिसके बारे में मैं तुमको बहुत कुछ लिख चुका हूँ।" कहकर मिस्टर सिंह ने गहरी साँस ली।

सिगरेट का बहुत-सा धुआं उगाल, दिनेश बोला, "तुम्हारे दृष्टिकोण से मैं सहमत नहीं। तुम जो सोचते हो रेखा वह नहीं है।"

"क्या ?"

"मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि रेखा उससे भिन्न है। पत्रों की एक-एक लाइन में तुम उलझ जाते थे। उनमें भावना प्रधान रहती थी, विचार गौण।" खिल-

"लेकिन दिनेश ?"

"आज कोई भी समझदार लड़की पुरुष की गुलामफिर मैंने रेखा करेगी। यह उसके लिए असह्य है। वह सामाजिक आ हैं। विवाह को नियम बन्धन और गृहस्थी को गया। फिर धीरे-धीरे वे तैयार नहीं हैं। उनका अपना स्वस्थ दृष्टिकोण हो, तुनककर बोली— पुरुष उनको धोखा न दे सकेगा। तुमने इस पहलू आप व्यर्थ ही झूठे समझने में साधारण भूल की है।"

"तुम इसे मेरी भूल कहते हो। मैं रेखा के । बड़ी देर के बाद से हूँ। मैंने उसे भली भाँति देखा, पढ़ा और समझा हैही हूँ। जीजी से नहीं है। वह पास आती है फिर जरा ढील देकर नी जिम्मेदारी में लेती है। यदि इस चुम्बकीय आकर्षण का उसे गर्व हो, की बात नहीं। पुरुष से उसे कोई डर नहीं है। फिर भी जाते हुए वह हिचकती है। उससे दूर-दूर भाग कर करेगी।"

"यह तो हर एक होशियार लड़की करेगी। वह जानती हुती है। मैं ने स्वभावतः उसे निर्बल बनाया है। पुरुष के हाथ की कठपुतली रहती।

जाय, यह भय सदा लगा रहता है। पुरुष ने सदा अपना ऊपरी हाथ
रख कर नारी को फुसलाना सीखा है। इसी लिए वह उससे अधिक वास्ता
नहीं रखना चाहती है।"

"नहीं दिनेश, रेखा इससे भिन्न है। वह मौका दे, कहती लगती है,
मुझे समझ लो। तुम यह सुन कर आश्चर्य करोगे कि रेखा एक दिन मुझसे
झगड़ी भी है।"

पु "झगड़ा ? वह तो नारी का बल है।"
बराबर बात मैं चिट्ठी में नहीं लिख सका। सोचा कि मिलने पर तुमको
अभी तक उस दिन :
का हाल नहीं लौटते हुए मैंने कहा था, 'मेरा मन आज स्वस्थ
उस दिन 'टाउन
'रिस्तोराँ' के नौकर अप
ओर हरी-हरी दूब फैली दिल उदास- सा रहता है। सिर में पीड़ा, शरीर
समाप्त हुई। उसी
ने रेखा से एक
दिनेशचन्द्र !" ाथे पर अपने हाथ की हथेली रखकर कहा, 'आप
"आपसे ि खेल रहे थे। चलो तुमको घर छोड़ आऊँ।'
दिनेश ने एक ानी 'कार' पर बैठने का अनुरोध किया तो मैं बोला,
बोली, "मिस् कम्पनीबाग से निकल जाऊँगा।'
और रे ी बात अकाट्य मानकर मैं 'कार' पर बैठ गया। रेखा ने
ने दिनेश से ाग की ओर मोड़ ली। हम पिछले फाटक से भीतर पहुँच
"कुछ स' के पास चम्पा की झाड़ी से लगी बेंच पर बैठ गये।
निकाल क चुप रहकर मैंने कहा 'रेखा ?'
या है ?'

'मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।'

'प्रेम'! वह हलके मुस्कराई। सँभल कर बोली, 'इस बड़ी समस्या पर बेकार न सोचा करो। नहीं तो परेशानी बढ़ती जायगी। मैं कोई इलाज थोड़े ही जानती हूँ!'

'फिर भी रेखा......'

'आप बावले तो नहीं हो गये। क्या इस भाँति एकान्त में प्रेम की दुहाई देना आपका उचित व्यवहार है? आपका अपनी पत्नी और बच्चे के प्रति क्या कर्तव्य है? उसकी उपेक्षा न करो।' रेखा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

'कुछ हो, मेरा अपना आदर तुम्हारे लिये है।' कहकर मैंने रेखा से एक गहरा आलिंगन छीन लिया था।

"रेखा उठी। पहले उसका चेहरा सफेद पड़ गया। फिर धीरे-धीरे गुलाबी रंग छाया। वह सिहर उठी। गुस्सा न हो, तुनककर बोली—'घर चलिये अभी-अभी फैसला कराये लेती हूँ कि आप व्यर्थ ही झूठे घमंड में न रहें।'

"मैंने डर कर उधर देखा। वह तनी खड़ी मिली। बड़ी देर के बाद उसने हँस कर कहा—'मैं यह असंभव बात नहीं कह रही हूँ। जीजी से सारी बातें कह कर उनकी राय लूँगी। क्या आप अपनी जिम्मेदारी में इसे स्वीकार करके सन्तुष्ट हैं?'

"मैं अपराधी की तरह बोला, 'इसे भूल जाना रेखा।'

'भूल जाऊँ! यह कदापि नहीं होगा।' वह तुनक पड़ी।

'क्या रेखा?'

'मैं अधिक सुनना नहीं चाहती। जीजी ही माफी दे सकती हैं। मैं नहीं जानती थी कि आप जाली और फरेबी है। अन्यथा सावधान रहती।

क्या यह आपकी ठीक हरकत थी ?'

'तो अब......'

'पहुँचा पकड़ लिया अब और क्या चाहिए। अपनी इस बहादुरी के लिए मन में क्या गढ़ रहे हो ? इस सबके लिए फूल सकते हो न ! तुम्हारा चेहरा मुरझा क्यों गया है ? तुम तो अभय प्राप्त कर चुके हो। अब किसी का डर नहीं। तुम्हारे लिये कुछ अनुचित नहीं। हर एक को सँभाल, उबार लेने की कोशिश न किया करो।'

"रेखा चली गई थी। मैं चम्पा के पेड़ से लगी उस बेंच पर अवाक् बैठा ही रह गया। सोचा—यह रेखा क्या है ? मन में झगड़ा मचा हुआ था। मैं उसका गम्भीर व्यंग शाप-सा स्वीकार कर चुका था। मैं उसकी असाधारण भावुकता में पिघल कर चुपचाप घर लौट आया।

"फिर रेखा से कोई बात नहीं हुई। मैं एक खून के मामले में बाहर चला गया था। दो सप्ताह बाद लौट कर आया तो रेखा को वैसे ही सरल पाया। वही हँसी ! वही चुहल ! मानो सब कुछ भूल गई हो। या उसने उसको साधारण भावुकता में बिसार दिया था। वह नारी की लाचारी ही है। वैसे रेखा आज उतनी ही पास है। लगता है कि पहिले से और निकट आ गई है ! लेकिन अब वह बोलती कम है। कई बातें अपने भीतर छिपा लेती है। मैं उसकी मुद्राओं को भाँपता हूँ। वह कहती लगती है—उस बात को याद न रखना। उसे हटा कर मुझे भूल जाने की चेष्टा करना। मैं कब मना करती हूँ। क्या तुम अपना उत्तरादयित्व नहीं समझते हो। अपनी गृहस्थी में रहो। वही सुखद है। बच्चे और पत्नी के पास तुम्हारी जगह है। मुझे समझ लेने के लिये कई और पड़े हुए हैं। तुम वहाँ पसरने की कोशिश मत

किया करो। अपने को बेकार आदमियों की गिनती में क्यों गिना करते हो ? इस ओछे प्रेम से बाहर गहरी सन्तुष्टता है।

"वह हँसती है। मुसकराती है। अक्सर मेरी आँखों में अपनी आँखें गड़ा कर मौन रहना सीख गई है। मैं उस व्यवहार से उलझन में पड़ जाता हूँ। मुझमें कुछ कह और पूछ लेने की सामर्थ्य बाक़ी नहीं रहती। कभी सोचता हूँ, पत्नी से रेखा की तुलना क्यों की जाय। क्या रेखा एक बच्चे की मां न बन सकेगी? अब पत्नी के प्रति आकर्षण घटता जा रहा है। वह बहुत फीकी लगती है। रेखा तो एक तृष्णा है। पत्नी गृहस्थी में खो गई है। उसमें कोई नवीनता बाक़ी नहीं। कभी तो उससे ऊब जाता हूँ। वह अपना यथार्थ सौंदर्य सँवारने की परवा नहीं करती। इधर बार-बार मन में चुपके से कोई कहता है, रेखा के चारों ओर एक रेखा खींच लेनी चाहिए। उसे अपने निकट ला, उसे सुझाना चाहता हूँ कि वह मोहनी है। वह व्यक्तित्व की एकाई में क्यों रहती है? जीवन तो एक खेल है और नारी उस खेल की आधारमूर्ति है। उसे पाकर समेट लेना चाहता हूँ। नारी कभी असाधारण भले ही लगे, पर है वह साधारण ही। उसका शरीर आकर्षण का हेतु है। उस शरीर की रक्षा करने का भार पुरुष का है। यह नारी उस ओर भूलती जाती है।

"बड़े-बड़े कैदियों से मुझे वास्ता पड़ा। खून करने वाले दिमाग़ कम कुशल नहीं होते। उनको रोज ही गिरफ्तार करना पड़ता है। इस काम को निभा लेने के बाद बड़ी प्रसन्नता होती है। सुनो न, जब मैंने एक खूनी को गिरफ्तार किया था, तब देखा, उसकी नवयौवना पत्नी दरवाज़े पर चिक की आड़ में खड़ी है। वह कहती लगी यह न करो। वे मेरे पति हैं। उनको छोड़ दो। कुछ हो माफ़ कर दो। तब

क्या वह भावुकता की अधिकारिणी नहीं थी? पति के खूनी साबित हो जाने पर भी पत्नी का उसके लिए दिल में आदर था। वह उसका छुटकारा चाहती थी। लोगों की धारणा है कि भावना के लिए ही नारी पति की पूजा करती है। यह राय मुझे झूठी लगी। तब क्या 'सेक्स' की भूख गौण है? उस पति को फाँसी होगी और वह अपनी शारीरिक भूख के निपटारे के लिए दूसरा पति कर लेगी। छोटी जाति के लोगों में यही व्यवस्था चालू है। वहाँ युवतियाँ पति की मौत के बाद दूसरे घर बैठ जाती हैं। उनको पुरुष-आश्रय मिलने अधिक देर नहीं लगती। वहाँ यह अपवाद नहीं कहा जाता है। यह तो साधारण रिवाज-सा चालू है।

"चिक की जाली के भीतर उसकी आंखों के आँसू साफ़-साफ़ देख पड़ते थे। उनकी एक-एक खारी बूँद भारी पीड़ा पहुँचाने की क्षमता रखती है। पुलिस के सिपाही उसके पति को पकड़ कर ले गये। अब तो वह लाज-शरम के परदे को ठुकरा, मेरे पाँवों में लोट पड़ी। मैंने देखा था कि वह फटी-पुरानी चिप्पे लगी धोती पहने थी। अपने उस असाधारण सौंदर्य को ढक लेने के लिए उसके पास पूरा कपड़ा भी न था। मुझे उस पर दया नहीं आई। मैं उस अर्ध-नग्न शरीर को देख कर सिहर उठा। भारी उत्तेजना शरीर पर फैली। मुझे उस सब पर विश्वास नहीं आया। मैं रूढ़ियों से प्रचलित भावुकता को केवल ऐतिहासिक महत्व देता हूँ। इस सब को दुनियादारी में बिसारना पड़ता है। उस अमूल्य देह पर दया उभारनी अनुचित-सी जान पड़ी। सस्ती चीजें कोई लोभ नहीं लाती हैं।

"वह फिर उठी। बार-बार कहती—मुझे साथ ले लो। मैं उनके बिना कैसे रहूँगी? मेरा कुछ इंतज़ाम कर दो। मुझे अकेले रहते हुए

भीतरी
बहुत डर लगता है। मेरी हालत पर रहम खाओ। मैं और कुछ मान माँगूंगी। यहाँ मेरा अपना सगा कोई नहीं है। यहाँ कैसे रह सकती हूँ। इस दुनिया में किसी पर मुझे विश्वास नहीं है। आप शक्तिशाली हैं। आप की संरक्षता में पड़ी रहूँगी।

"वह पछाड़ खा, गिर कर बेहोश हो गई। आजीवन का ठेका? मुझे बहुत हँसी आई। यह घटना रेखा से जीवन-प्रसाद पाने के बाद की है। वहाँ बार-बार रेखा की याद आती थी। मन में एक उलझन और गांठ पड़ गई। दिल में एक जगह खाली होती जान पड़ी। मैं उस लड़की की तुलना रेखा से करने लगा। उस युवती का शरीर रेखा से स्वस्थ था। फिर भी उसको अपने में जगह देने वाला भाव जाग्रत नहीं हुआ। दिल में कोई कहता था, काश कि तू रेखा होती!

"रेखा का एक व्यक्तित्व है। वही उसका आकर्षण है। वही घमंड और प्यार करने का लोभ है। वास्तविक रेखा, उस लड़की से सुन्दर नहीं है। नारी नाम ही उसके अंगों को अपनाने की पूर्णता नहीं है। उन अंगों की तुलना कर सकते हैं। उनकी सार्थकता और रोचकता पर अधिक विचार करना निरर्थक होगा। लेकिन एक नारी जो कि मुक्त है और बार-बार चुनौती देती है। उससे खिलवाड़ रचने में अपूर्व आनन्द आता है। उसे छेड़ने, परखने तथा उससे आंख-मिचौनी खेल लेने का सबक सीखना बुरा नहीं लगता। रेखा की बातों में लोच है, शरीर में अदा है, उम्र में नमक है, वह बहुत प्यारी लगती है। उसे बार-बार प्यार कर लेने के लिए मन तड़पता है। उसको अपने निकट पा लेने के लिए मन उतावला हो जाता है। उसके हृदय को खोल, नया सबक पढ़ लेना कौन नहीं चाहेगा। वह कुछ नहीं कहेगी। समझदार होने पर उसका कोई अनुरोध नहीं होता है। जैसे कि उसे

निर्बलता का उपचार नहीं है। आपका यह व्यवहार उसके लिए कोई नया सबक नहीं था ?"

"नया सबक ?"

"शायद उसे तुमसे उस भाँति प्रेम पाने की आशा रही होगी। इसके लिए वह तुम्हारी आभारी हो सकती है। आजीवन तुम्हारी दासी बन कर रह जाय, आश्चर्य की बात न होगी। कौन जाने, इससे उसकी किसी अतृप्त आन्तरिक सुख की पूर्ति हुई हो। कोई पिछली दुःखान्त घटना भी अनायास उभर कर पीड़ा पहुँचा, परेशानी बढ़ा सकती है।"

"जीवन दुःखान्त ?" मिस्टर सिंह धीरे से गुनगुनाये।

"यह ठीक बात है। रेखा अपने जीवन का हिसाब नहीं रखती होगी एक दिन इन्सान को ऐसी आदत स्वयं पड़ जाती है। रेखा के लिए जीवन के अन्तिम दिनों में व्यक्ति और उसके व्यक्तित्व का सवाल सुलझाना संभव नहीं होगा। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि यही प्रेम का आशीर्वाद, धरोहर और सान्त्वना बन जाय।"

"तेरी बातें तो कुछ समझ में नहीं आतीं। अबकी तू खूब तैयार होकर दलील करने आया है। यह सच बात है न ?"

"तुमने ठीक समझा है। यह नारी पिछले पाँच महीने से मेरे दिल को अपनी ऊँची एड़ियोंवाली सैंडिल से कुचलती रही। कभी-कभी तो वह अज्ञाता मेरे जीवन में ख़ाली जगह ढूँढ़ने लगती थी। कई बार उसका आँचल मेरी आँखों से छू गया। जिस दिन तुम्हारा भेजा हुआ फ़ोटो मिला, उस रात्रि मुझे नींद नहीं आई। मैं बार-बार लॉ की दफ़ाएँ उस पर लागू करता था। सवाल पूछता—अरी, मेरे दोस्त का दिल चुरानेवाली बोल-बोल, तू क्या है ? आज उसे देखा, तो चुप रहा। किसी सवाल को पूछने की भावना मन में नहीं उठी। मैं जो कुछ उसे

समझता था, वही मिली। वह बाहरी शिष्टाचार में निपट खो गई है। अब अपने आगे किसी को अपरिचित साबित नहीं करेगी। यही उसकी सीख है। उसकी अन्य किसी चाहना पर विचार नहीं किया जा सकता है। वह स्वयं कुछ उत्तर नहीं देगी। बचपन में उसे सभा-समाज की ओर से निरुत्साहित किया गया होगा। पिता के घर पैदा होते ही उसे कोसा गया कि लड़की हुई है। स्कूल कालेज में दुलहिन-सी बना कर, परदेवाली गाड़ी तथा मोटर में निकलने की व्यवस्था समाज के ठेकेदारों ने की। उसे किसी से बातें कर लेने का अधिकार नहीं मिला। उसे सुझाया गया होगा कि वह नारी है। उसे पुरुष से डरना चाहिए। उसके समीप न जाना ही हितकर है। संस्कारों से उसने यही सब पाया। तब उसके दिल में बात उठी होगी कि यह सब क्या है? जहाँ देखने की मनाही होती है, वहाँ सब झाँक कर देखना चाहते हैं। इसके लिए आड़ मिलनी आवश्यक है। कभी-कभी जीवन का भीतरी कौतूहल अवहेलना आगे लाकर भारी उलझन पैदा कर देता है। तभी तो लड़कियाँ डरपोक और दयालु बन जाती हैं। इन लड़कियों को देखकर बड़ी हँसी आती है। प्रकृति ने इनकी रचना ऐसी की है कि पुरुष उनसे ठीक तरह खेल लेता है। इस खिलवाड़ के लिए मां बचपन से ही अपनी लड़की को सुघड़ बनाकर पूरी शिक्षा देती है। और मायके से ससुरालवाली मंजिल की दूरी में भावुकता का तीव्र प्रवाह तो होता ही है।"

"मैं अधिक बातें नहीं सुनना चाहता हूँ। यह तो बता कि वह तुझे कैसी लगी?"

"अपनी राय क्या दूँ? कारण मैं उसका पुरुष नहीं हूँ। न मुझे नायक बनने की चाहना ही है। वह तुम्हारी नारी है। फिर स्वाभाविक

स्वस्थ जीवन में हर एक पुरुष का विशेष नारी के लिए आकर्षण होता है। तुम्हारे जीवन के लगाव से उसका यही सम्बन्ध है। तुम्हारी भीतरी भावना को उसकी कोमलता से बल मिलता है। तुम्हारा उस पर ठीक ही अधिकार है। रहा मैं, उसे दूर से देखना चाहता था, देख लिया। मेरे हृदय पर उसके व्यक्तित्व का कोई असर तक नहीं पड़ा। इसी लिए उसे परखने की जिम्मेवारी लेना अनुचित बात होगी। उसके जीवन में व्यर्थ का सन्देह पैदा करके कुछ कहना, सत्य नहीं माना जा सकता है। भविष्य के बारे में क्या कहा जाय? दुनिया के उस चक्कर को ऐसा ही पड़ा रहने दो। उससे जितना अलग रह सकूँ, अच्छी बात है। भले आदमी व्यर्थ की परेशानियां नहीं बटोरते।"

"दिनेश फिर......"

"वह सब कुछ उचित है मिस्टर सिंह। मुझे तुमसे ईर्ष्या नहीं होती। इस दरजे की नारी के साथ जीवन चलाना भले ही भयानक लगे, पर वास्तव में बात ऐसी नहीं है। रहा भविष्य? उसे पड़ा रहने दो। आज की घटनाओं पर विचार सही होगा। कल की फिर देख लेंगे।"

"और उसका सौन्दर्य?"

"हर एक नारी अपनी सजावट में सुन्दर लगती है। नग्न नारी-तसवीरें पुरुष हृदय को ज्ञेय नशे से भर देती हैं। नारी का सही रूप इतना लुभावना नहीं होता। नारी पुरुष की स्वाभाविक उत्तेजना के कारण मोहक लगती है। पुरुष-चेष्टा के बिना उसका कोई मूल्य नहीं होता। ख़याली नारी-ढाँचे के लिए आपके दिल में आग सुलगाती है। वह भारी पीड़ा पहुँचा कर दिल के टुकड़े करने पर उतारू हो जाती है। उसका सामीप्य पा लेने पर सब कुछ फ़ीका लगता है। उसका मूल्य घट जाता है। नारी अपने लगाव में जितनी मंहगी होगी, उतनी ही

मूल्यवान् बनी रहेगी । इसी लिये अधिकचरी लड़कियाँ धोखा खा, आजीवन अपनी परेशानी बढ़ाकर रोगिणी बन जाती हैं । लड़कियों को सावधान रहना चाहिए कि वे आसानी से न पकड़ी जा सकें।"

"यह तुलना ठीक नहीं है । अभी तू रेखा को नहीं समझ पाया है !"

"वह मेरी पकड़ में आ गई है। आपकी मारफ़त उसे समझ लेने में कठिनाई नहीं पड़ी। वह सबकी 'प्रेमिका' बनना जानती है । इस गुण के साथ-साथ उसे अपनी रक्षा का पूरा ज्ञान भी है।"

वे बड़ी देर तक बातें करते करते चौराहे पर पहुँच गये । अब मिस्टर सिंह अपने बँगले की ओर मुड़े और दिनेश होटल की ओर बढ़ गया। दिनेश चुप था। अब उसे अपना जीवन स्थाई रूप में चलाने की चिन्ता है। इस भार से वह अलग नहीं है । वह बन्धन नहीं चाहता, फिर भी उसे समाज के कुछ नियम मान्य हैं । वह इसके विरुद्ध कुछ नहीं कहता है। विश्वविद्यालय का जमाना गुजर गया । वह सब अभी तक स्मृति की ऊपरी सतह पर छलछलाया करता है । इन्सान तो जीवन में घटनाओं की भारी ढेरी का बोझा सदा ढोता रहेगा। कुछ घटनाओं का विस्तार होता है, कुछ का नहीं। जीवन के चलने की चर्चा सुखद नहीं है। आज के जीवन में पग-पग पर रुकावट है। कहीं कोई सहूलियत नहीं। जिन्दगी को पार करना वांछनीय है । अपना भार हलका करने के लिए खोदकर खाने की व्यवस्था ही सही है।

भला इस नये शहर में उसकी वकालत चलेगी ? वह अपने से यह सवाल किया करता है। उसे अपना भरोसा है, जिसे वह नैतिक बल मानता है। अपनी आंखों में वह स्वयं मूल्यवान् बना रहना चाहता

है। लेकिन व्यक्ति की पैनी बुद्धि उसे बार-बार डसती है। यह है बुद्धि-वादियों का न्याय! इस फ़िरके के लिए दुनिया चन्द जजबात तथा विचारों की ढेरी है। जब चाहो उसे सुलगादो। ये अपने भीतर-भीतर बातें कुरेदते रहते हैं। कभी तो अपने को निकम्मा भी पाते हैं। गति का नाम है जीवन! अपने में व्यर्थ के सवाल उठा, अपने पर सन्देह करना हितकर नहीं लगता। यह अस्वस्थता है। रोगी बनना भला नहीं। अपनी विचारधारा के साथ चुपचाप दिनेश आगे बढ़ रहा था कि उसने देखा, उसके समीप एक 'कार' खड़ी हो गई। रेखा उतर कर बोली, "मैं कहना भूल गई थी कि आज मिस्टर सिंह मेरे यहाँ 'डिनर' पर आवेंगे। आपको भी न्योता है। वे कहाँ हैं?"

"अपने बँगले चले गये। लेकिन मैं न आ सकूँगा। कुछ जरूरी काम है। कष्ट के लिए धन्यवाद!"

"लेकिन भूखे काम नहीं होता।"

"आज तक 'होटल' में भूखा कौन रहा है?"

"क्या आप होटल में टिके हैं?"

"हाँ।"

"मैं समझती थी..."

"आपने सही समझा है। स्वयं मिस्टर सिंह का यही खयाल था। क़ायदे के मुताबिक वह उचित बात होती। लेकिन मुझे गृहस्थी में टिकना पसन्द नहीं। वहाँ बहुत अड़चनें पड़ती हैं। मुझे वह सब ठीक नहीं लगता। मेजवान की दिनचर्या पर अपने को समर्पित करना पड़ता है। उसके चाय पीने के वक्त पर चाय, खाने के समय खाना, आदि कई मुसीबतें हैं। वह सब व्यर्थ और अनुचित लगता है। मैं अपना व्यक्तित्व दूसरे के सहारे छोड़ देने का पक्षपाती नहीं हूँ। जब कि इन बातों से

आसानी से छुटकारा मिल जाता है।"

"आप मेरे अतिथि नहीं होंगे ? मेरे घर पर वह व्यवस्था नहीं चलती।"

"आज आप क्षमा कर दें। आगे किसी दिन अवश्य आऊँगा।" रेखा ने अधिक अनुरोध नहीं किया, चुपचाप चली गई।

—मिस्टर सिंह के बँगले पर पहुँच कर रेखा ने देखा कि वे बाहर बाग में टहल रहे हैं। रेखा को आई हुई देख, आगे बढ़ कर बोले—

"रेखा ?"

"मैं आपके दोस्त को भी न्योता देने गई थी, लेकिन उनको स्वीकार नहीं हुआ। उनको अपना होटल पसन्द है।"

"क्या दिनेश नहीं आवेगा ?"

"यही उनकी विनती है।"

"विनती ?"

"यह सब उनको बेकार लगता है। उनके पास समय नहीं है।" रेखा ने तीखी मुस्कान छोड़ी।

"मैं अपने साथ ले आऊँगा।"

"आपके दोस्त हैं। आप ही यह सब जानें। मेरा तो उनसे कोई नाता नहीं है। उनको बुरके में ही लाना मुनासिब होगा। वहाँ बहुत से लोग आवेंगे। कहीं किसी की नजर न लग जाय। तब तो आप अपने दोस्त से हाथ धो बैठेंगे।" कह, रेखा खिलखिला कर हँस पड़ी।

"यह असम्भव बात है।"

"वह तो हम देख लेंगी।"

"क्या दिनेश को ?......"

"मेरा तो अपना कोई मतलब नहीं है। लेकिन और कई विचारों

के लोग आवेंगे। आपको बेड़ियाँ पहनाने की इजाजत शायद मैं नहीं दे सकूँगी। वैसे आप सारे शहर के कप्तान ठहरे ?"

"रेखा ?"

"खैर, आइएगा।

"दिनेश को आगे करके तूने यह क्या एहसान वाली बात सुनाई है।"

"एहसान......?"

"और तो कोई बात मेरी समझ में नहीं आई।

"फिर कभी समझ लीजिएगा।" सरलता से कहकर रेखा चली आई। उस जाती हुई रेखा को मिस्टर सिंह देखते रहे। वह झगड़ने नहीं आई थी। उसकी बातों में एक आपसी समझौता हुआ करता है। वह सहज ही सब बातें समझा कर चली जाती है।"

उधर रेखा अपने बँगले पर पहुँची। देखा, उसकी अंतरंग सहेली लता बैठी हुई है। वह उससे बोली, "आज हमारे यहाँ एक नया 'जन्तु' आने वाला है। सारी खातिर तुझे ही करनी पड़ेगी।"

लता ने अपनी आंखें मींचते सुझाया—"देख लूंगी उनको मैं ?"

रेखा ने कहा, "आज का युवक अपनी बुद्धि के अभिमान में न जाने क्यों फूल उठता है। पढ़-लिखकर परेशान रहना ही उसका काम है। वे कर्तव्य को ठुकराकर अपने को सही साबित करना चाहते हैं।"

"क्या जीजी ?

"आज के युवकों का नया मजहब, फकीराना लिवास और दर्शन-शास्त्र किसी भाँति आशापूर्ण नहीं है।"

"तुम क्या कह रही हो ?"

"खुद तू ही देख लेना। दिनेश बाबू आने वाले हैं। मिस्टर सिंह के अजीज और दोस्त।"

"वे यहाँ कब आये हैं ?"

"आज सुबह आकर होटल में अड्डा जमाया है।"

लता ने और कुछ नहीं पूछा। वह दिनेश के बारे में ज्यादा बातें नहीं जानती है।

होटल पहुँचकर मिस्टर सिंह ने देखा कि दिनेश तहबन्द के ऊपर बनिआइन डाले हुए मैनेजर से बातें कर रहा था। एक व्यवसायी की भाँति बातें चालू थीं। उनको देखते ही बोला, "तुम आ गये चलो ठीक हुआ। फिलहाल मेरा विचार होटल में ही एक कमरा लेकर रहने का है। इसमें किफायतसारी न सही, काम चल सकता है। चलो कमरे में बैठें।

भीतर कमरे में इतमीनान से बैठकर सिगरेट सुलगाते हुए, मिस्टर सिंह ने बात शुरू की, "दिनेश तुम......"

दिनेश ने तो बात काटी, "मैं तुम्हारा इन्तजार कर रहा था। रेखा आई थी। मैंने जान-बूझकर तुम्हारे आगे फरियाद पहुँचाने का अवसर दे दिया। तुमने भूल की मुझे ले जाने का वादा कर आये हो। तुम कुछ सावधानी बरतते, तो मैं अपनी बात रख लेता। यही कारण है कि रेखा बार-बार तुम्हारे जीवन के आगे खड़ी हुई प्रतीत होती है और रुकावट डालती है। तुम यह कठिन खेल खेल रहे हो। अपनी सब बातों को एक बाट से न तोला करो। प्रत्येक बात पर अलग दृष्टिकोण होना चाहिए। मैं रेखा को पाने अथवा अपनाने का स्वप्न नहीं देख रहा हूँ। यह तुमको मुबारक रहे। वैसे मुझमें उसे कुचल डालने की शक्ति है।"

"क्या कह रहा है तू ?"

"वह सच बात है।"

"तुम वहाँ नहीं चलोगे ?"

"तुम्हारा क्या विचार है।"

"यही कि........."

"मुझे चलना चाहिए। फिर पूछ क्यों रहे हो ? चलो, मैं कपड़े बदल लूँ।"

वह बिना किसी आनाकानी के तैयार हो गया। विरोध की भावना नहीं थी। इस अचरज-भरे व्यवहार पर मिस्टर सिंह चुप रह गये। वे इस दिनेश को खूब जानते हैं। उसके बारे में उनकी एक राय भी है।

दोनों रेखा के बँगले की ओर रवाना हुए। राह भर दिनेश कुछ नहीं बोला। चुप रहा। वे बाग़ के एक कोने में कार खड़ी करके, उतर पड़े। सामने लान पर बिछी कुरसियों पर तीन-चार युवतियाँ बैठी हुई थीं। एक ओर 'रेडियो' बज रहा था। रेखा स्वागत करने के लिए आगे बढ़ी। दिनेश के पास पहुँच, धीमे स्वर में मीठी चुटकी ली, "पुलिस वालों से सब डरते हैं।"

"नहीं तो सरकार उनको हथकड़ी-बेड़ी पहनाने का अधिकार थोड़े ही देती।" दिनेश ने उत्तर दिया।

इस बीच मिस्टर सिंह ने पूछा, "क्या बातें हो रही हैं दिनेश ?"

"कुछ नहीं, मेहमानों को 'रिसीव' करने की रस्म अदायगी समझिए।"

रेखा उलझन में पड़ गई।

अब वे सब 'डिनर टेबुल' पर बैठ गये। बातें चालू रहीं। उनमें सबका अधिकतर सम्बन्ध नगर के व्यक्तित्व से था। उनसे दिनेश को कोई सरोकार नहीं है। रेखा दिनेश के समीप बैठी हुई थी। उस सारे वातावरण के बीच वह सजीव लग रही थी। कभी वह सुन्दर चुटकी

लेती, तो फिर मन का सारा हाल व्यक्त कर देती। उन बातों के सिल-सिले पर दिनेश का ध्यान नहीं था। उसे चुप रहना हितकर लगा। यदि रेखा उससे कोई सवाल पूछती, तो वह लापरवाही से उत्तर देकर एकाएक चुप हो जाता था। उस चुप्पी से सब उलझ जाते। लता अब सुलझकर बोली, "मिस्टर सिंह, पशुओं में जुगाली लगाने की आदत क्यों होती है ?"

दिनेश चुप न रहकर बोला, "डाक्टरी इलाज उनको माफिक नहीं होता।" और चुपचाप रेखा की ओर देखकर, पूरे चमचम से मुंह भर लिया।

लता ने अब रेखा से पूछा, "जीजी, तुमको भी तो बचपन में रस-गुल्ला खाने का शौक था।"

लेकिन दिनेश तो समूचा पापड़ दाँतों से दबाये एक एक टुकड़ा तोड़-कर उसे चबा रहा था। रेखा ने लता की बात की अवहेलना कर, दिनेश से कहा, "आप के आने से अब हमारा क्लब पूरा हो गया है। सब तरह के लोग हैं।"

"मुझे क्लब से क्या लाभ होगा ?"

"मुवक्किल जुटाने के लिए बाहर नहीं जाना पड़ेगा।"

"अच्छा ही है कि तूने वह जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है रेखा !" मिस्टर सिंह ने कहा।

लता ने हाथ धोते हुए मिस्टर सिंह के कान में मंत्र फूँका, "आप को ऐसा दोस्त पाने के लिए बधाई।"

पास ही दिनेश खड़ा हुआ सिगरेट फूँक रहा था। वह हट गया। उसे इन बातों से कोई उत्साह नहीं था। उसे पार्टियों से स्वाभाविक घृणा है। आज तो लाचारी में मिस्टर सिंह के साथ चला आया।

अब उसे देर हो रही थी। इस दरजे के लिए उसके मन में कभी सद्भावना नहीं रही। कभी-कभी वह पकड़ में आ जाता है। वह रेखा के समीप पहुँचकर बोला, "मुझे देर हो रही है। आपको धन्यवाद !"

मिस्टर सिंह साथ चलने को तैयार हुए कि लता ने कहा, "आप तो फुर्सत से आये हैं न ? एक-दो 'रबर' ब्रिज खेलेंगे।"

"तुम बैठो। मैं बाहर ताँगा कर लूँगा।" कह, दिनेश साधारण नमस्ते कर चला गया। भीतर अभी तक लता की हँसी प्रतिध्वनित हो रही थी।

दिनेश के चले जाने के बाद लता बोली, "ये तो जिन्दा आजयब-घर में रखने के लायक हैं।"

"तू उसे पहचान तो गई है।" रेखा ने कहा।

"मैं उसका आदर करता हूँ। वह बहुत ईमानदार साथी है।" मिस्टर सिंह ने अपनी व्यक्तिगत राय प्रकट की।

"आपका आदर तो रोज बदलता रहता है। आपकी सूझ भी मौसमी हवाओं वाला रुख रखती है।" लता की दलील थी।

रेखा टोक बैठी, "किसी के पीछे उस पर राय देना अनुचित है।"

"तो वे ठीक तरह रहा करें। अजीब आदमी है।"

"तू सबकी हँसी उड़ाती है। इसके अलावा भी कुछ सीखा है ?" लता ने रेखा की आँखों में अपनी आँखें गड़ाकर कहा, "जीजी !"

"क्या है लता ?" मानो कि वे एक दूसरे को भूल गई थीं ? और अब यह नई पहचान थी।

"क्या झगड़ा हो गया है ?" मिस्टर सिंह ने सवाल पूछ डाला।

"कुछ नहीं। एक-दूसरे को वरने की सोच रही थीं।" लता हँसने लगी।

"एक नो ट्रम्प।" रेखा बोली!

"टू हार्ट्स।" मिस्टर सिंह ने कहा।

"डबल।"

"लता चुप रही।"

खेल शुरू हो गया। रेखा खेल रही थी, लेकिन कोई ख़ास उत्साह नहीं था। क्या वह दिनेश को समझ रही है? वह उसके शिष्टाचार पर गुस्सा क्यों हो गई? वह तो बात रख लेने के लिये आया था। उसका अपना घमण्ड है। वह मन की भावना के अनुसार चलता है। कोई भेद नहीं रखता। वह अनुरोध करती, वह टालता नहीं। दिनेश का उन लोगों से खास परिचय नहीं है। वह अनजान लोगों के बीच अपना समय नष्ट करने का पक्षपाती नहीं है। वह होटल में रहता है। अपनी धुन में मस्त है। अपना सुभीता चाहता है। इस लता ने क्या-क्या बातें नहीं कहीं। उसने कुछ उत्तर नहीं दिया। लता की अवहेलना की।

"जीजी?"

"क्या है?"

"डील तुम्हारी है।"

रेखा ने बावन पत्ते ले लिये; एक-एक कर_ के बाँटने लगी। बाँटती रही। वह कार्ड बाँट रही थी।

एक सप्ताह के बाद एक दिन सुबह को रेखा की नौकरानी ने उसे जगाते हुए सूचना दी कि मिस्टर सिंह बाहर बाग में टहल रहे हैं।

रेखा ने ओवरकोट ओढ़ लिया और बाहर निकली । मिस्टर सिंह कुछ चिन्तित से बोले, "दिनेश तीन-चार दिन से होटल में नहीं है ।"

"कहाँ चले गये हैं ?"

"कुछ मालूम नहीं !"

"वे अजीब आदमी हैं !"

तभी दोनों ने देखा कि दिनेश फाटक से भीतर बढ़ रहा है । दोनों आश्चर्य से उसे देखने लगे ।

"आप कहाँ रहे ?" रेखा ने पूछा ।

"कहीं नहीं ।" कह कर दिनेश मिस्टर सिंह से बोला, "अभी सुना कि तुम होटल गये थे । ऐसी क्या बात थी ? तुम बेकार परेशान न हो, मैं इसी लिए यहां आया हूँ ।"

"तुम कहां चले गये थे ?" मिस्टर सिंह ने पूछा ।

"महेश को तुम जानते हो न ? उसी के घर चला गया था ।"

"कौन महेश ?"

"जो हमारे साथ मैट्रिक में पढ़ता था ।"

"शायद किसी षड्यंत्र में जेल हुई थी ।"

"वही है । अब यहीं रहता है ।"

नौकरानी चाय ले आई । तीनों चाय पीने लग गये । मिस्टर सिंह ने बातें चालू करते हुए कहा, "लता तुम्हारा मजाक उड़ाया करती है । इतनी लापरवाही से रहना ठीक नहीं । सोसायटी के लोग यह सब पसन्द नहीं करते हैं ।"

"आपने यह अच्छी बात छेड़ी !" रेखा यह सब नहीं सुनना चाहती थी । व्यर्थ का प्रसंग था ।

दिनेश तो कह बैठा, "मिस्टर सिंह, मुझे इस सबसे कब वास्ता रहा है? अपनी ख़ास परवा की आकांक्षा भी नहीं है। मैं तो तुम्हारे साथ सोसायटी में चला जाता हूँ। आगे ऐसी भूल नहीं करूँगा। मैं कहीं जाने को उत्साहित नहीं हूँ। लता व्यर्थ ही मेरी चिन्ता करती है। वह अपनी परवा किया करे। मैंने उसे अपनी रक्षा का भार नहीं सौंपा है। आपके अनुरोध का सवाल है। यह मुझे मान्य है। आपकी बातों को सदा इसी लिए स्वीकार कर लेता हूँ।"

"आप लोगों को दलील करने का अच्छा मौका मिल गया है।" रेखा बोली।

"यह दलील का सवाल नहीं है मिस रेखा! कुछ अपनी व्यक्तिगत बातों से हरएक का लगाव रहता है। अपनी रुचि के विरुद्ध उदारता बरतने वाली सीख मुझे नहीं मिली और दुनिया के विचारों से अपने को ढक लेने का प्रश्न? हम लोग बहुत व्यस्त हैं। हमारे पास औरों पर सोच लेने के लिए फालतू वक्त नहीं है। मैं एक छोटे दर्जे का आदमी हूँ। वहाँ चलने में मुझे सहूलियत होती है। मैं पार्टियों के तत्सम्बन्धी नियमों की अवहेलना करता रहा हूँ। मैंने अवसर मिलने पर भी, उनकी परवा नहीं की।"

"तब तो आपको समाज की पूरी जानकारी है।"

"वह जानकारी! अच्छा, तो मैं अब चुप रहूँगा। मैंने मिस्टर सिंह के द्वारा ही आपको पहचाना है। अन्यथा आपकी और मेरी दुनिया के बीच एक भारी खाई है। क्या यह कम आश्चर्य की बात है कि हम एक दूसरे को पहचान गये हैं।" कह कर दिनेश उठा और बोला, "उम्मीद है, अब आप मुझे छुट्टी दे देंगी।"

सारे तर्क को एक ओर हटाकर रेखा बोली, "आज शाम के लिए खाने का दस्तूरी निमंत्रण देने के लिए अब शायद् मुझे मिस्टर सिंह

की सिफारिश नहीं लेनी पड़ेगी ।"

"लेकिन आज तो मेरा महेश से वादा है।"

इस सुलझी बात से रेखा परास्त होकर चुप रही। दिनेश के व्यक्तित्व पर अधिक नहीं सोचा। यह व्यक्ति कोई भी लिहाज नहीं बरतता है। मन की सब बातों को आगे ले आता है। दूसरों के किसी अनुरोध का उसको विचार नहीं। इस पत्थर के प्रतीक के लिए अकारण लोभ का सवाल उठाना व्यर्थ होगा।

दिनेश ने परिस्थिति सँभाल ली, "आप क्यों कुछ समझ लेती हैं। अब तो मुझे यहीं रहना है। आप आगे मुझे बिना बुलाये ही उपस्थित पावेंगी। तब मेरे पास काफ़ी बेकार वक्त होगा। वकालत तो आकाश वृत्ति है। मैं आपकी बात अस्वीकार नहीं कर रहा हूँ। इस भावना को आप मन से निकाल दें।"

रेखा निरुत्तर हो गई। यह सब कुछ सुनकर चुप रही। कुछ कह लेने का प्रश्न नहीं उठा। दिनेश और मिस्टर सिंह चले गये। रेखा अपने में ही कुछ सोचती रह गई।

राह में दिनेश बोला, "यहाँ अपनी परेशानियों से छुटकारा नहीं, इन व्यर्थ के धंधों के लिए कहाँ से वक्त निकाला जाय। इन लोगों के पास बहुत बेकार समय है। इनके लिए वह सब साध्य है। मुझे इससे कोई दिलचस्पी नहीं है। मेरा जीवन एक-एक मिनट की किफ़ायतसारी पर टिका हुआ है। मुझे उनके मानसिक कौतूहल का साधन बनना अच्छा नहीं लगता है। वैसे अपनी आत्मा पर दूसरों का दबाव पड़ जाने से मैंने असाध्य को भी स्वीकार किया है। मैं चाहता तो हूँ कि मजाक की सजीव हँसी के बाद हमारा जीवन निपट जाय। लेकिन इसे व्यर्थ की जिम्मेदारी मान, झंझट मोल नहीं लेता। कर्तव्य पहले है,

कारण उसके बाद आता है। इसी लिये मुझे यह बखेड़ा नहीं जंचता।"

मिस्टर सिंह सब कुछ सुन रहे थे। रेखा उनके जीवन का एक ऐसा दाँव है कि वह उसे किसी भी तरह जीत लेना चाहते हैं। रेखा की रूप छटा सदा मन को बेचैन बनाती है। उसका एक-एक पोज दिल के निगेटिव पर उतर चुका है। आधी-आधी रात पत्नी के निकट लेटे हुए वे सोचते— क्या रेखा कभी उनकी हो सकती है? उस अंधकार में रेखा धूम्रकेतु की भाँति एक चिट्टी रेखा उनके चारों ओर खींचकर ओझल हो जाती। बस यही उनका सन्तोष है। फिर रेखा ने कुछ नहीं कहा था। उसने अपनी किसी मांग को आगे पेश करने का सवाल नहीं उठाया। वह कुछ सुझाती ही कब है? रेखा तो पत्नी और बच्चे को आगे रख, बार-बार धमकी देती है—वहीं तुम रहो। वहाँ से बाहर निकल आने का तुमको कोई अधिकार नहीं है। हमारा रिश्ता झूठा है। अपना कर्तव्य न भूलो।

दिनेश के मन में रेखा कहीं न थी। उसने पूछा, "लता कौन है?"

"मिस्टर सक्सेना की लड़की। पिछले वर्ष एम्० ए० पास किया है।"

"शायद इसी लिये अपनी शेख़ी से बाहर किसी को नहीं समझती। मैं शादी के अवसर पर उसके पतिदेव को अवश्य मुबारकबादी दूँगा।"

किन्तु मिस्टर सिंह को लता पर लेक्चर सुनने का कोई उत्साह नहीं था। रेखा की चर्चा क्यों न हो? वे बोले, "तुमने बेकार खाना खाने को मना किया। वैसे मुझे फ़ुरसत नहीं। शाम को पुलीस क्लब में एक मीटिंग है। तुम खाली हो, जा सकते थे। महेश के यहाँ तो फिर कभी चले जाते। रेखा ज़रूर बुरा मान गई होगी। अभी तुम उसे

नहीं पहचान पाये। तुमने यह ठीक नहीं किया। चले ही जाते, क्या हर्ज था। न रहते होटल में नौकरों के साथ गप लड़ाते। वहाँ तो समानता पर व्याख्यान देोगे। वक्त की परवा तो बाहर सोसायटी के लोगों के लिए होती है।"

"मुझे नौकरों का समाज सचमुच पसन्द है। अब एक दिन में वह आदत नहीं छूटेगी। मुझे उनके बीच रहने में आनन्द आता है। वे ईमानदारी से जीवन चलाते हैं और आज के सही इन्सान हैं। दावत आज की ही बात नहीं। इसे रोज़ का झंझट समझो। तुम्हारी दृष्टि में जो बात सच है, उसके प्रति मुझे अविश्वास नहीं। उसे अपने पर फिर भी लागू न करूँगा। इससे हमारे बीच सिकुड़न नहीं पड़ेगी। आपको अपने थके दिमाग के लिए 'टानिक' चाहिए और मुझे अपने पेट के लिए दो रोटियाँ? हमारी अपनी-अपनी सही राय है। इसे विवाद बनाना अनुचित होगा। हर एक व्यक्ति विद्रोह को पाले हुए है। वह अवसर पाते ही कुहरे की तरह फैलकर हृदय को ढक लेता है। लेकिन इन्सान हर जगह सहूलियत के साथ निभ जाना सीख चुका है। इसे आप भी तो स्वीकार करते हैं।"

कार होटल पहुँची। मिस्टर सिंह ने कहा, "तुम्हारी बातें कुछ समझ में नहीं आतीं दिनेश! तुम्हारी सब बातों पर बार-बार विचार किया करता हूँ।"

"मेरी अपनी समझ कुछ नहीं है। उस पर सदा आपकी आज्ञा लागू है। रेखा यह बात जानती है कि मैं आपकी बात नहीं टालता हूँ। मेरे सिद्धान्त आप के लिए नहीं हैं।"

"सिद्धान्त?"

"वे अखंडनीय तथा सच बातें होती हैं। त्रिकोण, त्रिकोण ही होता

है। दो और दो का जोड़ चार। इसमें क्या झूठ मिलाया जाय।"

"तुम्हारे सिद्धान्तों पर फिर बातें करेंगे।" यह कहते हुए मिस्टर सिंह ने अपनी कार मोड़ ली।

सन्ध्या को रेखा बाहर बाग में बैठी हुई थी कि दिनेश आकर बोला "मैं आ गया। बुलाये से बिना आमन्त्रण के आना ठीक होता है। इस व्यवहार पर मेजबान कितना ही झुँझलाये, वह सावधानी-वाला बर्ताव भूल जाता है। यदि मिस्टर सिंह यह न सुनाते कि आप बात-बात पर रूठ जाती हैं तो संभवतः मैं न आता। आपने यह विद्या कब से सीख ली है? यह रोग ठीक नहीं होगा।"

"बैठिए", रेखा अपने में सँभलकर बोली। वह इस सबके लिए तैयार नहीं थी।

दिनेश ने सावधान कराया, "वे पुलिस-क्लब गये हैं। उनको यह मालूम नहीं कि मैं यहाँ हूँ। स्वयं मैंने कुछ देर पहले यह नहीं सोचा था। यह मेरी उदारता नहीं है।"

रेखा उठी। इस बात की अवहेलना कर मुसकरा कर बोली, "नौकर भेजकर होटल से खाना मँगवाये लेती हूँ।"

"आप निश्चिन्त रहें। आपके वहाँ फोन तो होगा। मैं स्वयं मँगवाये लेता हूँ। आपको बेकार तकलीफ़ क्यों दूँ।"

"मैं सच कह रही थी। महराजिन सुबह छुट्टी लेकर चली गई। आज मेरी तबीयत ठीक नहीं। फिर भी आप घबराएँ नहीं। कुछ न कुछ मिल ही जायगा।"

दिनेश चुप रहा तो रेखा ने पूछा, "क्या यहीं वकालत करने का इरादा है?"

"इरादा क्या ? जहाँ रह गया, वहीं ठिकाना बना लेता हूँ। इस शहर के प्रति मेरा कोई खास आकर्षण नहीं है। अपनी जान-पहचान के बहुत कम लोग हैं। कहीं दूसरी जगह न जाकर फिलहाल यहीं की हालत देख लेने का विचार है।"

—लता आई थी। रेखा से बोली, "कल मीटिंग है। उसी की याद दिलाने आई हूँ। तुम तो चलोगी न ?"

दिनेश ने मेज पर पड़ा हुआ अख़बार उठाया। पढ़ने लग गया। लता की बात की अवहेलना की।

"कोई ख़ास बात है ?" रेखा ने लता से पूछा।

"कान्फ़रेंस की बात तय करनी है।" लता जाने लगी तो रेखा बोली, "खाना तैयार है। खाकर जाना।"

अब दिनेश ने अख़बार एक ओर रख दिया। लता से चार आँखें हुईं। उसने लता को भली भाँति देखा। लता बोली, "अभी मुझे खन्ना और सिनहा के यहाँ जाना हूँ।"

"लौटकर जल्दी आना। हम इन्तज़ार कर रहे हैं।"

"शायद न आ सकूँ।" कहकर लता चली गई। राह भर सोचती रही, दिनेश वहाँ क्यों आया है ? रेखा ने वह सब क्या कहा था ? अब रेखा उसकी आड़ में क्यों खड़ी सी लग रही थी ? वह उसके निकट सगेपन की हैसियत पाकर बैठा हुआ था। उसका अपना पिछले दिनों का व्यवहार कहां तक उचित था ? दिनेश ने न जाने क्या बात सोची होगी ? लेकिन जीजी की बातें वह मान्य मानती आई है।

कुछ देर बाद रेखा बोली, "लता और मैंने साथ-साथ पढ़ा है। वह मुझसे दो साल जूनियर थी। बीच में बीमार रही, इसी लिए अब एम्० ए० किया है।"

"सुना उसकी शादी होने वाली है।"

"तो अभी से ईर्ष्या शुरू हो गई। तब इस शहर में निभ चुकी। वह अभी शादी नहीं करेगी। उसकी मर्जी के खिलाफ घरवाले कुछ नहीं करते! आपकी सिफारिश कर दूँ?"

दिनेश ने उत्तर नहीं दिया। कुछ देर दोनों चुप रहे। आखिर रेखा अनायास कुछ याद कर बोली, "मिस्टर सिंह को फोन करदूँ?"

"वे दस से पहले न आ सकेंगे। उनकी गैरहाज़िरी मुझे ही निभानी है। मैं चाहता हूँ कि आप उनका पूरा-पूरा खयाल किया करें।"

"ख़याल?"

"उनकी मार्फत ही मैंने आपको पहचाना है। उनकी बातें अकाट्य नहीं, फिर भी उन पर दलील नहीं किया करता हूँ। यह आप...।"

"मिस्टर सिंह की!"

"आप उनको इतना नहीं पहचानतीं, जितना कि मैं। मेरे वे ही अकेले दोस्त हैं। मैं उनका आदर करता हूँ। उनकी बातें मुझे मान्य हैं। इसे त्याग गिन लेता हूँ। वह साफ दिल के आदमी हैं। आप उनको समझने की चेष्टा किया कीजिए।"

"क्या कहा आपने कि मैं उनको नहीं समझ पाती?"

"शायद नहीं।"

"वे आपके दोस्त हैं, यही समझ लेना क्या पर्याप्त न होगा?"

"मेरा स्थान उनके बाद है। मैं केवल बची हुई याद का अधिकारी हूँ। यह प्रतिष्ठा आवश्यक नहीं है।"

"तब इसे सच मान लेती हूँ।" रेखा हँस पड़ी।

उस हँसी को अपेक्षित गिन, दिनेश बोला; "यदि मिस्टर सिंह आपके नाखुश होने वाली बात के प्रति सावधान न करते, तो संभवतः मैं न आता। इस सावधानी के लिए भले ही मैं उनकी बुद्धि की पकड़ में नहीं, फिर भी नहीं चाहता कि मेरे कारण आप लोगों के आपसी व्यवहार में सिलवट पड़ जाय।"

खाना तैयार हो गया था। रेखा उठते हुए बोली, "अच्छा ही हुआ कि आप आ गये। नहीं तो मैं भूखी ही रहती। अपनी परवा स्वयं नहीं होती। दूसरे के सुझाने पर वह सही मालूम पड़ती है।"

दोनों 'डाइनिंग' रूम की ओर बढ़ गये।

खाना खाते-खाते दिनेश सोच रहा था—यही वह रेखा है, जिसके लिए सारा समाज और सब लोग परेशान हैं। यह उन सब लोगों के हृदय में पैठ चुकी है। सब उसे अपनाना चाहते हैं। हर एक इनसान इस सहारे को आवश्यक मान लेता है। वह सुन्दरता और सजीवता की परी है। उसके सारे आकर्षण को बटोर लेने की भावना मन में उठती है। उससे प्रेम की आँख-मिचौनी खेल लेना सह्य है। इस क्षमा के काले परदेवाले अस्तर को उठा, रुकावट पेश करने वाला हथियार किसी के पास नहीं है।

इसी बीच नौकरानी एक 'विजिटिंग कार्ड' लाई। रेखा सकपकाकर खड़ी हो बोली, "मैं पांच मिनट में आती हूँ। वह हाथ धोकर बाहर चली गई।

वह बहुत घबराकर उठी थी। कार्ड छूट गया था। दिनेश ने उठाकर पढ़ा'——' आई० सी० एस०, ज्वाइंट मैजिस्ट्रेट। वह

कौतूहल दबा नहीं सका। चुपके से उठा, दरवाजे की आड़ में खड़ा होकर सुनने लगा। गोल कमरे में होनेवाली बातें धीमी सुनाई पड़ीं। रेखा बोली, "मुझे आपकी बात स्वीकार नहीं है। आप तो अपने मन में सब कुछ गढ़ सकते हैं। मुझे ऐसे बेहूदे प्रस्तावों को सुनने का अवकाश नहीं है।"

"तो तुमने मुझे ठुकराने की सोच ली है रेखा! अपवाद और समाज का भय तुमको नहीं है।"

"सब लोग यही नजीर पेश करते हैं। आज आपने नई बात नहीं कही। मैं अपने मेहमान को छोड़ आई हूँ। कष्ट के लिये धन्यवाद!"

"वह कौन......?"

इस व्यंग्य को बीच में ही कुचलकर रेखा बोली, "यही आपकी सभ्यता है न? आप बैठे रहिए। मुझे देर हो रही है।" रेखा जाने लगी।

वह रेखा का हाथ पकड़कर बोला, "क्या तुमने सब सच बात कही है रेखा? वह कौन भाग्यवान् है, जिसे तुम अपना हृदय दोगी?"

रेखा का चेहरा गुलाबी पड़ गया, फिर उसमें तीव्र लाली फैली। तेजी से बोली, "इस तरह ड्रिंक करके आना कहाँ की सभ्यता है?"

"लेकिन रेखा, मैंने एक सपना देखा था—भविष्य का। जहाँ कि हम दोनों......"

"अपनी कविता का अलाप रहने दो। अच्छा......"

"रेखा, तुम जानती हो?"

"हाँ, सब कुछ; फिर भी कोई डर नहीं।"

"दुनिया कहती है कि मिस्टर सिंह..."

रेखा कमरे से बाहर चली आई थी।

इस घटना से दिनेश अप्रतिभ नहीं हुआ। यह अचरज की बात न थी। सधारण नारी के लिये यह जीवन सह्य नहीं होगा। वह तो रूढ़ियों से रो-धोकर गृहस्थी में रहना जानती है। इस असमर्थता के प्रति जीवन में परिवर्तन की भूखी नहीं है। एक यह रेखा है, जिसके पास प्रति दिवस पुरुष पहुँचकर उसकी परेशानी बढ़ाता है। हर एक व्यक्ति रेखा को पकड़, बाँधकर रखना चाहता है। उससे लुभावनी बातें कर गृहस्थी की सुन्दर वाटिका का भविष्य सुझाता है। कब तक रेखा मना करेगी? उसका भी कोई सुख होना चाहिए। नारी कहीं न कहीं, अनायास कमजोर पड़कर मोम की तरह पिघल जाती है।

तभी रेखा आकर बोली, "इन स्कूली जल्सों से तंग आ गई हूँ। इस कर्तव्य को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। काम से बिलकुल फुरसत नहीं मिलती। सेहत का सवाल उठाना व्यर्थ है।"

इस सावधानी वाली बात पर कुछ न कह, दिनेश चुपचाप खाना खाता रहा। यह रेखा का सही व्यवहार था। कुछ बातें अपने तक सीमित रहनी चाहिएँ। इस सत्य को छिपाना ही ठीक है। हमारी सभ्यता इस व्यवहार को स्वीकार कर चुकी है। आदि काल से नारी ने स्वाभाविक हिचक तथा झुंझलाहट को अपना लिया है। तब उसे यह बात आसान लगी होगी। पुरुष यह सब पहचान कर चुप रहा करता है। अब वह संकोच 'आकार' बन गया है। नारी की इस विवषता पर सोचना व्यर्थ होगा। दिनेश रेखा के हृदय में पैठ, उसका भीतरी झगड़ा समझ लेना चाहता था। रेखा दिन भर ऐसी बातें सुनते-सुनते थक जाती होगी। हर एक पुरुष उसे अपना विश्वास सौंपना चाहता है। अपने समीप पा, उसे सम्पत्ति बना लेने का पक्षपाती है। यह यथार्थ और रोचक खेल है! मनु ने कोई स्पष्ट लाइन खींचकर

मनादी नहीं की है। पुरुष चाहता है प्रेम ! बिना प्रेम के जीवन बेकार है। नारी के पकड़ में आते ही वह उसे दबोच लेगा, जैसे कि छिपकली पतिंगे को पकड़कर उसका अस्तित्व नष्ट कर देती है। यह तो पुरुष की दुनियादारी कहलाती है। वह इसे बार-बार सत्य घोषित करता है। उसे इसके लिए अवसर तथा सुलभी ओट मिलते अधिक देर नहीं लगती है। उसका यह बर्ताव कठोर नहीं गिना जाता है। 'सेक्स' तो एक सुख है। वह आवश्यक है। वह चाहना है। आशा है। कभी तो वह निराशा भी बन जाता है। 'सेक्स' की भूख कोढ़ की तरह घिनुआ रोग नहीं कि व्यक्ति इससे दूर भागता फिरे। वह नीम की दतून की तरह कड़ुआ होने पर भी गुणकारी है। रेखा चुपचाप इससे अलग रहती है। यह उसकी समझदारी है। अपने ज्ञान से वह अपनी जिम्मेदारी और कर्तव्य पहचान लेती है। कलंक तो नारी की अपनी चमक है। पुरुष कभी उसे पहचान लेने के लिये उत्साहित नहीं रहा। पुरुष तो अपने विश्वास में कहीं टिक जाने का पक्षपाती नहीं है। उसके प्रति सही उपेक्षा बरत साव-धान हो जाता है। नारी 'पड़ाव' की भाँति अचल पड़ी रहेगी। पुरुष उसको पार कर लेने के लिए बलवान् है। वह व्यर्थ पीछे रुक जाना नहीं चाहता।

रेखा मौन थी। उसका मन अस्वस्थ था। अभी वह जीवन के एक बड़े झगड़े से भाग कर आई है। अब अपनी पर्यायवाची संज्ञा बूझ रही थी। तो क्या यह सब व्यर्थ है? वह जैसी है, वैसी ही रहेगी। किसी की कुछ बात नहीं सुनेगी। रेखा ने देखा कि दिनेश उस पर आँखें गड़ाये, उस ओर देख रहा है। वह अपनी कातरता को सँभाल कर बोली, "दिनेश जी !"

दिनेश ने देखा, रेखा का चेहरा सफेद पड़ गया है। वह फिर भी चुप रहा। रेखा के मन में कई बातें उठ रही थीं। वह अपने विश्वास

को सँवार रही थी। सोचती कि कहीं दिनेश कुछ सवाल पूछेगा, तो वह क्या उत्तर देगी? अपने को सँभाल लेगी अथवा उभारकर रख देगी? दिनेश की चुप्पी असह्य हो आई। वह इसी लिये फिर बोली, "आज की सभ्यता अब साधारण पहचान के बाद अपनों को सगा गिन लेने का पाठ सिखलाती है। आप सोच रहे होंगे कि मैं क्या हूँ? इस दुनिया की छानबीन करने पर रोज़ ही हमें नई-नई बातों का ज्ञान हो सकता है।"

"लेकिन मैं तो अधिक सोच नहीं करता। हाँ, आपको मिस्टर सिंह के कारण पहचानने में अधिक देर नहीं लगी!"

"आप बार-बार अपने को अलग क्यों हटा लिया करते हैं? जीवन में यदि समय और अवसर न मिलें तो हमारी भावुकता शीघ्र ही जड़ बन जायगी। और आपकी पहचान! वह मेरा सौभाग्य था!" रेखा हँसी।

"पहचान का प्रश्न तो भूल है। हम मिलकर भी बिछुड़ जाते हैं। जमाना बदल रहा है। उस सबके लिए सस्ती भावुकता व्यर्थ हथियार लगती है। मैं ओहदेवाले मिस्टर सिंह से अधिक मनुष्य सिंह को पहचानता हूँ। वह मुझे सही व्यक्ति लगता है।"

"मैं उनसे यह सब सुन चुकी हूँ। वह बार-बार आपका ज़िक्र किया करते हैं। मैंने इसी लिये आपको पहले दिन ही समझ लेने की चेष्टा की। अब हम अपरिचित नहीं हैं।"

"मेरा विश्वास ठीक निकला। आप उनका पूरा-पूरा ख़याल रखती हैं। मन मुटाव नहीं होना चाहिये। वह मनुष्य की निर्बलता है। बेकार ही उसका हृदय कोमल बनता जा रहा है। कहीं वह चटक न जाय, डर जाता हूँ। उनको आपकी संरक्षकता में पाकर, अब अधिक चिन्तित नहीं रहता।"

"आपने तो आते ही वकालत शुरू कर दी।" रेखा सरल झुँझलाहट में बोली।

"यह तो अपने पेशे की मजबूरी है। हमें अपने मुवक्किल का पूरा-पूरा ख़याल रखना सीखना पड़ता है। तब यह बात उसी तरह लागू होगी। आपकी सूझ के लिए धन्यवाद वाली उदारता सौंपना ठीक है।"

रेखा ने दिनेश को देखा। वह उसे समझ लेना चाहती थी। उसे कुछ और कहना बाकी नहीं रह गया। यदि दिनेश कुछ और सवाल पूछ डाले, वह क्या उत्तर देगी? उसका मन उचाट हो आया। वहाँ पिछली घटना की भद्दी छाप थी। यह पुरुष-जाति क्या है? इसका यही हाल रहेगा। कुछ नहीं सोचते हैं। इनके मन में नारी के लिए सही मान कब आवेगा? ये नारी के शरीर पर अधिकार जमाकर, उसकी भावुकता को नष्ट कर देते हैं। यह दिनेश क्या सुझा रहा है? जैसे कि मिस्टर सिंह की पैरवी करने ही यहाँ आया हो।

मिस्टर सिंह आ गये। आश्चर्य से बोले, "दिनेश!"

रेखा ने कहा, "अभी आपकी ही बातें हो रही थीं। आपने यह कैसे समझ लिया कि मैं नाराज़ हो सकती हूँ? ऐसी बेकार बातों को आप क्यों उठाते हैं?"

दिनेश ने अपनी सही बात कही, "मैं जानता था कि तुम आओगे।"

आश्चर्य से मिस्टर सिंह ने रेखा को देखा। रेखा चुप थी। दिनेश की बात ने उसके हृदय में भारी हलचल मचा दी। दिनेश अब बिलकुल एक पहेली लगा। क्या कभी उसकी बातें समझ में आवेंगी? वैसे कुछ कह दिया करता है और अवसर जानकर ही कुछ कहता है। रेखा अपने

भीतर डरी। वह चुप थी। सब चुप थे। जैसे कि सब किसी आपसी समझौते पर विचार कर रहे हों और एक दूसरे को अवसर देना चाहता हो। तीनों भारी-भारी बाँटों से अपने को तोल रहे थे। अन्यथा रेखा इस तरह चुप न रहती। दिनेश ने अपने बातों की गहराई में सबको जगह दे दी।

अब मिस्टर सिंह बोले, "रेखा, मुझे अगले महीने यहां से चला जाना है। अभी-अभी 'टेलीग्राम' मिला। फिलहाल साल भर की एवजी है। वहाँ पूरे ज़िले का चार्ज है।"

रेखा ने पूछा, "कुछ खाओगे क्या ?"

गोल कमरे की घड़ी ने टन, साढ़े नौ बजाकर अपनी ओर सबका ध्यान आकर्षित किया। दिनेश ने अपनी 'रिस्टवाच' देखी और उठ बैठा। कहा, "साढ़े नौ बज गये। मुझे महेश के यहाँ जाना है। वह बेचारा इन्तजार कर रहा होगा। वह जानता है कि मैं अपने वादे का पक्का हूँ।"

मिस्टर सिंह ने पूछा, "कल सुबह होटल में तो मिलोगे न ?"

दिनेश चला आया।

अब रेखा बोली, "अजीब आदमी हैं ये! अभी तक समझ नहीं पाई।"

सचमुच दिनेश मिस्टर सिंह को सावधान करके चला गया। यह कह कर कि मैं जानता था, तुम आओगे। वह बात नहीं छिपाता। रेखा ने क्या सोचा होगा ? यह बात कहनी आवश्यक नहीं थी।

"क्या सोच रहे हो ?" रेखा ने अपनी खिली आँखें उनको सौंपते हुये कहा।

"कुछ नहीं।"

"आपने तो अच्छा वकील तैनात किया है !"

"मैंने ?"

"आपका वकील तो......"

"क्या मुझे वकील भी चाहिये ?"

"फिर भी।"

"यह भ्रम है।"

"झूठ"।

"तुम क्या कहना चाहती हो रेखा ?"

"वाह, हरएक बात में दिनेश आपकी दुहाई देता है।" कह कर रेखा ने एक पैनी मुसकान छोड़ी।

"रेखा, दिनेश तो .. .."

"उनको कुछ समझना भूल होगी। वह केवल आपकी बात रखने आये थे। वैसे वे किसी की परवा थोड़े ही करते हैं। उनको लाचारी से आने के लिए बाध्य होना पड़ा। यह आपका ठीक व्यवहार न था।"

"व्यवहार ?"

"सच बात है। वे यही कह रहे थे कि आपके आदेश पर आये हैं। उनको मुझे रूठा देखना नापसन्द है। कोई भी सफ़ाई पेश न कर वह बार-बार आपका ज़िक्र करते थे। आपकी तारीफ़ करते वक्त उनको अपने व्यक्तित्व का ख़याल तक नहीं रहता।"

"रेखा क्या उसी की बातें करती रहोगी ? वह तो अब चला गया। तुमको क्या और कुछ पूछना नहीं है ?"

"दिनेश कहता था कि वह तुम्हारा आदर करता है। तुम्हारे समीप ऐसे साथी को देखकर स्वाभाविक ईर्ष्या होती है। तुम बहुत

भाग्यवान् हो। भाग्य भी व्यक्ति को पहचानने की क्षमता रखता है। इसी लिए हर-एक से उसका सरोकार अलग-अलग-सा है।"

"यह तुम क्या कह रही हो रेखा ?" मिस्टर सिंह बात न पकड़ कर बोले।

"दिनेश-सा दोस्त पाना सौभाग्य की बात है।"

"रेखा, तुम बार-बार दिनेश को कब तक याद करती रहोगी ? उसे भुला दो। देखो, मैं यहां से जल्दी ही चला जाऊँगा। पांच-छः महीने हम साथ-साथ रहे। अभी तक मैं तुमको नहीं समझ सका। कल भविष्य न-जाने मुझे कहाँ ले जायगा। यह नौकरी नहीं, फजीता है। आज हम कितने निकट हैं। मैं तो तुम्हारा कैदी हूँ रेखा !"

"मेरे कैदी न ! मेरे पास एक न एक अंडरट्रायल तो रोज ही चले आते हैं। उन सबको कहां जगह दूँ। दिनेश की सिफारिश है कि आपको 'ए' क्लास दिया जाय। मन में आता है, एक बड़ा जेलखाना खोल, दिनेश को वहाँ का जेलर बना दूँ।"

"क्या ?" मिस्टर सिंह टकटकी लगा, बड़ी देर तक रेखा को देखते ही रह गये।

रेखा ने आँखें झुका लीं। कहा, "एक भूल को दुहरा-तिहरा कर, आप क्यों उसे सही साबित करना चाहते हैं। ?"

"वह भूल क्या है ? मैं अपने जीवन में एक कमी पा रहा हूँ ! वह तुम हो रेखा।"

"क्या कहा आपने ?" रेखा अटक पड़ी।

"इस जीवन में एक भारी कमी है। दिल प्रति-दिन कमजोर पड़ता जा रहा है। मैं स्वयं नहीं जानता कि बात क्या है ? तुमने तो जान लिया होगा रेखा। इस बात में नारी पुरुष से अधिक चतुर होती है।

तुम आज अपने चारों ओर की पंखुड़ियाँ समेट, छिपी क्यों रहना चाहती हो ?" कह कर मिस्टर सिंह पास सरक गये ।

"मैं बहुत कमजोर हूँ । अपने को संभालो मिस्टर सिंह, मुझे अधिक बेशर्म न बनाओ । सब गलत है । तुम तो हो पुरुष । मैं बहुत बीमार हूँ । मैं मर जाना चाहती हूँ मिस्टर सिंह । यह सारा व्यवहार झूठा है । झूठ है—झूठ !"

"रेखा !" मिस्टर सिंह ने रेखा का हाथ अपने हाथ में ले लिया । फिर कहा, "मैं यह बातें स्वीकार नहीं करूँगा । तुम्हारी दलील के बाद.........!" कह रेखा को अपनी बाहुओं में समेट लेना चाहा कि बाहर किसी के आने की आहट मिली ।

रेखा थक कर भी उस सहारे से अलग रहना चाहती थी । अब सँभल कर उठी । लता आई थी । वह आगे बढ़ी । लता का हाथ अपने में ले लिया । लता बोली, "मैं कहने आई थी कि सुबह शायद आपको लेने न आ सकूँगी ।" वह चुप हो गई ।

रेखा लता के साथ बाहर निकली । दोनों बाग में पहुँच गईं । लता ने देखा, रेखा की आँखों में आँसू थे । वह सन्न रह गई । रेखा उसे यह सुझाती सी जान पड़ी—तू समझदार है लता । तुझसे पुरुष यही चाहेगा । यही नारी अनुभव की देन है । कोरा जीवन चलाये नहीं चलता । वह सामर्थ्य के बाहर की चीज़ है । तू निभा सके, निभा लेना । मैं तो हार गई हूँ । मुझे आज पुरुष से घृणा नहीं है । न मैं उससे झगड़ती हूँ । उससे अलग ही कहाँ हूँ ?

फिर लता ने देखीं वे ही आंसुओं से डबडबाई आंखें । वह क्या कहती । कुछ नहीं कहना चाहा । उसकी बातों का कोई असर न होगा । बात नहीं सुधर सकती । उसने आज पहले-पहल ये आंसू पाये थे ।

रेखा ने सदा उनको छिपाया है। बाहर फूटनेवाली आदत उसे नहीं है। लता विश्वास के साथ कई बार अपना सगापन साबित कर चुकी है। रेखा कभी नहीं खुली। वह आज तक रेखा का हृदय पहचान लेने में असमर्थ रही है। आज उसे ज्ञात हुआ कि रेखा बहुत भावुक है। रेखा उससे अलग नहीं है।

अब रेखा बोली, "लता, यह जीवन कुछ नहीं है। एक अनिश्चित पर हमारा जीवन टिका हुआ है। कुछ न कुछ अभाव तो सदा घेरे ही रहेगा।" रेखा की आंखों से आँसू की बूँदे टपक पड़ीं।

लता ने पूछा, "जीजी", क्या बात है?"

रेखा ने आँखें नहीं उठाईं। उसके हृदय पर लता चोट करती प्रतीत हुई। क्या लता सब बातें नहीं जानती? वह तो स्वयं बावली है। रेखा उलझन में पड़ गई। सोचा, वह मिस्टर सिंह के आगे चुप क्यों रह जाती है? वे उसके जीवन में कैसा ज्वार-भाटा उत्पन्न करने की शक्ति रखते हैं। यदि लता न आती तो प्रलय हो जाता। वह मिस्टर सिंह के आगे क्यों निर्जीव बन जाती है? वे गृहस्थ हैं। वह फिर भी बच्चे की तरह उनको फुसलाती है। अन्यथा वे इतने समीप न आते। वह तो स्वयं ही सहूलियत बरता करती है। वह अपनी रक्षा के प्रति उदासीन रहना सीख गई है। वह सावधानी से चले तो ठीक होगा। तो क्या जीवन केवल नैतिक ढोंग पर निर्भर रहता है? जहाँ कि उसे कुछ नहीं पाना है और एक दिन वह सब देकर चूक जायगी।

रेखा ने अपने को सँभाल, बात पलटने को कहा, "मैं कल न आ सकूँगी।"

"नहीं आओगी?"

"मेरी तबीअत ठीक नहीं है।"

"क्या है जीजी ?"

"कोई खास बात नहीं है। कई जरूरी काम पड़े हुए हैं। दौरे का प्रोग्राम भी बना है।"

"कल तो चलना ही पड़ेगा। मैंने सब लोगों से कह दिया है।"

"अच्छा, अच्छा! आऊँगी। भला सेक्रेटरी का आदेश टाल सकती हूं?"

"मेरा आदेश ?"

"जाने दे वह बात।"

लता कुछ और कहे, इतने में रेखा ने देखा, मिस्टर सिंह चले जा रहे हैं। पुकारा, "मिस्टर सिंह !"

मिस्टर सिंह ने आवाज नहीं सुनी। वे चले गये। लता ने देखा कि दिनेश वहाँ नहीं है। वह उसके बारे में पूछना चाहकर भी बात दबा गई। बोली, कल जरूर आना जीजी।"

"कार कहाँ है ?"

"बाहर खड़ी है।"

लता चली गई। रेखा बड़ी देर तक बाहर बरामदे पर पड़े हुए मोढ़े पर बैठी रही। नौकरानी आकर बोली; "बीबी !"

रेखा सँभल गई।

भीतर पहुँचकर रेखा बिना कपड़े उतारे ही पलँग पर लेट गई और फफक-फफककर रोने लगी। वह देर तक रोती रही। वह पिछले जीवन की घटनाओं को फैला, वहाँ कुछ टटोल रही थी। कई घटनाएँ चमकने लगीं। बचपन की, स्कूल की, कालेज की और दुनियादारी की। एक-एक घटना आगे आ कुछ सुझाकर छिप जाती थी। जैसे कि अब वह सब एक धोखा हो। वह बिखरा जीवन! बचपन में कुछ

उजाला तथा चमक थी। बाकी सब मटमैला था। एक भारी जीवन-झगड़े के बाद अब उसके पास क्या बाकी बचा हुआ है? जीवन-द्रव में तो कभी-कभी मैल तैरता है और अन्त में वह वहीं घुल जाता है। घटनाओं पर अवलम्बित जीवन दिनों और सालों पर ही निर्भर नहीं रहता; भावना उसे बार-बार ढक लेती है। इसी लिए बाहरी वातावरण अकसर उसे नहीं छू पाता।

मां कहती थी—लड़की को बहुत सिर चढ़ाना ठीक बात नहीं। उसे ताड़ना भी चाहिए। बात-बात में हठ! उसे तो दूसरे के घर में निभना है।

पिता का उत्तर—हमारे तो वही बेटी है, वही बेटा है। तुम तो उसे बेकार कोसा करती हो। क्यों बेटे गुस्सा हो गई? तूने अपनी छोटी मोटर देख ली है न?

मां को डर था कि वह लड़की है। इसी लिये वह अधिक स्वतंत्रता की पक्षपातिनी नहीं थी। घर से बाहर झांकने तक की आज्ञा न मिलती थी। आस-पास मोहल्ले की सहेलियों के बीच जाने तक के लिए मनाही थी।

उसके रूठ जाने पर पिता कहते—बच्चा रूठ गया, नाख़ुश लगता है। बोल क्या लेगी?

घर के नौकर-नौकरानी कहते थे—बीबी रानी है। लल्ली है।

एक दिन पिताजी मर गये। मां ने अपना शासन कड़ा कर दिया। मां पिछली बूढ़ियों की रूढ़ियोंवाली दलील सुझा, बात-बात पर झिड़कती थी। वह मां भी एक दिन चुपके से चली गई। आख़िरी बात सुझाई थी—अब तू समझदार हो गई है, सँभल कर चलना।

जीवन के उन 'आकारहीन' दिनों में उसे निराशा घेरने लगी। आगे प्रतिदिवस जीवन का अनुभव बढ़ने लग गया। कभी तो उसका

दिल बिलकुल सूना हो आता था । फिर भी पढ़ाई चालू रही । वह पढ़ती थी यह सोचकर कि वह पढ़ेगी । अब 'विवाह' उस पर लागू नहीं होगा । अपनी बातों को सोचने समझने के लिए पर्याप्त समय मिल जाता था । वह बहुत सावधान हो दुनिया से हटकर चलती थी ।

कालेज का वह दिन—एक भूली हरी याद ! सारा जीवन मस्ती का था । वह सब आगे आकर ओझल हो गया । अनायास पीड़ा उभड़ने लगी । एक गहरी वेदना ने डंक मारा । मुंदी आँखों और जीवन-कल्पना के बीच आँसुओं की तह पड़ गई थी, जहाँ वह केवल आज झाँक सकती थी । वह सब तो......

कालेज का जीवन और सुबोध ? विश्वविद्यालय की झाँकियाँ ? क्लास में सुबोध पिछली सीट पर बैठा करता था......... । आज वह क्यों सुबोध को अपनी विचार धारा के प्रवाह में बहा रही थी । क्लास के सब लड़कों की भीड़ में सुबोध पर उसकी नजर अटक जाती थी । उसका वह नया सूट मन में समा गया था । एम० ए० प्रीवियस की सब लड़कियों के बीच स्पर्द्धा चल पड़ी थी कि कौन सुबोध को जीत लेगा । यह स्वाभाविक बात लगती थी । प्रत्येक सुबोध को अपना साबित कर, एक सही गौरव स्थापित करने की धुन में की । इस भावना को हर एक अपने में स्वीकार कर लेती थी ।

रेखा भी मन में सोचती थी कि क्या सुबोध कभी उसका ही हो सकेगा ? वह उसे पा सकेगी ? तब वे दोनों साथ-साथ रहेंगे । सुबोध वास्तव में तो उससे दूर लगता था और इसकी तृष्णा की परछांई बढ़ती चली जा रही थी ।

एक दिन संयुक्ता ने सुनाया कि सुबोध माधवी से बातें कर रहा था । उस रात रेखा को नींद नहीं आई । वह अपने में सवाल करती

रही कि क्या यह बात सच होगी ? स्वयं ही तुरन्त उत्तर गढ़ती—भूठ है ।

अगले दिन तीसरे घंटे के बाद, सुबोध ने रेखा से पूछा, 'आपके पास'———' की किताब है, प्रोफेसर साहब कहते थे ।'

'है ।'

'आप दो दिन के लिए मुझे दे सकेंगी ?'

'मैं कल ले आऊँगी ।'

दूसरे दिन रेखा सावधानी से अपने को सँवार कर विश्वविद्यालय गई । जाते ही सुबोध को किताब दी । पाँचवें घण्टे में वह लाइब्रेरी के पास सुबोध की पकड़ में आई । सुबोध बोला, 'आपका एक लिफाफा उसमें रह गया था ।' कहकर, लिफाफा उसे सौंपा ।

'लिफाफा !' बनावटी आश्चर्य से रेखा बोली । उसे फाड़कर साबित किया कि उसमें कोई ख़ास चीज़ नहीं है । फोटोग्राफर उसके फोटो का प्रिंट दे गया था । वही रह गया । वह उसे तो फोटो दिखलाना चाहती थी, पर सुबोध ने ख़ास उत्साह नहीं दिखलाया । अपनी सारी चेष्टा व्यर्थ जाते देखकर रेखा मुरझा गई । वह चुप रही । सुबोध का फोटो से कोई वास्ता नहीं था ।

फिर एक दिन रेखा ने सुना कि—सुबोध से माधवी की शादी तय हो गई है । वह दिन भर बहुत उद्विग्न रही । संध्या को कालेज से लौटती हुई बोली, 'मुझे आप से कुछ जरूरी बातें करनी हैं ।'

'मुझसे ?' सुबोध सकपकाया ।

'हाँ, आपसे ही ।'

सुबोध चुप रह गया । फिर रेखा बोली, 'यदि आपका कोई प्रोग्राम न हो, तो सिनेमा साथ चलें चलिए ।'

'मुझे माधवी की किताबें लौटानी हैं।'

'कल दे दीजिएगा। मैं चाहती हूँ कि इस समय आप मेरा अनुरोध अस्वीकार न करें।'

इससे पहले कि सुबोध कोई उत्तर दे, रेखा ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, 'चलिए।'

दोनों 'कार' के पास चले आये। सुबोध चुपके से पिछली सीट पर बैठ गया। कार 'स्टार्ट' हुई। सुबोध ने आश्चर्य से देखा, शहर की सड़कें छूट रही थीं। वह पूछ बैठा, 'हम कहाँ जा रहे हैं?'

'कहीं नहीं।' कहकर, रेखा ने 'कार' दाईं ओर मोड़ ली।

'रेखाजी!'

रेखा ने दोनों हाथों से 'हैंडिल' थाम कर क्षण भर के लिए उसे देखा।

'आप कहाँ जा रही हैं? शहर तो छूट गया है।'

'चुप रहिए, नहीं तो 'बैलेंस' ख़राब हो जायगा। हम कहीं भी नहीं जा रहे हैं। आपको क्या डर है? आप निश्चिंत रहिए।' वह गम्भीर हो गई।

अब सुबोध कुछ नहीं बोला। कार आगे बढ़ रही थी। रात हो आई। आकाश घिरा हुआ था। कार तेजी से आगे बढ़ने लगी। फिर 'कार' रुकी। खूब घना अँधियारा फैला हुआ था। रेखा उतर कर बोली' पेट्रोल चुक गया है और हमारी मंजिल भी पूरी हो गई है। अब आगे किसी सन्देह का सवाल नहीं उठेगा। अंधकार में टटोलना ही भविष्य है। वहीं हमें जाना है। यहाँ हम किसी की पकड़ में नहीं आ सकते। समाज हमसे बड़ी दूरी पर है। मुझे उसकी चिन्ता नहीं। मेरी आत्मा का तकाजा! बड़े-बड़े दार्शनिक अन्त में या तो क़ब्र में सो गए अथवा किसी नदी के किनारे पंचतत्वों को छोड़ गये। वहीं सही विश्राम

उनको मिला है। ठीक रास्ता कोई नहीं सुझा गया है। अन्यथा हमें अपने विद्रोह से इतना संघर्ष नहीं करना पड़ता।'

सुबोध ने बात अनसुनी कर दी। वह 'कार' से उतरकर आगे बढ़ गया। सामने मील का पत्थर था। उसे पढ़कर अचरज में गुनगुनाया—'एक सौ तेरह मील चले आये हैं!'

पीठ पीछे खड़ी रेखा बोली, 'चालीस मील की रफ्तार से आये हैं।'

उलझन में सुबोध खड़ा का खड़ा ही रह गया। रेखा मुसकराकर बोली, 'क्या इस अन्धकार में भी रास्ता नहीं सुझाओगे सुबोध ? यह तुमने कभी नहीं सोचा होगा कि हम दोनों किसी दिन इस तरह बसेरा ले सकते हैं। आज एकान्त में तुम्हारे समीप खड़े होने में मुझे भय नहीं लगता। यहां हमें कोई नहीं देख सकता है। आज से अब हमारे नये जीवन की भूमिका शुरू होती है। अब हम यहीं रहेंगे। भविष्य स्वयं खड़ा होगा। अब मुझे कोई चिन्ता नहीं है। हम दोनों तो एक हैं। यही हमारा सही नाता है। आज तक कोई अनजाने मेरी सोई भावनाओं को जगाता रहा है। वह तुम ही थे न ? तुम्हारा यह उपकार कभी न भूल सकूंगी।'

सुबोध चुपचाप मील के पत्थर पर बैठ गया। कुछ देर के बाद उठा और खेतों की ओर बढ़ गया। अरहर के खेतों के बीच छिप-सा गया। जब वह बड़ी देर तक नहीं लौटा, तब रेखा ने पुकारा, 'सुबोध!'

कोई उत्तर न पाकर वह आगे बढ़ गई। अरहर और ईख से भरे खेतों के बीच घूम-फिरकर, टार्च की रोशनी में देखा कि वह ईख के खेत की मेंड़ पर बैठा हुआ है। वह आगे बढ़कर बोली, 'सुबोध, मैं न जाने कब से तुमसे कुछ बातें करना चाहती थी। समय नहीं मिला।

तुम्हारे आगे मुझे कुछ नहीं छिपाना है। क्या तुम सारी बातें नहीं समझ रहे हो? सुना कि तुम माधवी से शादी कर रहे हो। मैंने आज इसी लिये तुमको पकड़ा है। मैं तुम्हारे लिये बहुत परेशान रही हूँ। मैंने कई महीने व्यर्थ सोचने में गँवा दिये हैं। आज मेरा सौभाग्य है कि तुम्हारे पास हूँ। लेकिन तुम तो बुत की तरह खड़े हो।'

रेखा चुप हो गई। यह कह कर सुबोध की ओर देखा। उसकी यह चुप्पी असह्य लगी। वह सावधानी से बोली, 'सुनो न? तुम क्या सोच रहे हो! शायद तुम यह न जानते होगे कि मेरा इस दुनिया में कोई नहीं है, जिसके आगे अपने मन की सारी बातें खोलकर रख सकूँ। एक तुमको पाया है और तुम भी चुप हो। तुम इस भाँति चुप रहना कब से सीख गये? तुमको ऐसा नहीं होना चाहिये।'

सुबोध फिर भी कुछ नहीं बोला।

अब रेखा सावधानी से कहने लगी, 'मैं अपने मन के भय को पहचानती हूँ। मैं बच्ची नहीं। तुम क्या सोच रहे हो? यही न कि मैं पागल हो गई हूँ।'

'क्या?' तन्द्रा से चौंककर सुबोध बोला।

रेखा ने बात सुलझाई, 'हमारा कौन-सा नाता है? मैंने आज तक उसकी परवा नहीं की। आज उतावली बनी जो करने तुल गई, उसे भूल जाना। मेरा बचपन अकेले कटा है और आज भी अकेली ही हूँ। अब जीवन में भारी कमी लगती है। चाहती हूँ कि तुम उसे बाँट लो। तुम मेरे लिये गैर नहीं हो। सुनो—सुनो, आधी-आधी रात कची नींद टूट जाने पर मैं सिहर उठती हूँ। उस भावुकता को मैं किससे बाँट लूँ? तुम पर मेरा हक़ था, इसी लिए इतनी दूर खींच लाई हूँ। अब मुझे तुमसे कोई परदा अथवा लिहाज नहीं बरतना है।'

मैं तो इस आदर के योग्य नहीं हूँ।'

'लेकिन मैं तुमको स्वीकार कर चुकी हूँ। तुम्हारी आज्ञा मुझे मान्य है।'

—आकाश में घने बादल घिरे हुए थे। चारों ओर फ़सल खड़ी थी। आँधी चलने लगी। आसपास कुछ नहीं देख पड़ता था। रेखा सुबोध के पास सरक कर बैठ गई और बोली, 'यदि भीख माँग सकती, माँग लेती। अब तो मुझे आपका त्याग चाहिए। आप मुझे उबार सकते हैं। माधवी के पास कुछ नहीं है। वह आपको धोखा देकर ठग रही है।'

'धोखा ?'

रेखा ने सुबोध का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, 'धोखा ? सरासर धोखा है! भले ही वह अपने को कुमारी गिने...'

सुबोध ने बात काटी, 'माधवी मुझसे कुछ कहना चाहती थी, लेकिन मैंने ही मना किया है। मैं शादी के बाद सब कुछ सुन लेने का अधिकारी हूँगा। आज मुझे वह अधिकार नहीं है। वह वादा करवा चुकी है कि मुझसे सब बातें कहेगी। तब मैं मना नहीं करूँगा।'

'वह भला क्या कहेगी ? वह बहुत होशियार है। उसकी सारी बात सुनकर आप उसे ठुकरा देंगे। जिसका हम आदर करते हैं, उसकी बुराई सुनना बहुत पीड़ा पहुँचाता है। फिर भी सब कुछ जान लेना चाहिए, ताकि कल आपको पछताना नहीं पड़े। आज आप अपनी भावुकता में बहे जा रहे हैं। कल आप समाज को न ठुकरा सकेंगे। समाज अपने अधिकारों के प्रति उदासीन रहना नहीं जानता है। वह प्रतिवाद करेगा। माधवी चरित्रहीन है।'

'चरित्रहीन ?'

'यह सब जानते हैं। माना कि वह उसकी गलती नहीं थी। अपनी भावुकता के कारण वह मजबूर हो गई। इस तर्क को कैसे सही मान लें।

उसने अपने मातृत्व की रक्षा नहीं की। कारण, उसका पुरुष भाग गया था। वह अकेली क्या करती ?'

गूँगे सुबोध को और समीप खींचकर रेखा बोली, 'आप समझदार हैं। सब लोगों का माधवी पर शक है।'

सुबोध ने बात तोल कर कहा, 'रेखाजी सतीत्व का प्रमाणपत्र किसी युवती के पास नहीं है। इसकी जाँच के लिए अभी तक वैज्ञानिकों ने कोई यन्त्र भी ईजाद नहीं किया कि सही बातें मालूम हो जायँ। साधारण बात को उठाकर, किसी के चरित्र पर राय देना हितकर नहीं। यह विवाद फैल जाना उचित नहीं होगा। माधवी पर कलंक! मैं माधवी का आदर करता हूँ। उसकी एक सहेली को उसके विरुद्ध वकालत करते हुए देख कर मुझे आश्चर्य नहीं हुआ। अपने प्रिय की बुराई जान लेना भली बात है।'

'मिस्टर सुबोध!' रेखा ने तेजी से बात काटी, 'हर एक इन्सान की दुनिया में कुछ मधुर आकांक्षाएँ होती हैं। यह अँधेरी रात, तुम्हारे समीप......; तुम चित्रकार होते, तुममें मेरे दिल में उठते हुए तूफान को पढ़ लेने की क्षमता होती; तुम्हारे हृदय होता! तुम कुछ समझ सकते!!'

हवा के तेज़ झोंके से रेखा के सिर की साड़ी सरक पड़ी। वह फहराने लगी। बार-बार उसका छोर फैलकर सुबोध को ढक लेता था। वह ठहर कर बोली, 'प्रलय हो जाता। हम मर जाते। कल को सारी दुनिया देखती......।'

'अच्छा खयाल है!'

'तुम्हारा हृदय तो 'इस्पात' का बना हुआ है!' कुढ़कर रेखा बोली।

'जब कि तुम्हारे पास उसे पहचान कर परख लेनेवाली कसौटी है।'

सुबोध ने उत्तर ने दिया।

'तुमने क्या कहा सुबोध?'

सुबोध ने इस बात का कोई उत्तर नहीं दिया। रेखा कहती रही, 'मेरी बात की अवज्ञा मत करो। मुझे अपने चरणों में जगह दे दो। मैं जीवन भर वहीं पड़ी रहूँगी।'

अब तो रेखा उत्तेजित हो फूट-फूटकर रोने लगी। रोती ही रही। जब होश आया तो पाया कि कोई पास नहीं था। पुकारा, 'सुबोध! सुबोध!!'

उस अँधेरी रात में उसका स्वर प्रतिध्वनित हो खो गया। तेज हवा चल रही थी। बीच-बीच में बिजली की चमक उठती थी। उसकी रोशनी में रेखा ने देखा की मटर के खेतों के बीच सुबोध, एक ऊँची धरती पर बैठा हुआ है। बादलों की गड़गड़ाहट कम्पन पैदा कर रही थी। वह आगे बढ़ी थी कि एक मेड़ पर ठोकर खा, गिर पड़ी। वहीं पड़ी रही। गहरी-गहरी सुबकियाँ उठीं।

अब मेह बरसने लगा। वह होश में आकर खड़ी हुई। लगा कि पास ही सुबोध है। वह जड़वत् वहीं पर खड़ी की खड़ी रह गई। मेह की झड़ी लगी। दोनों खूब भीग गये। सुबोध बोला, 'अँधेरे में कुछ नहीं सूझ रहा है। मोटर तक पहुँच जाते तो ठीक होता।'

'मेरा टार्च भी कहीं खो गया है।'

'अब यहाँ भीगना ठीक नहीं होगा।' कहकर सुबोध ने रेखा का हाथ पकड़कर उसे सहारा दिया।

बड़ी देर तक खेतों-खेतों में भटकने पर भी सड़क का कूल-किनारा नहीं मिला। अब वे क्या करें?

मेह बरसता ही रहा। दोनों लथपथ भीग गये थे। रेखा के बालों

से पानी की धाराएँ बह रही थीं। एक बार रेखा ने सुबोध का हाथ अपने हृदय से लगा, चुपके से उसके कान में कहा, 'सुबोध !'

रेखा की नौकरानी आकर बोली, 'बीबी !'

रेखा उठी। सोचा कि वह सब स्वप्न था। बरसाती रंगीन बादलों की भाँति घोड़ा, हाथी, महल के सुन्दर सजीव चित्र बनाकर क्षण भर में ओझल हो गया। आज उसके जीवन में पिछली घटनाओं का कोई चिह्न विद्यमान नहीं था। वह सब तो सदा परोक्ष में दुबका हुआ मिलेगा। वह कपड़े बदलकर लेट गई। नींद नहीं आई। मन में भारी झुँझलाहट उठी। दिल बेकल था।

सुबोध और माधवी !वह उस दिन, आँधी-मेहवाली रात्रि ! वह काँप उठी।

उसे सुबोध ने सहारा दिया था। अन्यथा वह उस अन्धकार में खो जाती। उसने आजीवन साथ देने का वादा नहीं किया। वह बोली थी, 'मैं निर्बल हूँ सुबोध ! क्या हम लोग इसी तरह आजीवन साथ-साथ न रह सकेंगे ?'

सुबोध तो चुपचाप आगे बढ़ गया था।

बड़ी देर के बाद आकाश साफ हुआ। चारों ओर पानी ही पानी भरा हुआ था। रेखा बोली, 'अब डर कुछ कम हुआ है।'

सुबोध 'कार' के पास पहुँच कर पिछली सीट पर बैठ गया।

'क्या सोच रहे हो ?'

सुबोध कुछ नहीं बोला।

'यह घटना सदा जीवन में याद रहेगी।' बालों को झाड़ते हुए रेखा बोली।

'क्या जीवन के बाद भी इसका अस्तित्व रहेगा ?'

'तुम माधवी की बात भुला देना ।'

'और बात सुनने वाली 'मार्फत' को ?'

'वह मेरी भूल थी । मुझे क्षमा कर दो । यह तो नारी की अपनी निर्बलता थी । तुम मुझे छुटकारा दे देना । मैं एक निर्बल नारी हूँ और तुम सबल पुरुष ? तुम-जैसा असाधारण बल मुझमें होता तो मैं सब सह लेती । लेकिन मेरे हृदय में ज्वालामुखी सुलगती रहती है । मैं स्वयं उसे नहीं बुझा पाती हूँ । मेरा अवलम्बन मेरी निराशा है और मैं उसमें प्रतिदिन सुलगती हुई अपनी जीवन-राख झाड़ा करती हूँ ।'

'इस तरह एक भावुकता के उफान से जीवन तोलना गलत है । मैं अपने रेतीले दिल में भावुकता को नहीं पनपने देता हूँ । मन में अज्ञात भाव [illegible] होकर अकुलाहट पैदा करते हैं । यदि हमारा व्यक्तित्व मिट्टी अथवा [illegible] का बना होता तो हम आज के आँधी-पानी में घुल जाते । देखो न, वे तुम्हारे आँसू, जिनको तुम आज तक सँवार कर रख सकी थी । आज इस बरसात में घुल गये हैं ।'

'क्या कहा आपने ?'

'जब तुम बेहोश पड़ी हुई थीं, मैंने तुमको भली भाँति देखा । तुम्हारी दशा देखकर, मेरा दिल पिघल गया था । मैं अपनी विवशता के कारण चुप रहा । यह तुम्हारी अनाधिकार चेष्टा थी । तुम यदि माधवी होतीं तो दूसरी बात थी । अपना-अपना स्वभाव होता है । मैं आज परिस्थितियों के कारण कठोर बन गया हूँ । माधवी के आगे सदा पिघल जाता हूँ । वह मुझे अपने मन का सही ढाँचा लगती है । अब तुम मेरी बात स्वीकार कर लोगी । प्रेम तो आदान-प्रदान की स्वस्थ लहरों का पोषक है । भावुकता को हटाकर ही हम अपनी सही पहचान कर सकते हैं ।'

रेखा ने बात काटी, 'वह सही पहचान ? मैं झूठ नहीं बोली हूँ ।

चाहो, मेरा हृदय टटोलकर देख लो। यदि मैं तुमसे सारी बात न कह देती तो पागल हो जाती!' रेखा की पलकें भीग गई थीं।

'कब तक यहाँ रहना पड़ेगा? हम शहर से बड़ी दूर आकर टिक गये हैं। इस रास्ते शायद ही सालों में कभी कोई गाड़ी जाती होगी। 'पेट्रोल' का मिलना भी आसान बात नहीं है। यह सब कुछ सोचकर बड़ी हँसी आती है। तुम यहाँ बैठी रहो। मैं आस-पास किसी गाँव का पता लगा कर, जल्दी ही लौट आऊँगा।'

'यहीं कुछ दिन पड़े रहें, हर्ज क्या है?'

'लेकिन सुबह को सारे शहर में तहलका मच जायगा। मुझे डर लग रहा है।'

'डर?'

'अपने लिए नहीं तुम्हारे लिए!'

'मुझे तो कुछ भय नहीं है। आपका आश्रय पाकर......। नहीं, इस सबके बाद अब मुझे वह जूठा आश्रय नहीं चाहिये। हम जल्दी ही रवाना होते हैं। पेट्रोल के चार भरे हुए टिन हैं। यह सब तो केवल एक बहाना था।'

रेखा ने 'कार' में पेट्रोल भरा और स्टार्ट की! गाड़ी पानी के गड्ढों को चीरती हुई आगे बढ़ गई।

रात को भीग जाने के कारण रेखा बीमार पड़ गई थी। तीन हफ्ते बाद स्वस्थ होकर विश्वविद्यालय पहुँची तो मालूम हुआ कि माधवी और सुबोध शादी के बाद बाहर चले गये हैं।

*

मिस्टर सिंह रेखा के घर से बाहर निकले। लता और रेखा दूर झाड़ियों के बीच दीख पड़ीं! वे रुके नहीं। उनको अपने आज के व्यवहार

के प्रति बहुत दुःख था। हृदय में अज्ञेय पीड़ा फैल रही थी। रेखा के लाज से गुलाबी पड़े चेहरे पर बार-बार लता मुसकराती सी जान पड़ती थी। रेखा का चेहरा तो जर्द पड़ कर मुरझा जाता था। तभी लता की स्वाभाविक सुन्दरता का आभास मिलता। वह जीवन से अपेक्षित और खिली हुई मिली। उस लता ने न जाने क्या सोचा होगा? वह अपने मन में बात गढ़ती होगी कि रेखा अपराधिनी है। इन परिस्थितियों में एक नारी दूसरी को क्षमा नहीं किया करती है और लता के हृदय को चीरकर, वहाँ झाँकना आसान नहीं था। अब रेखा लता के आगे चुपचाप खड़ी थी। रेखा लता को देखकर भयभीत हुई। क्या नारी के लिये पुरुष की यह दासता असह्य है? अन्यथा रेखा असमंजस में पड़कर, उस भाँति बाहर न चली जाती। अब जैसे कि वह पुरुष का डर समझ गई हो। तो क्या रेखा के लिए उनकी यही चाहना है? रेखा कुछ अस्वीकार नहीं करती। दिनेश उस भाँति न छोड़ जाता तो यह समस्या न उठती। अजीब परिस्थितियां आ पड़ीं। वह दिनेश कुछ सुझाकर भाग गया था। वह न जाने रेखा से क्या कह गया था। रेखा अपनी कोई राय नही दिया करती है। वह तो सुनती है। कारण जानना आवश्यक नहीं समझती। दिनेश समझदार है। फिर वह तो उनकी सारी सामर्थ्य अपने साथ ले गया था। एक साधारण बहाना आगे रखकर, दूर भाग गया। उसने उनकी वकालत की थी। रेखा क्या सोचती होगी। हृदय में मलिनता फैलने लगी। वहाँ एक नैतिक द्वन्द्व आरम्भ हुआ। दिनेश का सिद्धान्त! वह अपने दायरे से बाहर नहीं हटता। उसको अपने दायरे की पूरी-पूरी जानकारी है। वह सब बातें परखना जानता है। उसकी बातें पारदर्शी होती हैं, जो कि साफ़-साफ़ दीख पड़ती हैं। उसके दिल में मैल नहीं जमता है।

दिनेश! वे उसे रेखा के घर पर उस तरह बैठा देखकर चकित

हुए थे। उनको यह आशा न थी कि दिनेश वहाँ होगा। ऐसी कोई उम्मेद नहीं थी। और वह वहाँ गया। उसे वहाँ जाना आवश्यक लगा होगा। वह रेखा के समीप एक परिचित की भाँति बैठा हुआ था। रेखा बार-बार मुसकराती थी; लेकिन लता आकर ठिठक गई। बस, अब दिनेश ने रेखा और लता की भावनाओं को कुचल डालने का निश्चय कर लिया है। वह अपनी बातों पर दलील नहीं सुनना चाहता है। वह नारी का 'शारीरिक व्यक्तित्व' मानता है और दूसरा कोई रूप नहीं। वह सदा यही कहेगा। चाहता है कि नारी स्वयं चला करे। वह अधिक परवा नहीं बटोरता। यह प्रश्न कि नारी अपने शरीर के प्रति उदासीन रहे, उसे कदापि स्वीकार नहीं है। फिर मिस्टर सिंह ने सोचा कि यदि रेखा उनकी ही होकर रहे तो यह उचित होगा। उस 'रेखा' के आगे सदा लता चार विराम लगा देती है। एक दिन लता पर रेखा की असमर्थता लागू होगी। लता चाहे कुछ ही सोचे, वह नारी भावुकता से अलग नहीं है आज तो लता रेखा पर उठते हुए सवालों का उत्तर देने में असमर्थ है।

अब वे अपने बंगले के पास पहुँच गये। पत्नी आगे आई। बरसाती संध्या के लाल बादलों को अलग हटा, अपना भार आगे सौंपने को तैयार थी। यह साबित कर कि वह उनकी ही है। वे पत्नी के साथ चार साल व्यतीत कर चुके हैं। पहले उत्साह था, आज उसके प्रति कोई उफ़ान नहीं उठता। अब तो पत्नी एक बच्चे की मां है। वह उनके ऑफिस से लौटने पर खास ख़याल नहीं बरतती। बच्चे के साथ हँसती-खेलती रहेगी। उसी की सजावट का ध्यान रखती है। यह बात पहले नहीं थी। तब वह उनकी सारी व्यवस्था को ठीक तौर पर सँवार लेती थी। आज जैसे कि पति कुछ नहीं है। तो क्या अब रेखा पत्नी का 'प्रतीक' बन गई है ? पत्नी को अपने काम-धन्धों से फुरसत नहीं मिलती। बच्चे की 'स्वीटर' बुनेगी।

एक मिनट खाली नहीं रहेगी। कहेगी—बच्चा बहुत नटखट हो गया है। बच्चा ऐसा है—वैसा! नौकरानियों को बच्चा नहीं सौंपा जाता। उन पर धौंस जतावेगी कि वे पिता हैं। उस बच्चे ने अकारण उनका मूल्य कम कर दिया है।

उस समय रेखा, लता और पत्नी के ऊपर बच्चा था। वे कपड़े उतारते हुए सोचने लगे, यदि रेखा की भूल ही है···। भीतर पहुँचकर देखा, पत्नी बैठी हुई कोई किताब पढ़ रही थी। बोले, "सोई नहीं हो?"

चाहा कि उसको कसकर भुजाओं में भर लें। पर पत्नी ने चुपके मुंह पर हाथ रखकर सुझाया बच्चा सो रहा है।

'बच्चा!' वे अपने भीतर गुनगुनाये। आज पत्नी ने पति को बहुत उदार पाया। और दिनों वाली उदासी नहीं थी। वह चुप रही। कुछ नह ली। अब मिस्टर सिंह को लगा कि पत्नी सुन्दर है। आज तक जो कमी थी, वह हट गई है। वे बड़ी देर तक पत्नी को देखते रहे। फिर सोचा, रेखा अधिकार चाहती है, पत्नी नहीं। पत्नी का नारीत्व बच्चे और पति तक ही सीमित है। उसे कोई अधिक चाहना नहीं। वह इस गृहस्थी से सन्तुष्ट है। रेखा तो है एक पहेली। उसका
भांति रहना उचित है। फिर अनायास लता की उदारता का विश्वास मन में परेशानी फैला जाता है। पत्नी की गृहस्थी, रेखा का सामाजिक अधिकार और लता का अपना व्यक्तित्व—तीनों भिन्न-भिन्न हैं। रेखा नैतिक झगड़ों से बरी रहना चाहती है। वह सहारे की चाह में खड़ी मिलेगी। वह एक कोरी कापी की भांति है, जिस पर नौसिखिया प्रयोग-वाले झगड़े को सुलझाने के लिए ड्राइंग बनाते हैं। वह जीवन को तोल लेने का बाँट ढूँढ़ा करती है। लता अपना व्यवहार तथा मान स्वीकार कर लेती है। अपने परिवार के बाहर किसी झुँझलाहट की संभवतः

आदि नहीं। लेकिन याद आया कि रेखा की आँखों में आँसू थे। आँसू !

नारी आँसुओं में भीगी बहुत दयनीय लगती है। रेखा तो दया की भूखी नहीं है। वह तो स्वयं ही करुणा और दया कीपु तली है। क्या इन आँसुओं में कोई सुख छिपा रहता है ? वे इस बात पर विचार करने लगे।

अब वे पलंग पर लेट गये। नींद नहीं आई। उनके पुरुष हृदय को रेखा के आंसुओं ने ढक लिया था। क्या वह महत्वपूर्ण घटना थी ? कैदियों के आँसू ! उनकी पत्नियों का रुदन ! सबसे सरोकार पड़ा है। फाँसी पाये हुए एक कैदी के आँसुओं की याद उनको आज भी है। वह खुशी-खुशी तख्ती की ओर बढ़ा था। मौत के बाद उसके चेहरे पर हँसी थी; किन्तु आँखों की पलकें भीगीं मिलीं। जैसे कि वे आँसू आखिर पिघल गये। ज़हर पीकर अनन्त निद्रा में सोई एक निराश प्रेमिका की आँखें उनको सूजी मिली थीं और वहाँ भी आँसू थे।

पत्नी अपनी पुस्तक में लवलीन थी। वे बोले, "बारह बज गये हैं।"

"ओ, बारह !"

"हाँ", कहकर वे चुपचाप उठे। पत्नी के पास पहुँच कर एक गाढ़ा आलिंगन ले बोले, "डार्लिंग; आज तुम बहुत सुन्दर लग रही हो।"

"धन्यवाद !"

"यह सच है।"

पत्नी मुसकराकर उठी। किताब मेज पर रख दी। बत्ती बुझाकर लेट गई। ऊँघने लगी। अब सो गई थी। उस घने अन्धकार में पत्नी की गहरी-गहरी साँस चालू थी। पत्नी के बालों से उनकी उँगलियाँ उलझ गईं। शरीर के अंगों को छूने से गुदगुदी उठी। बड़ी देर के बाद निर्णय कर पाया कि पत्नी, रेखा, लता आदि केवल नाम हैं। सब

'नारी' हैं। बस, पत्नी को अपने निकट कर लिया। सोचा, लता का शरीर भी वैसा ही होगा। नारी पुरुष के लिए इसी रूप में उपयोगी है। नारी की इस सामाजिक तथा दैनिक दासता पर हँसी आई। पत्नी तो रेखा लगी, जैसे नववधू के रूप में आई हो। पत्नी आखिर कुन-मुनाकर आँखें मलती हुई बोली, "सोये नहीं हो?"

"क्या?"

"मुझे तो नींद आ गई। कहाँ रहे आज?"

"रेखा के घर।"

"वह हमारे यहां कब आवेगी?"

"किसी भी दिन आ जायगी। इधर वह काम में व्यस्त रही है।"

मिस्टर सिंह झूठ बोले थे। रेखा जान-बूझ कर नहीं आती है। वह बहाने बनाती है। पहले आया करती थी। आज उसे भय लगता है।

"सो गये?"

"नही तो।"

बच्चा उठा और रोने लगा। पत्नी उसे सुलाने लगी। मिस्टर सिंह उलझन में सोचते ही रह गये कि रेखा? उनके पास इस सवाल का कोई उत्तर नहीं है।

दिनेश सदा से सतर्क रहा है। उसके मन में साधारण घटनाओं के प्रति, कभी स्वीकार कर लेने की भावना नहीं उठी। न उसे जीवन में मुड़कर देख लेने की आदत है। होटल पहुँच कर जब उसे महेश नहीं मिला, तो वह चिंतित हुआ। मिस्टर सिंह और रेखा की बात भूल गया। फिर सोचा कि महेश नहीं आया तो न सही, वहीं

वहाँ स्वयं जायगा। बस, बाहर निकला। चुपचाप कई सड़कें पैदल पार कीं। गलियों से गुजरा। म्युनिसिपैलिटी के टिमटिमाते हुए लैम्पों के धुँधले प्रकाश में मकानों पर पड़े नम्बरों को पढ़ने की व्यर्थ ही चेष्टा की। आखिर थक गया। असफल रहा। कभी-कभी चौकीदारों की ऊँची आवाजों का भारी स्वर उसके कानों में पड़ता था। गली के बीच कुत्तों का भूकना सुनाई पड़ता था। वह महेश का मकान नहीं पा सका। सारी चेष्टा गलत साबित हुई। अन्त में होटल लौट जाने का निश्चय किया। आधी रात बीत चुकी थी। गली और सड़कें सूनी थीं। कभी-कभी वह भैंसागाड़ी की चूँ-चूँ-चूँ सुनता। देखता, गाड़ी को भैंसा चुपचाप खींचे हुए ले जा रहा है। उसे इस बात का ज्ञान नहीं है कि उसका चलानेवाला ऊँघ रहा है। अब उसने कई रास्ते छान डाले। होटलवाली सड़क नहीं मिली। उसे भारी नींद आ रही थी। सारा शरीर थक चुका था। वह चुपचाप सामने के बाग़ में घुस गया और पेड़ के नीचे पड़ी बेंच पर लेट गया। कुछ देर तक बहुत-सी बातें अजगर की तरह उसके मस्तिष्क में रेंगती रहीं। फिर चुपचाप सो गया।

बड़ी सुबह किसी ने जगाया। दिनेश ने आंखें खोलकर देखा, वह लता थी। लता बोली, "क्या आप कल रात भर यहीं सोये रहे?"

दिनेश ने सच बात कह दी। लता ने सोचा, इस पक्के दार्शनिक को रेखा जीजी पाल रही है। अपने अपनपा को छिपाकर बोली, "उठिए, मैं तो असमंजस में पड़ गई थी कि बात क्या है? इस तरह कम्पनीबाग़ में रात काटना आसान काम नहीं है।"

दिनेश के दिल पर हरियाली छा गई। याद आया कि यहीं तो कहीं चम्पा का पेड़ है, जिसका जिक्र मिस्टर सिंह करते हैं। लता अवाक् दिनेश को देख रही थी। दिनेश परिस्थिति समझकर बोला, "आपका बँगला......?"

"वह तीसरा है।" लता ने बात काटी।

दिनेश ने खूब आँखें मलीं और लता के साथ हो लिया। कुछ दूर जाकर बोला, "धन्यवाद। अब मुझे रास्ता ढूँढ़ लेने में कोई कठिनाई नहीं होगी।"

"मुझे जीजी के यहाँ जाना है। रास्ते में आप अपने होटल में उतर जाइएगा।

"आपको बेकार कष्ट होगा।"

"नहीं, मेरा तो वही रास्ता है।"

अब दिनेश के पास कोई तर्क न था। मन में झुँझलाहट उठी, पर कुछ नहीं बोला। फिर अपने छुटकारे का प्रश्न उठाकर कहा, "कभी जरूर आऊँगा। आज आप क्षमा करें।"

"ऐसी कोई बात नहीं है। चाय पीकर चले जाइएगा।"

वे बँगले के भीतर पहुँच गये थे। अब दिनेश ड्राइंग रूम में चुपचाप सोफा पर बैठ गया। उसने एक बार सावधानी से सजे हुए कमरे की ओर देखा। लता भीतर चली गई थी। दिनेश की आंखों में नींद थी। कुछ देर के बाद लता लौटकर आई, तो देखा कि वह सो रहा है। वह मन ही मन हँसी और सोचा कि दिनेश बहुत समझदार है, पर व्यवहार-शून्य। सावधान है, नहीं तो इस दुनिया में ठगा जाता। अपनी किसी हैसियत की न उसे कोई चाहना है, न परवा। उसका सारा चेहरा थका तथा सुस्त लगता था। वह उठी और पंखा खोल दिया। एकाएक दिनेश ने आंखें खोलीं। लता बोली, "हाथ-मुंह धो लो।"

दिनेश ने भारी जँभाई लेते हुए कहा, "हमेशा ही आठ-नौ बजे उठने की आदत है। आज तो नींद पूरी नहीं हुई।"

लेता ने इस बात की अवहेलना कर कहा, "नहाइए तो साड़ी रक्खी है। मोटी खादी की धोती ढूँढ़े नहीं मिली।"

लता कहने को कह गई। क्या यह कहना उचित था? वह क्यों ऐसी बातें कह देती है। एक व्यक्ति, जो कहीं भी बसेरा लेकर चैन से रह सकता है, उससे यह क्या कह दिया? लेकिन दिनेश ने जवाब दिया, "भाग्य में साड़ी पहननी नहीं लिखी हुई थी। माँ की बड़ी हवस थी कि मैं लड़की हूँ। उनके कोई लड़की न थी। बात कहाँ निभी। आपको धन्यवाद!"

लता मुरझा गई। सब सुनकर बोली, "आपकी बातें तो..."

"बात सच है।" कहकर दिनेश 'बाथ-रूम' की ओर बढ़ गया। कुछ देर के बाद लौटकर आराम-कुर्सी पर बैठ गया। उसने देखा कि लता आ रही है। काले-काले कमर तक फैले हुए लम्बे भीगे बाल, सुन्दर नीला ब्लाउज और ऊपर गुलाबी साड़ी। बाहरी टीमटाम न थी। भीतरी रूप मन को मोह लेता था। वह बालों को सँवारती हुई बोली "आज तो मीटिंग है।"

दिनेश उस लता को देखता-देखता ही रहा गया। वह उसके प्रति क्या सोचता? नौकर चाय का सामान लाया। लता चाय उड़ेलती हुई बोली, "आप उस दिन की बात भुला दें। मैं उसके लिए..."

"आप उन छोटी-छोटी घटनाओं पर व्यर्थ सोचा करती हैं। आज का इन्सान बहुत व्यस्त रहता है। इसलिए उसके जीवन में जरा-जरा सी बातें रुकावट नहीं डालतीं। हम सब लोग एक नई सभ्यता की ओर बढ़ रहे हैं। यह समाज और उसमें चालू राजनीति के साथ हम प्रति दिवस खेल खेला करते हैं। उसके बाद आता है हमारा निराशा-वाद। आज जिसको कुचलता हुआ जमाना आगे बढ़ रहा है। इस झमेले से कोई बरी नहीं है। पूँजीवादी ढांचे ने आर्थिक दासता को

उपयोगी सिद्ध किया है। वह उपयोग अपयोग बन गया। उसकी नींव खोखली थी, ढाँचा सड़ गया है। कब कोई अनहोनी बात ला दे, यह कोई नहीं जानता है।

लता सुन रही थी। चुपचाप सुनती रही। चाय का प्याला अध-भरा ही रह गया। उसने केतली मेज पर रख दी। एक धुँधली भाप ऊपर उठी। वह जैसे मलिन हँसी हँसी हो। दिनेश इसी वातावरण में कहता रहा, "हम सब बौद्धिक-संन्यासी हैं। कहलाते हैं बुद्धिवादी ? यह दरज़ा बिना किसी भेद-भाव के सब समझदार व्यक्तियों के लिए खुला हुआ है। उनका विश्वास भर चाहिए। व्यक्ति अस्वस्थ है और सुन्दर भावनाओं को नष्ट करके उनको कुरूप बनाने को तुल जाते हैं। इसे हम आधुनिक सभ्यता का स्वरूप बनाने का ढोंग कह सकते हैं।"

लता को याद आया कि जब वह बच्ची थी, उसे छोटे-छोटे खिलौनों के टूट जाने पर कितना दुःख होता था। फिर यह जीवन की सुन्दर भावनाओं को नष्ट करने वाली बात ? वह कुछ न समझ; सँभलकर बोली "एक चम्मच चीनी या......"

"डेढ़......"

लता ने डेढ़ चम्मच चीनी डाली। दिनेश प्याला हाथ में लेकर चुपचाप चम्मच चलाने लगा। कुछ देर बाद प्याला मुँह से लगा लिया। लता ने बिस्कुट की तश्तरी आगे सरकाई। दिनेश ने एक उठाकर, दांतों के तले दबाया। लता चुपचाप चाय पी रही थी। इसके लिये दिनेश ने कोई अनुरोध नहीं किया था। वह उसकी आज्ञा की बाट न जोह, चाय बनाकर पी रही थी।

इस बीच लता का छोटा भाई दौड़ा-दौड़ा कमरे में आकर बोला, "रेखा जीजी आई हैं।"

दिनेश को देखकर ठिठक गया। रेखा कमरे के भीतर आई।

चुपचाप कुरसी पर बैठ गई। अब बोली, "आप यहां हैं। रास्ते में आप के होटल की इमारत देखकर मैंने आपको पुछवाया था। सुना, आप रात भर वहां नहीं थे। यह तो ईर्षा की बात है।"

दिनेश चुप रहा, पर लता ने उबारा, "जीजी, तुम सच बात कह रही हो। सुबह घूमते हुए कम्पनीबाग पहुँची तो देखा कि हजरत बेंच पर सो रहे हैं। आश्चर्य हुआ। रात भर दोस्त का मकान ढूँढ़ने में परेशान हुए, उस मेहनत के लिए आख़िर सोने को मिली बेंच।"

दिनेश ने बारी-बारी से रेखा और लता की ओर देखा। कहना आरम्भ किया, "हर एक इन्सान को अपनी बुद्धि पर भरोसा है। मुझे भी है। यह विश्वास था कि मैं महेश का घर ढूँढ़ लूंगा। उस तरह मेरा भटकना उचित ही हुआ। कारण कि मैं इसका आदी हूँ। मैं तो इन घटनाओं से बल पाता हूँ। भले लोग तो पैदा हो, यतीमखाने में पलकर, आखिर कहीं सरकारी अस्पताल में मरते हैं। उनको जीवन की माया-ममता, प्यार आदि से सरोकार नहीं रहता है। और दुनिया में टंटा-बखेड़ा जोड़कर कोई लाभ नहीं होता है।"

"आप तो साधारण बातों पर दलील कर लेते हैं।" रेखा ने कहा, और लता पर एक भेद-भरी निगाह डाली। फिर प्याले में चाय उड़ेल कर पीने लगी। दो-चार घूँट पीकर बोली, "हूँ भाग्यवान्! ऐसी चाय हर वक्त थोड़े ही मिलती है।"

दिनेश प्याला ख़ाली कर उठना चाहता था कि लता ने टोका, "जल्दी क्या है? ठीक तरह चाय पी लीजिए। मैं जीजी के साथ चली जाऊँगी। आपको हमारी 'कार' होटल छोड़ देगी।"

लता ने छोटे भाई से शोफर बुलवाकर ठीक आदेश दे दिया और खुद उठकर आलमारी से सिगरेट का टिन ले आई।

दिनेश न समझ सका कि लता कैसे उसकी जरूरत पहचान गई है।

उसे सिगरेट चाहिए थी, वह मिल गई। उसने सिगरेट सुलगाई। लता चाय उँड़ेलने लगी।

चाय का प्याला मुँह से हटाकर रेखा बोली, "आप पर से मीटिंग में जाने का प्रतिबन्ध हट सकता है, बशर्ते कि आप......"

"यही आपका विश्वास है न ?" दिनेश ने रेखा की आंखों में अपनी पैनी दृष्टि डुबोते हुए कहा। रेखा अपने भीतर कांप उठी। क्या उस पुरुष-दृष्टि का उसके 'सेक्स' के प्रति कोई चैलेंज था। जिसे सुझाकर पुरुष नारी को जीत लेता है।

लता सरलता से बोली, "आपने नमकीन तो छुआ ही नहीं। शायद कम भाता होगा ?"

इस बात को ठुकराकर दिनेश रेखा से बोला, "आपके सुझाव के लिए धन्यवाद। मिस्टर सिंह आपसे मिलें तो उनसे कह दीजिएगा कि कल मैं देहात जा रहा हूँ।"

रेखा उलझ गई। लता ने असमंजस में कहा, "देहात!" और दिनेश की ओर देखने लगी।

"कल-परसों की छुट्टी है। शहर में रहते हुए वहाँ के वातावरण से ऊब-सा गई हूँ। यहाँ का जीवन मुझे अच्छा नहीं लगता। खुले खेतों को देखने के लिए भूखा मन लालायित हो उठा है।"

लता की मा आई थी। दिनेश चुप हुआ। वह रेखा से बोली, "शीला हिसाब में बहुत कमज़ोर है। कोई अच्छी मास्टरनी चाहिए।"

"क्या लता नहीं पढ़ाती ?"

"उसे तो अब अख़बार पढ़ना आ गया है। घर की कोई परवा नहीं।" कह, दिनेश को देख अचकचाकर चुप हो गई।

रेखा ने परिचय दिया, "मिस्टर सिंह के साथी हैं मिस्टर दिनेश-चन्द्रजी। यहीं वकालत करेंगे। मैं कल मास्टरनी ठीक कर दूँगी।"

लता की मा चली गई। अब लता ने रेखा से कहा, "आपकी भी छुट्टी होगी जीजी! हम सब लोग देहात न चली चलें। ख़ासा 'पिक-निक' रहेगा।"

"मुझे एक देहाती मदरसे का मुआयना करना है। तू चाहे चली चलना।"

"और 'पिकनिक'?"

दिनेश ने रेखा के हृदय की बात सुलझाई, "फिर सही। वैसे आप लोग जब चाहे तय कर लें। मैं मिस्टर सिंह से कह दूँगा। खुद मेरा शरीक होना सम्भव नहीं है।"

"आपको भय क्यों लगता है?" लता ने दिनेश की ओर देखा और उसकी आँखों में अपना अपनापा पोंछ डाला। फिर कहा, "क्या आप इस तरह भागने की चेष्टा करने पर भाग सकेंगे? आपको इसी दुनिया में रहना है। हम बिराने ही सही, कोई तो आपको अपना बनाना पड़ेगा। उसके आपसी व्यवहार तथा झगड़ों में शामिल होना पड़ेगा। तब आपका इस तरह का दावा निरर्थक होगा। सब मान्य को स्वीकार करते हैं।"

इस चेतावनी से दिनेश अप्रतिभ नहीं हुआ। वह लता के व्यक्तित्व को पहले ही दिन पहचान चुका है। अपना सादा तर्क आगे लाया, "हर एक व्यक्ति अपनी असमर्थता की जानकारी रखता है। जीवन में कुछ झगड़े महत्वपूर्ण होते हैं। फिर भी उनका आडम्बर नहीं सहा जाता है। दिमाग तो झगड़े की जड़ों को बल देता है। कुछ रोग बन जाते हैं, तो कुछ जीवन में दवा का काम करते हैं। सुना जाता है कि क्षय के रोगी को जिन 'सिरमस्' का इंजेक्शन दिया जाता है, वह उस रोग के कीटाणुओं से ही बनता है। एक है रोग और दूसरे को हम

औषधि कहते हैं। व्यक्ति की अस्वस्थता स्वास्थ्य के लिए कभी-कभी हितकर सिद्ध हुई है। उस पर विचार करना अहित ही होगा।"

यह सब सुनकर लता झुंझलाकर बोली, "आप न आइएगा, न सही।" रेखा से कहा, "जीजी, हमारा भी अपना अधिकार है।"

अनजाने लता और दिनेश की चार आँखें हुईं। क्या वह दिनेश से समझौता करना चाहती थी? दिनेश अपने मन में सिकुड़ता जा रहा था। उसमें उपेक्षा को सह लेनेवाली क्षमता नहीं थी। वह उस बन्धन को नहीं मानता, जिसे यह कहकर सौंपा जाता है कि अपेक्षित है। लता भीख देने में उदार लगी। पर वह इसका आदी नहीं था। उसे नियति की धारणाओं तथा प्रकृति से पाई भावनाओं से लता सुन्दर लगी। उसमें फिर भी रेखा से अधिक असाधारण सुन्दरता नहीं थी, जो कभी-कभी रेखा में दीख पड़ती है। रेखा को रोज देखनेवाली आँखें ही पहचान सकती हैं। लता तो कुछ और लगी। लता का अपने पर वश नहीं। उसका मुक़ाबला करना व्यर्थ होगा। वह परिवार में रहती है। रेखा का अपना नारीत्व है। वह स्वतंत्र है। दिनेश नारी से दूर रहना चाहता है। तो क्या वह ठूँठ है? यही दावा सही होगा। फिर यह 'अहम्' नहीं है। वह इस आदर को पाकर क्यों निचुड़ जाता है। उसने यह कभी स्वीकार नहीं किया कि प्रेम देना है और उसे पाना तो एक रोग है। बचपन में उसने अपने पड़ोस की एक लड़की को बहुत प्यार किया था। वह लड़की एक दिन चेचक की बीमारी से मर गई। उसने कब्रिस्तान में सुन्दर कब्रों को देखते हुए, एक दिन उस लड़की की मखौल सुनी। अवाक् रहकर उसने सोचा कि यही 'मौत' है। इसी लिए आज वह स्थिरता का ज्ञान पाकर दुनिया में किसी के प्रति मोह नहीं बरसता है। आज उसका प्रेम एक शारीरिक नाता है, जिसके बाद एक दिन लड़की मिट्टी, घड़े के टुकड़े, कोयला,

हरी मिर्च आदि चबाती है। जैसे कि एक अपराधिनी की तरह वह नया स्वाद लेने को बाध्य हुई हो। अन्त में अपनी ख्वाहिश की पूर्ति के लिये वह मन में फूली नहीं समाती। यही तो नारी की भूख नहीं है।

आधुनिक नारी का पहला प्रेम ऐसा ही होना चाहिए। लेकिन वह एक नशा होता है, जहाँ पहले मातृत्व की भावना नहीं होती। वह अपने प्रेमी से केवल बावला बना देनेवाला नशा पाना चाहती है। एक दिन वह प्रेमी हट जाता है। वह फिर भी उससे प्रेम की आशा रखती है। एक दिन वह प्रेम 'फ्रूटसाल्ट' सा रह जाता है, जिसके द्वारा कभी-कभी मन की सफाई की जा सकती है। यह प्रेम यदि प्रतिदिन व्यवहार में लाने वाले 'साल्ट' (क्षार) की तरह होता, तो बुद्धिवादी गुर्दे की बीमारी से बच सकते हैं। उनको 'मन को भ्रम' में डालनेवाला रोग नहीं होगा। उन साल्टों से उठते हुए 'बुलबुलों' का वह सम्बन्ध नहीं है, जो प्रेम का जीवन से है। नारी देती है, देती है—अपने पहले प्रेमी को अपना सर्वस्व अर्पण कर देती है। आगे उसका जीवन बदल जाता है। एक दिन वह पहला प्रेम अस्वस्थ लगता है। वह कोई ठीक बात नहीं समझ पाती। कुछ ठीक-सा नहीं सोच सकती। अवस्था बढ़ने के साथ धीरे-धीरे भावुकता घटती है। बच्चे होने के बाद तो भावुकता बिलकुल बुझ जाती है। आगे एक दिन नाती-पोते से घिर जाने पर, अपने सफेद बाल और झुर्रियाँ पड़े चेहरे को देखकर अतीत का वह रोमांस अक्सर याद हो आता है। वह एक सन्तुष्टता पाकर, चैन से मर सकती है। इस सारे व्यापार को ढक लेने के लिए ही समाज का निर्माण हुआ और गृहस्थी वाले कानून बनाये गये। आज के समझदार नारी-पुरुष इस व्यवस्था के विरुद्ध बगावत करना चाहते हैं। वे गृहस्थ-जीवन को एक वैज्ञानिक पद्धति तक ही स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में नारी-पुरुष का नाता—जाति को भविष्य के लिए फूलाना-फलाना ही

है। चाहे वह पति पाकर हो, अथवा प्रेमी। पति एक सामाजिक समझौता है; प्रेमी एक वैज्ञानिक समझौता। इसी लिए नारी अपने पहले प्रेमी से अधिक अपने आखिरी प्रेमी की शुक्रगुजार होती है। वह शारीरिक प्रेम हर एक हालत में दिमागी प्रेम से अधिक स्वस्थ होता है। यदि उसमें निरी पशुता होती तो वह इतना रंगीन न रह जाता। आज लोग उसे एक वैज्ञानिक केलि-क्रीड़ा कह देते हैं। तब विवाह एक नैतिक बन्धन नहीं रह जाता। विवाह नीम की तरह कड़वा लगने पर भी कोढ़ की तरह बुरा रोग नहीं है।

इस 'सेक्स' को पाने के लिए इन्सान लड़ता नहीं है। फिर भी सुन्दर नारी के आगे वस्तुवाद ढीला पड़ पड़ जाता है। प्रेमिका की बांहें बहुत प्यारी लगती हैं। वे दिल की परेशानी को सहला लेने की शक्ति रखती हैं—पत्नी नहीं। इस पहलू के कई रंगीन चित्र हैं। साधारण मध्यवर्गीय घराने की नारी पहले बच्चे के बाद परेशान हो जाती है। वह पति से शारीरिक व्यक्तित्व पाकर मा जरूर बन जाती है, जो कि सुखद नहीं लगता। वह अड़ोस-पड़ोस की रमणियों को देखती है। उनके बच्चों के लिए नौकरानियाँ हैं। उसका बच्चा तो दिन भर उसे दिक किया करता है। रोता रहेगा। जरा-भी चैन नहीं लेने देता। मा झुँझलाहट में सोचती है, पति अच्छे हैं। बच्चे के बाप बन गये। हैसियत कुछ भी नहीं है। एक नौकरानी रखने तक की सामर्थ्य नहीं। तब क्या सारा दोष पति का ही है। क्या पत्नी यह नहीं चाहती थी? क्या बार-बार उसने पति को नहीं उकसाया था? एक बार बच्चे का मधुर स्वप्न देखकर वह खुश हुई थी। अब सब बातों के लिए पति कसूरवार ठहराया जाता है। वह चुपचाप सब कुछ सह लेता है। पत्नी अपनी सहेलियों को इस विपत्ति का पूरा हाल सुनाती है। वे उस बेचारी के साथ सहानुभूति प्रकट करती हैं। चाहती हैं, किसी अँगरेज़ी दूकान से सन्तति-निग्रह की

गोलियां लाकर दे दें। फिर वह सावधानी से चलती है। पति के आगे कोई मनाही नहीं है। अपना शारीरिक सुख पत्नी के लिए अपेक्षित है। अपनी सहेली की सुझाई हुई हिदायत को भूलकर एक दिन अपने को पति के चंगुल में फँसी हुई पाती है।

नारी की इस हालत के लिए उसे कितना कोसा जाय। यह लता और रेखा वही हैं। दिनेश भली भांति जानता है कि इनको वही सारा सबक़ पढ़ना पड़ेगा। आज ये अपना कितना ही ऊपरी हाथ समझें, यह होनहार तो होगा ही। इसी भांति नारी-पुरुष का कारोबार चला करता है। उस पर अधिक विचार करना व्यर्थ है। सब कुछ सही और सच है।

दिनेश अपनी विचारधारा में बह रहा था। अब सब लोग कमरे से बाहर चले आये। दिनेश लता से बोला, "मैं घूमता हुआ पैदल ही चला जाऊँगा।"

वह दोनों को नमस्ते करके, आगे बढ़ गया। लता स्तब्ध खड़ी रही। फिर उसने सोचा, क्या पुरुष इसी तरह धमकी दिया करते हैं? अन्यथा वह दिन प्रति-दिन अपने भीतरी हृदय को इतना ठंडा न बनाता। क्या वहां कोई पीड़ा नहीं होती है? या वहां कोई ऐसी पिछली यादगार है, जिसमें उसने धोखा खाया है। लेकिन दिनेश चला गया था। सारी बातें एक समस्या-सी लगीं।

लता रेखा से बोली, "जीजी, आदमी सभ्य क्यों नहीं होते? उनको तो व्यवहार-कुशल होना चाहिए। यह दिनेश का कैसा बर्ताव था?"

रेखा उलझन में नहीं थी। वह उस दिनेश को भली भांति पहचान गई है। वह उसके व्यवहार से सन्तुष्ट है। उसके हृदय में ख़ाली जगह नहीं थी, जहां वह दिनेश को आश्रय दे सकती। घड़ी देखकर बोली, "टाइम हो गया है।"

कार सड़क पर बढ़ रही थी। दिनेश को देखकर लता ने हार्न बजाया। दिनेश ने उस समझदार चलानेवाले की ओर मुड़कर देखा। लता पर आंखें गड़ीं। कार चली गई। फिर उसने सोचा, क्या लता इतनी सुन्दर है? सुबह वह उस लता का भीतरी मन पढ़ चुका है। वह बिलकुल कोरी थी!

अब लता बोली, "जीजी, मैं समझी थी कि तुम कार रोकोगी।"

"फिर वही बात।" रेखा हँसी। कहा, "क्या यह बेकार न होता? वह तौहीन करे और हम ख़ुशामद। हमने उसे बार-बार परेशान करने का ठेका नहीं लिया है।"

"जीजी!"

रेखा ने लता की आंखों में भय पाया।

"मुझे उनसे डर लगता है।"

"क्या?"

"उनकी आंखें ख़ूनी की तरह पैनी हैं।"

"ख़ूनी की तरह!"

"हां जीजी!"

रेखा ने देखा, लता का चेहरा सफ़ेद पड़ गया है।

लता मीटिंग में बैठी हुई सोच रही थी कि क्या धारणा इतनी जल्दी बदल जाती है। रेखा के घर ज्ञेय हिचक के साथ एक व्यक्ति से पहचान हुई। आज उसने जिस दिनेश को देखा, वह भिन्न है— अपने में बहुत सावधान! अपनी बातें किसी को सुनाने अथवा समझाने का क़ायल नहीं है। वह क्यों लता को इस तरह अपने बुनें हुए जाल के भीतर जकड़ना चाहता है। क्या उसका कुछ मतलब है? चुपचाप

निर्जीव रहकर कुछ कहेगा, जैसे बात किसी को पकड़ने के लिए की गई हो। लता एक आदर्श पर अटकी। जैसे कि वह अपना घमंड और आदर नहीं बिसारेगी। लता का भीतरी मन कमज़ोर पड़ गया। वह डर गई कि न जाने कब चटक जाय। उसने दिनेश की भेद भरी दृष्टि पाई। वह क्या समझाना चाहता था? क्या अब वह लौटकर नहीं आवेगा? यथार्थ में जीवन कितना कठोर है। वह कथाओं के वातावरण की भांति रंगीन नहीं मिलता। उनकी घटनाएँ जीवन पर लागू नहीं होतीं। उसके मन का झगड़ा आगे फैला। वह अपने को न समझा सकी। वे सब घटनाएँ.........! लता उन बिखरी घटनाओं को बटोर रही थी।

लता कालेज में सुन्दरियों में गिनी जाती थी। अपने गिरोह में सबसे खिली हुई थी। युवकों को उसकी सुन्दरता का अभिमान था। वह युवकों के हृदय में गति प्रदान करती थी। उसके उपासकों की संख्या बढ़ती गई। उसे कुछ डर नहीं लगा। वह सारी बातों को सुनकर हँस देती थी। अपने से बाहर बात फैलानी अनुचित लगती थी। इस पागलपन के आदान के प्रति उसे चुप रहना हितकर लगा। फिर भी कुछ बातें असह्य होतीं। वह भूखी आंखोंवाले युवकों की भीड़ उससे क्या चाहती थीं? वह असभ्य मान! फिर उनकी बातें बहुत बुरी लगतीं। वे बेतुका मज़ाक़ करते थे। उनको किस तरह समझाया जाता कि वह उनका अनुचित व्यवहार था। कारण कि सबको अपना उत्तरदायित्व प्यार लगता है।

फिर हर एक बात की एक तोल होती है। उसे असाधारण रूप देना अनुचित होगा। एक साहब अपने को न-जाने क्या समझते थे। प्रतिदिन एक चिट्ठी भेजना उनका नियम था और उसमें उत्तर देने के लिए प्रार्थना होती। वह गैलरी में जाती तो वह वहां पहले से ही खड़ा

मिलता। उसके प्रति झुँझलाहट उठती थी। वह तो लाइब्रेरी और रीडिंगरूम में भी पीछा करता। वह असभ्य तथा व्यवहारशून्य लगता था। उसकी सारी बातें विवेकहीन थीं।

एक दिन वह लाइब्रेरी में एक आलमारी से किताब निकाल रही थी। तभी कोई बोला, 'लताजी!'

उसने अचरज से पीछे मुड़कर देखा और ग़ुस्से में बोली, 'आप क्या चाहते हैं?'

'मेरी चिट्ठियों......!'

'मैं उनका उत्तर देने में असमर्थ हूँ।'

'लेकिन मेरे जीवन की साधना के......!'

'आप 'आत्महत्या' कर सकते हैं।'

'लता!'

लता को बहुत ग़ुस्सा चढ़ा। भला लाइब्रेरी में आलमारियों की आड़ के पीछे यह कैसी याचना थी। उसका चेहरा लाल पड़ गया।

'लता रानी......!' कहकर उसने लता के हाथ से किताब ले ली। कहता ही रहा, 'क्या आपको मुझ पर विश्वास नहीं। क्या आप वादा नहीं कर सकतीं कि......!'

लता चुपचाप वहां से हट गई। वह उसे ठीक-सा सबक सिखलाने का निश्चय करके आगे बढ़ी। वाइसचांसलर को सारी बातें सुना दीं। वह अपने अपमान का बदला चुकाना चाहती थी। उसका नारी-अभिमान उभर चुका था।

वह लड़का कॉलेज से निकाल दिया गया था। वह कॉलेज में ऐसी पहली ही घटना हुई थी। 'अर्थशास्त्र' के दरजे में उसने एक नवीन वातावरण का अनुभव किया। प्रोफेसर बोले थे, 'कभी-

कभी व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की परवा नहीं करते। और वह एक साधारण घटना की कच्ची चोट खाकर भविष्य के लिए मिट जाता है। मुझे उस युवक से पूरी आशा थी कि वह सफल नागरिक बनेगा; लेकिन जीवन पर लागू होनेवाली सब धारणाएँ सही नहीं निकलतीं। सस्ती भावुकता सदा इन्सान में रहेगी। भले ही उससे कभी रुकावट पड़ जाती है।'

लता ने सुना। तो क्या वह उसका ठीक न्याय नहीं था? मन में प्रश्न उठा। जीवन के व्यक्तिगत अधिकार से ऊपर तो है समाज। समाज को क्यों धोखा दिया जाय कि हमें हमारी सस्ती भावुकता के लिए क्षमा कर दो। यह युवक की भूल थी—भूल!

एक दिन उसने सुना कि उस लड़के ने आत्महत्या कर ली है। तो क्या उसके सारे भाविष्य को इसी भाँति मिट जाना लिखा था? अब तो सहेलियाँ चुटकी लेतीं। सचमुच ही लता का मूल्य बढ़ गया था। वह चुप रहती थी। सोचती कि वह क्यों क्षणिक आवेश में मर गया। वह भावुकता ग़लत थी। ऐसे अर्थहीन उदाहरणों को महत्व नहीं दिया जाना चाहिए। बहुत समझाने पर भी मन की उलझन नहीं मिटती थी। मौत और उसका वास्तविक रूप पीड़ा पहुँचाता था। वह जीवन का चार विराम—मौत! मौत की व्याख्या बहुत दुःखद लगती थी। उस उपेक्षित ने आखिर मौत का सहारा लिया था। क्या वह आश्रय उचित होगा? पुरुष यह कैसे खेल खेलता है? वह खेल धमकी नहीं रह गया। लता का मन अशान्त हो आया। रात को उसे नींद नहीं आई। जरा आँख लगी थी कि उसने स्वप्न देखा—सुन्दर-सुन्दर कपड़े पहने हुए कई युवकों की कतार खड़ी थी। वे सब उसकी ओर उँगली दिखा रहे थे। सब मुस्करा रहे थे। वे सब कानाफूसी कर रहे थे। लता को भारी डर लगा। उसकी नींद उचट गई। वह फिर सो न सकी थी।

बड़े तड़के उसकी नींद टूटी। वह रेखा के पास पहुँची थी। रेखा से

उसने सारी बातें कहीं। लेकिन रेखा तो कुछ महीने पहले ही प्रेम का आधार खो चुकी थी। वह प्रेम की परवशता में सदा पुरुष की 'कुरूपता' देखा करती थी। लता वाली घटना से वह अधिक विचलित नहीं हुई। ज्वार चूक चुका था। भाटा उतर आया था। कभी अज्ञेय ख़याल आता कि पुरुष मर सकते हैं और वह, जो कि नारी है, विवश है, असहाय है? वह कैसे जीवित है? क्या वह मरना नहीं जानती? जीकर तो आजीवन कुढ़ती रहेगी। यह मौतवाली नजीर?......

वह लता को क्या समझातीं? वह सब बात कह देने की तीव्र लालसा को पी गई। बहुत सी इधर-उधर की बातें करके चुप हो गई। दोनों अपना-अपना समझौता करना चाहती थीं। दोनों ही असहाय और लाचार थीं। दोनों प्राण पाना चाहती थीं।

भविष्य में यह घटना धुँधली पड़ गई। अब याद बन गई थी। हृदय में कभी मलिनता उठती। वह उस तसवीर को मिटा डालती थी। जीवन एक अज्ञात समय की ओर तीव्र गति से बढ़ने लग गया था।

लता मीटिंग से लौटकर घर आई। अब वह बहुत संतुष्ट लगी। जैसे कि उसके जीवन में कहीं मैल न था। फिर अनायास दिनेश आगे खड़ा हो जाता था। जैसे वह उसकी भावना बन गया हो। लता ने सोचा, दिनेश क्या है? रेखा उसकी व्याख्या क्यों नहीं करती? क्या वह अभी तक उसे पहचान नहीं सकी है? घर पहुँचने पर उसे एक चिट्ठी मिली। सुना, होटल का नौकर दे गया है। उसने खोली। दिनेश का पत्र था। उलझन में पढ़ा :—

'मुझे अपनत्व के किसी सम्बोधन की भूख नहीं है। मेरा अनु-

मान है कि आप मेरी बहस पर तर्क करना चाहकर चुप रहा करती हैं। मैं आपको गलत लगता हूँ। यदि यह बात सही है, तो मिस्टर सिंह ने एक गलत बुनियाद डाली है कि आप लोगों से परिचय कराया। मैं इसे अपना सौभाग्य नहीं मानता। वैसे मुझे मिस्टर सिंह की बातें मान्य होती हैं। मैं किसी व्यवहार तथा बरताव के लिए हिसाब रखना उचित नहीं समझता हूँ। आप न जाने क्यों मेरी इस व्याख्या को बुरा मानती हैं। इसके प्रति राय न देना ही उचित है। हर व्यक्ति अपने पर सही-सही सोचना चाहता है। मैं अपने पर आसानी से असर डाल, समझौता करने के लिए तैयार मिलूंगा। वैसे अपनी भावुकता को समझना कठिन बात है। यह सरल काम नहीं। इसी लिए कभी-कभी अपनी उलझनों के प्रति उदासीन रहना स्वयं कर्तव्य लगता है। इसके बाद व्यक्ति में सुलझन की चाह आती है। लेकिन मेरे पास अपने मन के अनुकूल ठीक सा हथियार नहीं है, जिससे अपने जीवन की छानबीन कर सकूँ। वैसे अपने को किसी खास व्यक्तित्व के लिए गढ़ रहा हूँ।

कुछ घंटों की साधारण जान-पहचान के नाते, आप लोगों के आदर के आगे झुक जाता हूँ। उस आदर से बाहर व्यक्ति की अपनी स्वतन्त्र भावनाएँ होती हैं। हम बुद्धिवादी लोग व्यर्थ परेशानी मोल ले लिया करते हैं। उस कसूर से कोई भी बरी नहीं हो सकता। तब यह व्यर्थ का विद्रोह फैलना कैसी कसौटी है? इसी लिए किसी बात पर निश्चत राय नहीं दूँगा। व्यक्ति का अधिक सोचना खुद अपने में उलझ जाना है। तब व्यक्ति तो चलता रहता है—एक अनिश्चित भविष्य की ओर। वह असमर्थता में अपनी प्रतिकूल भावनाओं को कुचलकर भी खड़ा रहेगा। वह लाचार जो है। उसके अधीन कुछ नहीं। इसके बाद है अपनी एक जिम्मेदारी! यह व्यक्ति का अपना अपराध है।

किसी से उसका लगाव और मतलब नहीं है। व्यक्ति को अपने मन व बिचारों की परवा स्वयं करनी पड़ती है। वह अपने को सबल राय गिनता है। चार व्यक्तियों वाली सुविधा ठीक नहीं है। व्यक्ति का जो दायरा है, वह अपना है। उसे किसी की सलाह नहीं चाहिए।

और आपका 'पिकनिक' वाला प्रोग्राम ? सारा झगड़ा उसी का है। हर एक क्यों उसमें शामिल हो जाय ? वैसे आपको अधिकार है आदेश दें, कहकर—यह होगा ही। तब वह किसी की मजबूरी नहीं होगी। न कोई उसे अस्वीकार करने की क्षमता रखेगा। तब मेरा व्यक्तित्व हार मान लेगा लेकिन क्या वह अनधिकार चेष्टा न होगी ? यह अधिकारों पर शासन करने का अनुचित धन्धा ? मैं तब क्या स्वीकार करूँ ? यदि आप उसे अपना अनुरोध कहें तो बात सही नहीं लगती। आप अधिकार के भीतर क्यों डर जाती हैं ? शायद यह समझकर कि मैं अस्वीकार कर दूँगा। यह आप अपनी उलझन व्यक्त करती हैं। आप चुप रहतीं तो उचित होता। तब मुझे स्वयं कुछ बातों का उत्तर नहीं मिलता। व्यक्ति अपने को जितना अधिक भूल सके, वह उसके लिए सही बात होगी। वैसे एक दिन में ऐसी आदत नहीं बनती। इस दुनिया में सब साधारण हैं। मैं उत्तर को किसी पर लागू नहीं करता। कारण, कोई प्रश्न सम्मुख नहीं है। वह तो कहना सा होता है। आप उसे 'स्वयंसिद्धि' बनाकर आगे लाती हैं। यह सीख भली नहीं लगती। मैं आपके और मिस रेखा के बीच अवहेलना नहीं रखता। वैसे आप जो कुछ चाहें सोच लें। मैं उसका आभारी रहूँगा। यदि कभी चुका सका तो सारा ऋण चुका दूँगा और आपसे दस्तखती रसीद माँगते हुए हिचक नहीं होगी। यदि न हो तो मेरी असमर्थता के लिए मुझे क्षमा कर देना। वह लाचारी मुझे स्वीकार कर लेनी पड़ेगी।

मुझे कितने दिन साथ रहना है, कोई नहीं जानता। वैसे हमारे दायरे अलग-अलग हैं। कभी कोई रिश्ता नहीं देख पड़ता। मुझे जल्दी ही इस शहर को छोड़ देना है। मैं बन्धन नहीं मानता। उससे अलग हूँ। आज यह शहर है। यहाँ के व्यक्तित्व में रहता हूँ। कल एक अज्ञेय भविष्य की ओर अग्रसर होना है, उसकी परिभाषा 'भाग्य' नामक कसौटी पर निर्भर है। यह सारा रोजगार कभी भारी पीड़ा पहुँचाता है। एक दिन इस दुनिया के विवेक और स्थिरता बचे नहीं रह जायगे।

आप मुझे सूचना दे दें, मैं अस्वीकार नहीं करूँगा। वैसे उपाय मेरे लिये अपेक्षित है। आप रजिस्टर खोलकर हाजरी लिख सकती हैं। मैं कभी गैरहाज़िर नहीं हूँगा। तब मनमुटाव का मौका न आवेगा। मैं इस चिट्ठी को लिखकर अपने मन की सफ़ाई नहीं दे रहा हूँ। न यह मेरी अपने विरुद्ध कोई दलील है। आपका सुबह वाला व्यवहार पाकर मैं अचरज में रह गया। वैसे पहले दिन ही आपको पहचान गया था। आज वही मेरी राय है। नारी, समझ के आते ही अपना कर्त्तव्य जान जाती है। पुरुष तो सदा से उच्छृङ्खल और लापरवा रहे हैं।

दिनेश

लता ने दुहरा-तिहरा कर चिट्ठी पढ़ी। सारी बातें समझ लेनी चाहीं; चैन नहीं मिला। अब वह रेखा के यहां गई। सोचा, पत्र पत्र ही है। दिनेश पत्र के व्यक्तित्व से अलग एक अबूझी पहेली है। फिर भी पत्र के अक्षर पहेली नहीं थे। अक्षर टेढ़े-मेढ़े उलझे हुये लगे। प्रतीत होता लिखावट में भावुकता नष्ट हो गई है। तभी एक उदासी का भ्रम मन में उठता था। सारी बात सुलझ नहीं पाई। बात अधूरी लगी। मानों अभी दिनेश को कुछ और कहना था, जो कि वह इस बार नहीं कह सका।

लता के मन में झुंझलाहट नहीं उठी। वह एक तरफ़ा न्याय कर रही थी। दिनेश उसका कौन है, जो वह उसे आदेश दे। यह उसका कैसा लुभाव है? वह तो कभी कुछ नहीं कहेगा। उस पर सन्देह करना अनुचित लगा। उसने अपना पक्ष चन्द अक्षर लिखकर रख दिया है। यह उसका सही व्यवहार है। वह बलवान् बनने की चेष्टा कर रहा हो, ठीक है। लेकिन वे अक्षर लता की मखौल उड़ाने लगे। कहते—यह मैंने अपनी बात लिख दी है। लता मैंने इसी लिये सब लिख दिया कि तू मुझे पहचान लेने में भूल न करे। मेरा ही नाम दिनेश है। मैं अपना घमंड कभी भूलना नहीं चाहूँगा।

लता ने सोचा कि आज उस पर विचार करना व्यर्थ होगा। उसका सिद्धान्त एक ढोंग है। पत्र की वास्तव ध्वनि दिनेश की वाणी नहीं है। वह तो पत्र की आड़ से बातें कर रहा है। यह दिनेश अपनी निम्नता कभी स्वीकार नहीं करता है। पत्र की सब लाइनों के बीच एक 'अहमन्यता' छिपी मिलती है। जैसे वह लता के लिए जाल रच रहा हो। उसे डराने और धमकाने की ओर सचेष्ट हो। पर वह निरी बच्ची नहीं है? पुरुष अपने जीवन में सीमा बाँधने का ढोंग व्यर्थ ही रचता है। दूर से वे कहेंगे—मैं यहाँ खड़ा हूँ। तुम डर क्यों गईं। मैं और समीप पहुँचने में असमर्थ हूँ। तुम अपने पुराने संस्कारों को भूलकर, आगे आओ न! यह तुम्हारा मेरे प्रति अति उपकार होगा। तुम मेरी रक्षा कर सकती हो। मेरी आग मुझे झुलसा रही है। तुम आकर बुझा दो। मैं तो हूँ व्यर्थ जीव! तुम देवी हो, प्रकृति हो......

दिनेश मिस्टर सिंह की आड़ लेकर बातें करना सीख गया है। जैसे कि आगे स्वयं खड़ा न होना चाहता हो। क्या वह रेखा को ठीक पहचान गया है? उसकी यह प्रतीक्षा उसी के लिए होगी। वह रेखा का मिस्टर सिंहवाला दरजा जान गया है। अब वह रेखा की मार्फत उस

के पास पहुँच, उसके जीवन में प्रवेश कर रहा है। दिनेश के बारे में रेखा जीजी कुछ नहीं कहती है। सारी बातें जानकर भी कुछ नहीं सुझावेगी।

लता रेखा के बँगले के पास पहुँची। देखा कि बाहर मिस्टर सिंह की 'कार' खड़ी थी। क्या इसी सब के लिए दिनेश व्यवहारिक बातें बरता करता है। वह इसी दोस्त के लिए अपना व्यक्तित्व छिपाकर रखता है। सिद्ध करेगा कि वह कुछ नहीं है। मिस्टर सिंह एक शक्ति हैं और वह उस शक्ति का केवल एक अंग है। वह उनका सहारा पाकर चलता है। लेकिन वह रेखा जीजी के पास अकेला बैठा हुआ था। उसकी आँखों में भय था। मन की कातरता फूटकर बाहर निकलना चाहती थी। क्या उसका हृदय किसी अज्ञात पीड़ा से भरा हुआ है? यदि कोई उसके हृदय को छूकर पूछे, तो वह सरलता से सच-सच हाल कह देगा। क्या रेखा सारी बातें जानती है? क्यों वह उसे आमंत्रित करने पर तुली? यह कैसा व्यवहार था? वह इन सब बातों से अनभिज्ञ है। यह उस अज्ञेय की भूखी है। अनुचित को अपनाना चाहती है। आज तक वह जिस कमजोरी का अनुभव करती रही, आज वह एक ढाँचा बन गया। तो क्या वह दिनेश के व्यक्तित्व से डरती है? आज यह भय अकारण ही उठा है। वह उससे अलग रहेगी। रेखा जीजी कब कुछ कहती है। दिनेश वहाँ था। फिर वह स्वयं उठकर चला गया। मिस्टर सिंह आये। सब एक से हैं। रेखा जीजी अपने को छिपाये रहेगी। दिनेश कुछ नहीं कहेगा। बहुत हुआ, माफी माँग ली। जीजी और मिस्टर सिंह यह कैसा खेल खेल रहे हैं?

लता मिस्टर सिंह को रेखा के समीप देखकर भयभीत होती है। रेखा, मिस्टर सिंह से क्या चाहना रखती है? दिनेश इस सबके प्रति अपेक्षित भावना रखता है। रेखा उसे उलझाती है। रेखा और मिस्टर

सिंह ? लता दोनों को समझ लेना चाहती है। कल उसने पहले पहल अनुमान लगाया कि मिस्टर सिंह पूर्ण पुरुष हैं और वह रेखा जीजी एक साधारण नारी। लेकिन लता दिनेश की आँखों में कुछ ढूँढ़ा करती है। क्या चाहना होगी ? दिनेश लिखता है कि आजकल सब बातें वक्त की कसौटी पर मिट जाती हैं। सब भूल है ! उसको याद न करना ही उचित है; दिनेश शक्तिशाली है।

मिस्टर सिंह गृहस्थ हैं। उनके बीबी है, बच्चा है। लता मिसेज सिंह को भली भाँति पहचानती है। क्या वह पत्नी उसके जीवन में रुकावट नहीं डालती ? वह क्यों अपने पुरुष पर इतना विश्वास करती है। यह ठीक नहीं, और रेखा........! मिस्टर सिंह पति हैं। अब वे रेखा से क्या चाहते हैं ? उनकी उसके प्रति क्या सद्भावना है ?

——मिस्टर सिंह रेखा से माफी माँगने आये थे। अपना पिछली रात का व्यवहार उनको अनुचित लगा। एक सम्भव मलिनता दिल में फैल गई थी। वहाँ गाढ़ा मैल जमा होकर तैर रहा था। वह छोटी-सी बात मन से हटाये नहीं हटती थी। रेखा खाना खा, आफिस के कमरे में बैठी हुई कुछ आवश्यक काग़ज़ों पर दस्तखत कर रही थी। नौकरानी आकर बोली, "मिस्टर सिंह आये हैं।"

'मिस्टर सिंह ?' उसके हृदय पर इस शब्द ने पैना डंक मारा। मिस्टर सिंह भीतर आये। उसने सरलता से पूछा, "आफिस नहीं गये ?"

"तबीयत खराब है।"

रेखा चुप हो गई।

नौकरानी के चले जाने पर मिस्टर सिंह रेखा की ओर आँखे उठा-कर बोले, "मुझे कल की बात का बहुत दुःख है।"

रेखा अपनी उँगलियों के नाखूनों पर कुछ लिख रही थी। कलम रुक गई। रेखा फिर भी कुछ नहीं बोली।

मिस्टर सिंह कह रहे थे, "एक गहराई पाकर व्यक्ति भौचक्का रह जाता है। धीरे-धीरे वह अनुचित खिंचाव में बदल जाती है। कर्ता ने हमें पैदा करने से पहले हमारे लिए बहुत-से उपयोगी साधन जुटा दिये थे। इसीलिए हमें सोचने-समझने में बहुत समय नहीं लगता है। अन्यथा इन्सान अपने को बिलकुल भूल जाता। किसके भरोसे कोरे भविष्य का सम्पूर्ण भार लादे-लादे फिरा जाय। यह साध्य नहीं लगता। इसका उपचार होना चाहिए। किसी तरह हो? जानकारी उचित है। इसी लिए मैं सही बात कह रहा हूँ।"

रेखा हार-जीत नहीं जानती। होनहार होकर रहता है। उसे इस बात का विश्वास नहीं। रेखा कब हारी है। वह किसी व्यवहार से छुटकारा नहीं पाना चाहती है। वह हारी होती, हार मान लेती। सच्ची हार पर व्यर्थ का झगड़ा न मोल लेती। दुःख न बटोरती। व्यर्थ बात न बढ़ाती। वह भावों के इन उफ़ानों की परवा न करती। उसे सबलता-वाला व्यवहार मान्य है।

अब रेखा गूँगी है। आज मिस्टर सिंह से वह कुछ नहीं बोल रही है। उनसे गुस्सा नहीं। न अपमान की किसी चोट का दर्प है। वह जो नासमझी की बात थी। आख़िर वह चुप क्यों है? मिस्टर सिंह किसी भाँति उसे बातों में पकड़ लेना चाहते हैं। अब बोले, "दिनेश की बातें समझ में नहीं आतीं।"

"क्या बातें?" रेखा ने तटस्थ रहने की ठान, प्रश्न पूछ डाला। वह दिनेश पर होने वाली बातें सुन लेगी। वह जानती है कि दिनेश मिस्टर सिंह को अपने व्यक्तित्व से ढक लेने की क्षमता रखता है। चाहे जीत किसी की हो। वह दिनेश के ढोंग को पहचान गई है। फिर भी जिस

हथौड़ी से मिस्टर सिंह उसके हृदय पर चोट करते हैं, वह उनकी अपनी नहीं है। वह दिनेश की सौंपी हुई है। उस चोट से मन में बेचैनी उठती है। एक अज्ञात भूख लगती है। जैसे कि वह सब कुछ जानती हो।

मिस्टर सिंह बोले, "दिनेश ने अब की एक नया दार्शनिक मजहब अपना लिया है। वह प्रेम पर विश्वास नहीं करता है। उसे वह पाखंड और ढोंग मानता है। वह कहता है कि यह तो नारी-पुरुष का आपसी धोखेबाजी के खेल का एक जाल है। प्रेम तो बैडमिन्टन की 'चिड़िया' की तरह है। साधारण बल से उछालकर, जिससे हार-जीत का निर्णय हो जाता है। वह साबित करता है कि प्रेम की दुहाई में 'असहाय नारी' ठगी जाती है। उस पर मोह-ममता का फंदा बनाकर फेंका जाता है। सब उसे फुसलाने को कहते हैं—तू आश्रयदाता देवी है। वे शारीरिक अन्वेषण की चाहना का प्रश्न आगे नहीं लाते। चाहते हैं कि नारी आँचल के किसी कोने से अपने को ढक ले। नारी का जागरूक-रूप, उसका अपने प्रति एक धोखा है। वह संस्कृति और व्यवस्था, जो उसको सौंपी गई है, उसे नहीं भूलेगी। उसमें स्वयं कोई नई व्यवस्था बनाने की सामर्थ्य नहीं है। दिनेश फिर अलानिया कहेगा—प्रेम नारी के लिए एक प्राकृतिक गुणकारी दवा है। यदि वह पुरुष के हाथ की कठपुतली न बनकर, सही खेल खेल सके तो उपचार लाभदायक होगा। किसी मित्र पुरुष का मूल्य आंके बिना वह पति का मूल्य नहीं आंक सकती है। यह शारीरिक नाता एक कसौटी है। उस दूसरे पक्ष में पुरुष में कई दर्जन नारियों को उलझाने की क्षमता होनी चाहिए। ताकि वह एक ही समय में सब से प्रेम कर सकने का दावा रक्खे। यह कोई स्वार्थ नहीं है। तब अनन्त की आहें मिट जायँगी। न इतनी वेदना ही दुनिया में फैली रहेगी, जितनी कि आज है। क्यों नारी एक आकर्षण भर समझी जाय? विवाह कोई सिद्धान्त नहीं है। मनुष्य ने समाज की

व्यवस्था के संचालन के लिए कुछ इसे स्वीकार-सा किया है। सब जातियों का अन्त पशुता पर निर्भर है ! पशु-अवस्था सही साबित होगी। वही पशु-गुण मनुष्य-भावना में सदा रहा, रह रहा है और रहेगा। इसमें छिपाव की बात नहीं।

लता इसी वातावरण में पहुँची। रेखा उठी। लेकिन उसने लता के चेहरे का रंग मुरझाया हुआ पाया। लता जो कुछ कहने आई थी, वह मिस्टर सिंह के आगे नहीं कहा जा सकता था। अपने मन में बड़ी देर तक भला वह बात कैसे छिपाई जाय। मन में अभी तक कई सवाल उठ रहे थे। अकारण, जिनके प्रति समझौते का कोई मोह नहीं था। मिस्टर सिंह फिर यहीं हैं। बात का समाधान नहीं होता था।

"आ लता !" रेखा बोली।

उदास लता बैठ गई।

रेखा ने पूछा, "कल के प्रोग्राम के लिए क्या तय किया ?"

"जो ठीक समझो।"

रेखा ने मुसकरा कर मिस्टर सिंह से कहा, "हम लोगों ने कल 'पिकनिक' पर जाने को तय किया था। दिनेश जी ने कहा कि उनको फुरसत नहीं है।

"दिनेश ने ?"

रेखा पूरी बातें सुना रही थी कि लता ने बात काटी, "वे आवेंगे जीजी।"

अब मिस्टर सिंह कहने लगे, "दिनेश न जाने क्यों सब लोगों से दूर रहना चाहता है। मैं चाहता था कि यहाँ वह मेरे साथ रहे। हज़रत होटल में पड़े हुए हैं। मैं जानता हूँ कि वह बन्धन पसन्द नहीं करता है। इसीलिए जोर नहीं दिया। नई जगह है, फिर वकालत का पेशा। कई ख़र्चे हैं। उसे कोई परवा नहीं। कल कह रहा था—

लता चौंककर बोली, "जीजी, तुम क्या हो ?" भौंचक्की उसकी आँखों की ओर देखती रह गई।

मिस्टर सिंह दिनेश के पास पहुँचे। देखा कि वह किताब पढ़ने में मशगूल था। उनको आया हुआ देख कर, किताब एक ओर रख दी, बोला, "इस बेवक्त कैसे चले आये ? मैं खुद साँझ को तुम्हारे पास जाने की सोच रहा था। कल तो हमें 'पिकनिक' में जाना है। मैंने लता को स्वीकृति की चिट्ठी भेज दी है। यद्यपि मुझे ऐसा हुक्म नापसन्द है। वे हमारी कौन हैं ? एकदम हम पर हुकूमत करना चाहती हैं। हमने उनको वह अधिकार कब सौंपा है। उनकी करतूतों में मेरी बातों का झूठा अर्थ लगाना भी शामिल हो गया हैं। यह नारी की अपनी कमजोरी है। पुरुष कहता है, तू ऐसी है। वह मन ही मन गुनगुनाती है—'मैं ऐसी हूँ।' इसी लिए मुझे उस सारी जाति पर रहम आता है।"

मिस्टर सिंह चुपचाप सुन रहे थे। दिनेश कह रहा था, "मैं चिट्ठी नहीं लिखना चाहता था। फिर भी मुझे आपका साथी बनकर, उन लोगों का आदेश स्वीकार करना पड़ता है। लता के लिए मुझे चिन्ता है, कारण की वह रेखा की तरह सबल नहीं है। अपना कर्तव्य नहीं पहचानती। रेखा की चाह आप जैसी है। लता का नारी-रूप मेरे भीतरी पुरुष से बहुत मेल खाता है। यह कोई आकांक्षा नहीं, सच-सच बात है। वैसे प्रत्येक नारी-पुरुष अपनी लिखी परिभाषा में पूर्ण होते हैं। उनका अपना-अपना दृष्टिकोण होता है। पुरुष अलग-अलग भावना में भिन्न-भिन्न नारियों को पसन्द करता है। कभी ऐसी कि जो बच्चोंवाला सरल स्वभाव लाई हो। कभी मन किसी नारी की बड़ी-

बड़ी आँखों से उलझ जाता है। फिर किसी रूठी रमणी को मनाने की चाह यदा-कदा किसके मन में नहीं उठती! सांवले रंग की किसी छोकरी से मन का उलझ जाना आसान-सी बात है। पुरुष का दिल मौसमों की तरह तब्दीलियाँ चाहता है। नारी तो दूसरे के अधीन होती है। इसी लिए उसे पुरुष ने नैतिकता की जंजीरों में आसानी से बाँध लिया है। फिर वह होशियार तो है ही। उन्हें वक्त पर आदमी को तोल लेने का ज्ञान मालूम रहता है। यदि यह बात न होती, तो वे बहुत मुसीबतें उठातीं। नारी अपने दिल के आइने में पुरुष की परछांई को भली भाँति पहचान लेती है।

"दिल के आइने में दिनेश! यह तुम्हारी कैसी धारणा है?"

"यह सब सच बात है। अच्छा बतलाओ न, रेखा को इतने समीप पाकर क्या तुमको तसल्ली है?"

मिस्टर सिंह ने कोई उत्तर नहीं दिया। तब दिनेश बोला, "तुम रेखा के हृदय में केवल बसेरा चाहते हो। जानकर भी कि उस घोंसले में तुम आजीवन नहीं रह सकोगे। जो बातें तुमने मुझसे कही हैं, क्या यह सब सुनकर मुझे ख़ुशी हुई? वे सब एक दोस्त के खातिर मैंने सुनीं। आज मैं अब रेखा का वकील हूँ। क्या तुम विश्वास करते हो?"

"रेखा के वकील?"

"देखो दोस्त, पशु-पक्षियों में एक मौसम आता है, जब कि नर और मादा साथ-साथ रहते हैं। वे अपने लिए घोंसला बना लेते हैं। वे कुछ दिन एक-दूसरे के समीप रहते हैं। एक दिन 'मातृत्व' का दान देकर नर चला जाता है। आगे फिर वह जोड़ा जीवन भर नहीं मिलता। उनका काम सृष्टि के सञ्चालन तक सीमित रहता है। उनका आपसी कोई रिश्ता नहीं होता। वहाँ भावना नहीं होती है। उनको भावुकता का बुख़ार नहीं चढ़ता है। पुरुष की आदत आज भी वैसी ही है। नारी

संयम के लिए रूढ़ियों से गृहस्थी पसन्द कर चुकी है। वह एक आश्रय की चाह में पुरुष की ग़ुलामी स्वीकार करने में नहीं हिचकती। यह कोई सभ्यता का विकार नहीं है। बुद्धिवादी नारी पशुओं की तरह उच्छृङ्खल बन सकती है। रेखा ने तो मुझे अपना वकालतनामा सौंप दिया है। वह अपनी 'सराय' में मुझे एक दिन बसेरा देने में एतराज नहीं करेगी।"

"अपनी सराय में?"

"नहीं तो और कौन-सा उचित नाम होगा? सदा से पुरुष का ऊपरी हाथ रहा है। इसीलिए उसकी जीत होती है। भला, नारी के आँचल पर पहले दस्तख़त कौन नहीं करना चाहता है?"

"पहले दस्तख़त!" मिस्टर सिंह अवाक् रहकर दिनेश को देखने लगे।

"यह आश्चर्य की बात नहीं है। पुरातन काल से पुरुष ने ऐसा स्वभाव पाया है। राजा-महाराजाओं को देखो, उनके यहाँ कई-कई रानियाँ होने पर भी छोकरियों के रखने का रिवाज है। इसके विपरीत एक वेश्या को ले लो। वह नथ की आड़ में अपनी क़ीमत बनाये रहती है। वह उसका ज़बरदस्त हथियार है। भला वह अपनी कीमत क्यों कम करे? पुरुष दल का प्रत्येक व्यक्ति भारी सन्तोष के साथ अपने को प्रथम पुरुष गिनता है। यह बहुत अजीब पहलू है। एक वेश्या कुछ पुरुषों को छोटी-छोटी सोने की नथें सौंप कर हर एक को लुभाती है। वे भाग्यवान् पुरुष सन्तोष के साथ नथ ले जाते हैं। यह कैसा धोखा है? यदि गृहस्थी की नारी, पुरुषों के अत्याचार के ख़िलाफ़ बग़ावत करने के लिए नथें उतारनी आरम्भ कर दे तो......?"

"दिनेश, यह तुलना अनुचित है। उस जाति पर यह झूठा अपवाद होगा।"

"नारी अपना कर्तव्य सदा से मानती आई है। एक बच्चे के बाद वह उसी की ख़ुशी में फूली समाई रहती है। उसका वक्त कट जाता है। लेकिन पुरुष क्या करे? इसके लिए समझदार लड़कियाँ हर तरह अपने पतियों को उलझाए रहती हैं कि उनका पुरुष बाहर न भाग जाय।"

"क्या दिनेश?"

"नारी तो सहानुभूतिपूर्वक अपने को सौंप दिया करती है, एक दिन। पुरुष वहीं टिक जाता है। समाज का यह निर्माण नारी-पुरुष के समझौते से ही हुआ है। फिर पुरुष ने उसे बेड़ियाँ पहनाई और क्या आज नारी की हालत कम दयनीय है? उसके लिए कोई न्याय नहीं। वह जिस खूँटे से बँध गई, गाय की भाँति वहीं जीवन भर रँभाती रहती है। अच्छा-बुरा सब सहती है। यह कैसा न्याय है? कभी तुमने क्या इसे सोचा?"

"अच्छा-अच्छा, सब सोचूँगा। चाय पीने चलोगे?"

"कहाँ?"

"लता का निमन्त्रण है। सन्ध्या को।"

"तो आ जाऊँगा।"

"पालतू बन रहे हो।"

"तुम्हारा साथ है न। तुम्हारा दावा मेरा दावा है। तुम्हारा साथी हूँ, इसीलिए सब दया बरतती हैं।"

मिस्टर सिंह दंग रह गये, बोले, "दिनेश!"

"मैं आऊँगा। झूठ नहीं बोल रहा हूँ। मेरी बात का इतमीनान रखना। हाँ, मैंने जो कुछ कहा है, वह तुम्हारे लिए है। रेखा को सुनाने से लाभ नहीं होगा। वह सुन लेगी तो शायद मेरे इस अन्याय को न सह सके।"

मिस्टर सिंह के चले जाने के बाद दिनेश चुपचाप कुछ सोचता रहा। सोचा, यह दुनिया विचित्र है। इसमें कई उलझी कहानियाँ हैं। जीवन को तोल-तोलकर ख़र्च करने पर भी उसका हिसाब रखना पड़ता है। अपने नफे-नुक़सान पर दूसरों की क्या राय ली जाय? सारी दुनिया का कारोबार अपनी-अपनी सीमाओं के भीतर चल रहा है। ज़िन्दगी की कहानी, उसका खिलवाड़, उसके व्यवहार आदि के बाद इन्सान अपने को अकेला एक कोरी धरती पर पाता है। वहाँ यदा-कदा अपने पर घृणा आती है। सब कुछ फिर भी नित्य चालू है। कुछ अड़चन नहीं पड़ती है, पर वह व्यक्ति की अपनी रुकावट है, वक्त की नहीं। जीवन में सँकरी गलियाँ हैं। चौड़ी सड़कों के बाद लंबी मंजिलें हैं। एक-एक पल, एक-एक क्षण और एक-एक मिनट, सब भागता सा प्रतीत होता है। जैसे चुपके से कोई कान में कह जाता हो -- यही है दुनिया का हाल! नाते-रिश्ते, अपना-पराया, दोस्त-परिवार, यह तो समाज ने बनाया है। हम हैं भावनाओं के पुतले, जिनकी लहरें ताल में पड़े पत्थर से बने घेरों की तरह फैलकर वक्त में ओझल हो जाती हैं। समय बीतता चला जाता है। जीवन दिनों, महीनों और सालों का जंजाल है। व्यक्ति एक विराम में सीमित है। साँस चलने तक हम जीवित हैं......।

वह आज जीवन की दुरूह परिभाषा के बीच अटका रेखा पर, लता पर; नारी के उस आँचल पर, जिसे आज तक उसने एक भूल गिना है। आज वह सोचने लगा कि क्या सचमुच रेखा एक बसेरा है और एक लंबी यात्रा में थक जाने के बाद लता एक विश्राम की भावना? वह उलझ गया। जीवन का यह धन्धा सहज नहीं लगा। जीवन में सिलवटें पड़ गई थीं। वहाँ बहुत सूना लग रहा था।

अब दिनेश ने 'शेव' करना आरम्भ किया। निपटकर चुपचाप

बिस्तर पर बैठ गया। सड़ी-गली धारणाओं के अनुसार विचार और तर्क चालू था। उसके दिमाग़ में 'बुद्धि-कीटाणु' रेंगने लगे। वह चैतन्य हुआ। अपने भुलाव पर सोचा। फिर पलँग पर फैलकर लेट गया। ठोढ़ी के नीचे तकिया दबाया। किसी ख़ास बात का निर्णय करना चाहता था। एकाएक वह उठ बैठा। मेज पर से सिगरेट उठा, उसे सुलगा कर 'बाथरूम' की ओर बढ़ गया।

उसने कपड़े पहन-कर ताँगा मँगवाया। उसके मन ने रेखा के घर जाने के लिए गवाही नहीं दी। लता के बँगले के फाटक पर ताँगा रुका। ताँगा वहीं खड़ाकर भीतर पहुँचा। नौकर को बुलाकर पूछा, "लता घर पर हैं?"

"बड़ी बीबी?"

"हाँ, वही।"

"है।"

"उनको यह कार्ड दे देना।" कहकर, उसने कार्ड दे दिया।

नौकर चला गया। दिनेश ने अचरज के साथ एक बार अपने को देखा और अपनी इस करतूत पर हँसने लगा। उसका मन कह रहा था कि वह भागकर कहीं दूर क्यों नहीं चला जाता है। दुनिया के किसी ऐसे कोने में, जहाँ मनुष्य नाम का सभ्य जन्तु न रहता हो। यदि मनुष्य वहाँ रहता भी हो, तो उसकी अपनी पहचान का कोई न हो। ताकि वे यह न कह सकें कि यह दिनेश आया है। उसकी ओर उँगली न उठावें। वहाँ केवल वही अपने को पहचानता हो। वह वहाँ रहेगा। उस दुनिया के समाज से उसे कोई मतलब न होगा। अपनी बातों की जानकारी के बीच स्वस्थ बनने की चेष्टा करेगा। वहाँ वह चैन से रहेगा। कारण, वहाँ अपने जीवन की व्याख्या स्वयं कर, उपहास उड़ाने का मौक़ा न आवेगा। वहाँ की सामाजिक श्रेणियाँ, उसके लिए बन्धन नहीं बनेंगी।

उस जाल से बाहर रहकर, अपने जीवन अनुभवों के कारण वह हर बात को तोलेगा। जीवन को एक नये उत्साह से चला लेने वाली शक्ति बटोर लेगा।

तो, दिनेश भाग जाना चाहता है। यह उसकी कैसी निराशा है। कुछ कच्ची चोटें खाकर इस तरह हट जाने की भावना क्या उसकी मौत नहीं होगी? लेकिन मौत के ऊपर जो धन्धा और रोज़गार है। होटल में रहने पर 'मालिक' किराया मांगता है। उसे रुपया चाहिये। समाज के ऊपर है पैसा और उसके नीचे इन्सान कुचला जाता है। गरीबी एक सामाजिक अपराध है। कुछ डकैतों के धन को बटोरकर, तहखानों में जमा करने का नाम ही है सभ्यता। तहखानों की हिफ़ाज़त किसी युग में नाग देवता करते थे और आज करते हैं 'पूँजीवादी देवता'। जो शायद पुराणों के अनुसार नाग वंश के ही कोई वंशज होंगे। जीवन के हर एक पहलू में महाजनों से वास्ता पड़ता है। बचपन में पिता की महाजनी है। जो सचेत रहते हैं कि बच्चा बुढ़ापे की लकड़ी बनेगा। वह लाठी साधारण मज़बूत लकड़ी की न होकर, सोना-चांदी की होगी। विश्वविद्यालय में विद्या के ठेकेदारों ने ठेका लेना सिखलाया। उसका नफ़ा था कि हर एक दफ्तर के काम का जीव बन जाय। दुनिया के लिये चाहे मूल्यवान भले ही न हो, फिर भी सदा एक नुकसान की भावना उसके मन में रही है। वह थी ँजी की कसौटी।

शीला आकर बोली, "बैठिए, जीजी आ रही हैं।"

वह बैठा नहीं। खड़ा ही रहा। यह ठीक था। किसी के सुझाव पर निर्माण की चेष्टा की ओर उसका ध्यान नहीं जाता है। शीला चुपचाप चली गई।

अब दिनेश ने सोचा कि वह बैठ क्यों नहीं जाता। वह तो खड़े-

खड़े थक गया है। कुछ ठीक विचार भी नहीं कर पाता। वह पास पड़ी बेंच पर बैठ गया। बाग़ की ओर नजर गई। विलायती झाऊ और ताड़ के पेड़ तटस्थ लापरवाही से खड़े थे। सामने बरांडे के चारों ओर गमलों में फूल खिले हुए थे। सुन्दर-सुन्दर रंगीन फूल थे। पर सब के सब गन्ध हीन! उनमें केवल साधारण सुन्दरता ही थी। ओछी सी सजावट—जिसका आन्तरिक रूप भद्दा था। एक हरी टहनी पर काग़ज़ का सा बना हुआ सफेद फूल था। कुछ नीले-नीले, पीले-पीले, गुलाबी और लाल रंगों के फूल खिले थे। वे कृत्रिम-से लगे। पहले मिट्टी के गमले बनाये गये। उनके बनानेवाले को यह जानकारी पूरी थी कि उनमें खाद और मिट्टी भरी जायगी। फूल का पौदा लगाया जायगा। फुहारे से पानी छिड़का जायगा कि उनकी प्यास बुझी रहे। ज्यादा पानी से पौदा सड़ जाता है। इसी लिये गमले में नीचे निकास के लिये एक बड़ा सूराख बना हुआ है।

हरी-हरी टँगी बेलें कभी-कभी हवा के झोंकों से झूमती हैं। वह खेल? उनके गुच्छों से शुभ्र युवतियां अपने कपोलों को सहलाया करती हैं। यह प्रियतम के बिछोह को भुलाने का सही कारण बन जाता है। फिर अज्ञात किसी कवि की इस कल्पना पर दिनेश को बड़ी हँसी आई। जो बड़े-बड़े लकड़ी के बने गमलों पर ताड़ लगे हुये हैं, उनके पत्तों की नोंक बहुत पैनी है। छूते ही चुभ जाती है। वह पैनी पीड़ा हृदय तक पहुँचती है। लेकिन चौड़े-चौड़े पत्तों का फैला रूप सही नहीं लगता है। पेड़-पौदों की कथा। विश्व में कीड़े-मकोड़े हैं; पशु-पक्षी हैं; इसी जीव-प्रणाली के बीच इन्सान भी हैं। पशु-पक्षी पाले जाते हैं। फूलों को हम कैद कर लेते हैं। चिड़ियाँ मुक्ति पा उड़ जायँगी। पशु जंगलों की ओर भाग जाते हैं। लेकिन गमलों में खिले फूल...... ? इतने में लता आई, बोली, "आप तो बाहर बैठ गये।"

"यही फूलों की विवशता पर सोच रहा हूँ।"

"क्या विवशता है उनकी ?"

"हम पशु-पक्षियों को पालकर मुक्त कर सकते हैं। पेड़-पौदों को नहीं। यह दैवी उपेक्षा है। उनके पनपने की स्वतन्त्रता हमारी रुचि पर है। उनकी मुक्ति हमारे हाथ में नहीं है।"

"आप जो न सोच लें कम है। मिस्टर सिंह नहीं आये।"

"मिस्टर सिंह ?"

"हाँ, चाय के लिए।"

"अभी एक बजा है। मैं तो एक जरूरी काम से आया हूँ। वह सुन लो। मुझे डेढ़ सौ रुपये अभी चाहिए। आप दे सकेंगी।"

लता कुछ बोले कि दिनेश कहता रहा, "यह कर्जे के रूप में होगा। मिस्टर सिंह शायद ऑफिस में होंगे, इसी लिए आपके पास आया हूँ।"

"चेक से काम चल सकता है ?"

"नहीं।"

"आप कमरे में बैठिए", कहकर लता चली गई। दिनेश लाचार-सा कमरे में सोफा पर बैठ गया। सहसा उसकी दृष्टि पड़ी मेजपोश पर। नीले सूत से बेल बनी हुई थी। एक कोने पर अँगरेजी में लिखा हुआ था—लता। इस मामूली कारीगरी की बात पर अनायास लोभ हो आया। यह काढ़ने का काम तो सब घरों की लड़कियाँ करती हैं। लता ने इसे काढ़ा था, इसी लिए दिनेश मुग्ध हो गया। उसे मेज से उठाकर हिला-डुला रहा था कि लता आ गई। बोली, "और ज्यादा तो नहीं चाहिए ?"

दस-दस के पन्द्रह नोट मेज पर रख दिये। देखा कि मेज खाली है। और मेजपोश है दिनेश के हाथों में।

"हाँ, इतने काफ़ी होंगे। लेकिन यह बहुत सुन्दर है।"

अचरज के स्वर में कहा लता ने, "क्या ?"

"यह जो 'गोटियाँ रखने के लिए से आपने चारखाने बनाये हैं—चौकोर-चौकोर !"

"इस साधारण बात को महत्वपूर्ण बनाकर आप मेरा मन ऊँचा क्यों कर रहे हैं ?"

"यह तुमने अपने हाथ से काढ़ा है न ?"

"क्यों, ऐसी क्या बात है ? अपने हाथ से न काढ़ती तो क्या किसी शिल्प-मन्दिर में भेज देती ?"

"माफ़ करना लता मैं आज पढ़ रहा था 'इब्सन' का 'मास्टर बिल्डर'। सुबह को निर्माण की एक ऊँची भावना पर सोचा था। वह शायद अचैतन्य भावना सी छिपी रही। इसे देख लोभ हो आया था। लेकिन मैं लोभी नहीं हूँ।"

"कौन कहता है कि आप लोभी हैं ?"

"और यह रुपया भी चुका दूँगा। एक साथ न होगा, तो किस्तों में सही। एक काग़ज़ दे दो लिखत-पढ़त कर दूँ।"

"किस सूद पर।" लता हँसी।

"सूद ! वह शायद न दे सकूँगा। मूलधन ही लौटाल सकूँ तो बहुत होगा। कारण कर्जा बढ़ता जाता है और मैं चुकाने की ओर सचेष्ट होकर भी असफल रहता हूँ।"

लता चुप रही। दिनेश उठा, बोला, "धन्यवाद !"

"यह साधारण कर्तव्य था।" लता गद्‌गद् हो गई। अपनी भावुकता में पसीज गई। यह कैसा अवसर आया है। क्या वह इसके लिए तैयार थी ?

"मैं चाय पर आऊँगा। आप निश्चित समझें।"

दिनेश चला गया। लता कुछ देर अवाक् खड़ी रही। फिर गद से सोफा पर बैठ गई। यह कैसा तमाशा था? दिनेश आया और रुपये माँगकर चला गया। वह उसे आज भी नहीं पहचान सकी। वह किसी दिन क्या माँग बैठे? वह इनकार नहीं कर सकती है। वह एक महाजन है और दिनेश होशियार सौदागर। सोचा फिर—दिनेश बहुत सरल है। कहीं कठिन नहीं। आख़िर उसे कितना समझा जाय। वह उसे उलझाकर चला गया है। यह दिनेश इस भांति कर्जा मांगने क्यों आया? यह उसका अनुग्रह था या कुछ और? वह अपनी कृतज्ञता छोड़ गया है। वह साहसी है। हर एक बात में अपना अपनपा सौंपना जानता है। वह उससे कोई सवाल नहीं पूछ पाती। यदि वह पूछेगी, तो क्या वह अपने दिल का ताला तोड़ देगा?

रेखा इसी दिनेश को समझने का दावा करती है। क्या सचमुच वह बहुत घमंडी है। या यह एक बनावटी बात है। वह इसको स्वीकार क्यों करे। रेखा को वह पत्र दिखलाना भूल थी। दिनेश का विश्वास व्यर्थ ही कमजोर पड़ सकता है। रेखा मिस्टर सिंह से कह सकती है कि दिनेश इस तरह के करतब कर रहा है। वह अपने इस व्यवहार पर हैरान हो, अपने को ओछी साबित करने लगी। मन के भीतर एक कमी महसूस हुई। कमरे के चारों ओर ध्यान गया। लगा कि आतशख़ाने पर जो गुलदस्ता है, उसके फ़ूल सूख रहे हैं। माली को डांटना चाहिए। वह ऊपर दो दीवालों का कोना जहाँ छत को छूता है, वहाँ मकड़ी ने जाला ताना है। उसे नौकरों को साफ़ करना चाहिए। दरी टेढ़ी बिछी हुई है। वह बाहर निकली, देखा 'हैट स्टैंड' वाले आइने पर धूल जमी हुई है। गमलों में पौदों पर सूखी डालियाँ लगी हैं। माली उनको काटना भूल गया है। वहाँ भी कोई कमी लगी तो अपने कमरे में जाकर मेज़ से लगी कुरसी पर बैठ गई। दवात की स्याही सूख गई थी, कलम का

पता नहीं है। पैड का ब्लाटिंग-पेपर धब्बों से भरा हुआ है। यह सब आज तक कभी नहीं देख पड़ा था। मालूम हुआ कि नौकर-चाकर सब आलसी हो गये हैं। लेकिन फिर ध्यान आया कि दिनेश इस सारी विशृङ्खलता को सौंप गया है। वह उस ओर ध्यान न देकर वस्तुओं की गन्दगी से मन को बहला रही है। कमी तो है अपने भीतर, बाहर वह वैसे ही भ्रमवश दीखती है। तो क्या वह ओछी नहीं है? कैसे बात को भुला दे। वह दिनेश के प्रति अपराध कर चुकी है। वह अपराध ही था।

"जीजी, चाय का सामान ?" शीला आकर बोली।

उसने तंद्रा से चौंक के पूछा, "क्या बजा होगा ?"

"तीन।"

"अभी नहीं।"

शीला खड़ी रही। लता का मन व्याकुल हो उठा। वह दिनेश क्यों उसे अपने समीप इस तेजी से खींच रहा है। वह उसके पास नहीं जाना चाहती है। दिनेश उसका कोई नहीं है। ये होनहार-सी घटनाएं क्यों पीछा नहीं छोड़तीं? एक लड़के को वह पहचान नहीं पाई थी, उसने आत्महत्या की। उसके बाद आज दिनेश की आँखों में उसने 'शैतान' को देखा है। वह सहम गई। काँप उठी। वह सब तो......

"जीजी!"

"क्या है शीला ?"

"और कुछ बनेगा ?"

"अभी से ?"

"जैसा भी कहो।"

"अभी नहीं।"

शीला फिर चुप।

लता ने शीला की ओर देखा, बोली, "माँजी ने आज सबसे मेरी शिकायत कर डाली। तू सवाल पूछने क्यों नहीं आती है?"

"तुम भूल गई होगी।"

"तब फिर सीखना बुरा थोड़े ही होता है। अच्छा जा, सब सामान ठीक कर। चार बजे तक सब आ जायँगे।"

शीला चली गई।

अब लता सोफा पर लेट गई। वह अपने को सँभाल नहीं पाई : दिनेश एक प्राणहीन कंकाल सौंप गया था। यह बात मन में उठ रही थी। आज कहीं कुछ कमी लगी, जिसे वह आज तक नहीं जानती थी। न यह सब जान लेने का मौका ही मिला था। अब आज की पार्टी में वह फ़ीकी, लुटी हुई-सी बैठी रहेगी। यह बात बार-बार मन में उठती है। जिन हाथों रुपया दिया, उसी से अब चाय की प्याली सौंपेगी। यह साहस नहीं होता था। पर दिनेश के माँगने पर वह सब कुछ दे देगी। वह उसकी महत्ता के आगे झिझककर खड़ी हो जाती है। उसे समझने का सवाल तो अभी-अभी उठा है। उसकी अधिक छान-बीन करने में वह खो सकती है। उसके व्यक्तित्व की रूपरेखा! क्यों वह उस प्राण-हीन कंकाल पर प्राण डालने तुली है। वह किसी भाँति दिनेश को समझ लेगी। यह भारी विश्वास है। लता ने आज तक अपने पर तर्क नहीं किया। अब वह अपने को भावुकता की कड़ी जंजीर में बँधी पाने लगी। जैसे कि आज अब वह स्वतंत्र न हो। तो क्या वह दिनेश बेड़ी पहनाकर चला गया है? लता आज तक सोई थी। दिनेश चुपके पास आकर बोला—जाग, तू! वह आखें मल कर उठी। देखा कि

दिनेश चला गया है। वह अब तक असावधान और भूल में थी। अन्यथा इस तरह न रहती। कभी हृदय में भूचाल उठता था। चाहे वह भ्रम ही हो, डर लगता कि वह खो जायगी। फिर सोचती कि दिनेश उबार लेगा। अब वह रोगिणी है—बहुत बीमार। दिनेश उपचार करेगा—जरूर करेगा।

दिनेश क्यों चला गया? वह रुका नहीं। वह कुछ पूछना चाहती थी। जरूर पूछ ही लेती। अब वह उसे असहाय छोड़ गया है। वह अनजान आदमी है। दूर का है। अभी तक ठीक समझ में नहीं आया है। क्या वह सब कुछ सुलझाने की सामर्थ्य रखती है? वह तो उसे नहीं पकड़ पाती। उसके आगे से भाग जाना चाहती है। यह सारा विचार व्यर्थ है। लता ने सोचा कि अब समझ-बूझकर चलेगी। अपनी किसी भीतरी कमज़ोरी को चाह न बनने देगी। कहीं वह दिनेश में अपना 'पुरुष-रूप' पाती है। यह संभव गलती नहीं है। वह उसके आकर्षण में ही पकड़ी गई सही; वह पहला व्यक्ति है, जिसे उसने अपने मन में इस तरह फैलाया है। अब वह सगा लगने लगा है। वह एक अज्ञेय थकान में चूर-चूर हो रही है। अब तक खुद अपने से झगड़ती रही है। इस एक अनुभव से दुनिया की जानकारी पा लेना कुछ आसान काम नहीं है। वह आज तक अपनी पहचान से दूर थी। मानो किसी से कोई मतलब नहीं है। सब से अपने को छिपाकर रखने की भावना मन में रही। कोई समस्या गढ़, अपने को सुलझाना नहीं चाहा। उसी लता को अब लगा कि उसकी आत्मा में दिनेश जाला बुन रहा है। वह मक्खी के समान उस जाले में फँस गई है। वह उसे तोड़ डालेगी। आज का इन्सान बहुत चापलूस और सावधान है। इसी लिए दिनेश के मन की छानबीन वाली चेष्टा, एक भूख बन गई है। जो कि फिलहाल मानसिक है। वह आगे अपने को मजबूत बनाकर

उसके आगे खड़ी होगी, ताकि अपनी आँखों में स्वयं उठी रहे। एक सन्देह होता, जो अवहेलना-सा खो जाता था कि वह अपने में बन्धन नहीं पाती। आज तक पुरुष से एक धोखे की भावना मन में उठती थी। अब वह नहीं है! वह डर भाग गया है। अपने भीतर कई बातें उठ रही हैं। वे स्वयं दब गईं। आख़िर वह किसी गहरी अनुभूति में डूब गई। निश्चय किया कि वह दिनेश को अपना सारा आदर सौंप देगी। लेकिन वह क्या माँगेगा? क्या वह सब जान गया है। अन्यथा लता के ही पास क्यों आया। उसका वह व्यवहार! सारे शरीर पर एक सुरसुरी फैल गई।

"चाय के लिये पानी तैयार है।" शीला बोली। साथ ही 'कार' की आवाज़ कानों में पड़ी। लता भीतर खिसक गई। आइने में अपने को भली भाँति देखा। लगा कि उसका चेहरा मुरझाया हुआ है। वह अब तक अपने से बहुत झगड़ी है। उसने कपड़े बदले। अपने को ठीक तौर पर सँवारा। कुछ देर आइने के आगे खड़ी रही। अपने को पढ़ लेने की निरर्थक चेष्टा की। वह असफल रही।

अब गोल कमरे में पहुँची। मिस्टर सिंह बोले, "अभी तक दिनेश नहीं आया? मैं तो समझता था कि पहुँच गया होगा।"

लता ने सुनकर, बात अपने में रख ली। कोई उत्तर नहीं दिया। जैसे अधिक बात नहीं सोचेगी। फिर मिस्टर सिंह बोले, "आपने 'पिक-निक' का तय किया?"

"पिकनिक!" भारी कौतूहल में लता ने दुहराया।

"हाँ, रेखा और तुम निश्चित कर लेना। हम लोग चलेंगे।"

शीला फिर कमरे में आई। मिस्टर सिंह को नमस्ते कर, लता की कुरसी पकड़ कर खड़ी हो गई।

कुछ देर के बाद मिस्टर सिंह ने कहा, "दिनेश जिम्मेदारी नहीं समझता। अभी तक नहीं आया है। न जाने वक्त की पाबंदी कब समझेगा ?"

"तो मैं क्या करूँ ?" लता अनजाने कह बैठी।

"मैं आ गई", रेखा आते ही बोली। "राह में दिनेशजी के होटल में गई थी। मालूम हुआ कि वे उस होटल को छोड़कर चले गये हैं।"

लता की समझ में सारी परिस्थिति आ गई। उस नर-कंकाल के ढाँचे में जैसे प्राणों की यह पहली साँस थी।

"कहाँ चला गया ?" मिस्टर सिंह ने पूछा।

स्वयं रेखा भी यह नहीं जानती थी। उसने तो इतना ही सुना था। मैनेजर बहुत परेशान था। वह सब लोगों से कुछ पूछ नहीं सकती थी। अब हँसकर बोली, "अब यह सारा काम आपका है। मैंने तो जो सुना, उसकी 'रिपोर्ट' दे दी।"

मिस्टर सिंह चुप रहे। लता अपने मन में कुछ कुरेद रही थी। सब उससे अनभिज्ञ थे। वह सोच रही थी कि चला गया, बात सही और ठीक है। शायद वह जगह नापसन्द होगी। और उसको अपने लायक जगह ढूँढ़ लेने का ज्ञान तो है ही। इस प्रकार चला जाना सही लगा। कौन उसे रोक सकता है ? भय हुआ कि इसी तरह कहीं एक दिन......! वह आध घंटा बीत जाने पर बोली, "चाय तैयार है। अब इन्तज़ार करना व्यर्थ होगा।"

चाय चालू हुई और चलती रही। कुछ ऐसा जान पड़ा कि कहीं कमी रह गई है। सब जैसे किसी व्यवहारिक चर्या को निभा रहे हों। रेखा की मुसकान फीकी लगती थी। लता अपने में ही उलझी रही। मिस्टर सिंह कुछ कहते जरूर थे, पर कोई उत्तर न पाकर चुप रह जाते। बारी-बारी से रेखा तथा लता की ओर देखकर स्वयं कुछ

छानबीन करने लगे। हर एक का मन उतावला हो रहा था कि दिनेश आकर न जाने क्या बात सुनावेगा। हर एक उसके बिना एक कमी महसूस करने लगा। दिनेश ने सबको अपने मन में टटोल लेने का अवसर दिया था कि कोई भी उसकी जाँच कर ले। वह कुछ कह लेने को उपस्थित नहीं है। रेखा सोचती रही कि दिनेश मिस्टर सिंह से जो बातें कहता है, वे सब उसी पर लागू होती हैं। वह जानता है कि मिस्टर सिंह मार्फत का काम भली भाँति निभा लेते हैं। वैसे दिनेश को रेखा से कुछ नहीं कहना है। मिस्टर सिंह सदा दिनेश की तारीफ़ करते रहेंगे। मानो उस पर कोई अहसान कर रहे हों। मिस्टर सिंह स्वयं वातावरण की गम्भीरता भाँप, दिनेश पर गुस्सा थे कि उसने सारा मज़ा किरकिरा कर दिया। ऐसी परिस्थिति में उन सबको छोड़ दिया कि सब उलझ गये हैं। उनको दिनेश से यह आशा नहीं थी।

दिनेश, लता और रेखा के बीच अपनी लापरवाही बाँटने में कुशल है। इस पर न सोच, आख़िर उसका पक्ष ले मिस्टर सिंह बोले, "लता, मुझे दिनेश के इस व्यवहार का दुःख है। मैं उसकी ओर से माफ़ी मांग लेता हूँ। वह मेरा सगा दोस्त है। मैं उसे ख़ूब पहचानता हूँ। वह सदा सूझ और पते की बात कहता है। कुछ किसी पर लागू न कर, अपनी बात कहता है। मैंने एक अरसे से उसे जाना है। वह मुझे अपनी सब बातें सुना देता है। मैं दलील नहीं किया करता। रेखा से मैंने उसकी बातें कही हैं। वह मेरा सही दोस्त है। मेरे मन में कभी उससे छुटकारे की चाहना नहीं उठी। मैं उसकी धारणाओं पर सोचता हूँ। वह सच्चा, खरा और ईमानदार आदमी है। दावा करता है कि उसको किसी की परवा नहीं है। न वह भविष्य को मानता है।"

"यह विज्ञापन करने का बुरा तरीका नहीं है। आपने तो अपने

दोस्त की तारीफ करने का ठेका ही ले लिया है। प्रचार करने का इतना सुन्दर ढंग कम लोग जानते हैं।" रेखा ने गम्भीर मुसकान छोड़ी।

"मैं जीजी की बात से सहमत हूँ।" रेखा की प्याली में चाय उड़ेलते हुए लता बोली।

"नहीं-नहीं बस-बस ! मैं कितनी चाय पीऊँगी। मिस्टर सिंह अपने दोस्त का हिस्सा निपटा लेंगे।"

लता ने एक समोसा उठाकर तश्तरी मिस्टर सिंह की ओर बढ़ा दी। समोसा दांत के नीचे दबा, चबाने लगी। कुछ देर बाद बोली, "शीला ने बनाये हैं।"

तभी दिनेश ने कमरे में प्रवेश किया। आते ही बोला, "आप लोगों के आगे अपराधी हूँ। आप लोग बेकार परेशान हुए होंगे। कोशिश करने पर भी जल्दी नहीं पहुँच सका। मैं मजबूर था। वह होटल छोड़ दिया। सब सामान दूसरे होटल में पहुँचाया है। हूँ भाग्यवान् कि चाय मिल जायगी।"

"बैठिए, हम आपका इन्तजार कर रहे थे।" रेखा बोली।

लता ने चाय का प्याला तैयार कर दिनेश को सौंपा। दिनेश ने उसे ले लिया और चाय पीने लगा।

अब दिनेश ने रेखा से कहा, "आप लोगों को धन्यवाद देना तो भूल ही गया हूँ।"

रेखा हँसी। सँभलकर उत्तर दिया, "मैं इतना भार न उठा सकूँगी।"

मिस्टर सिंह को वातावरण का ध्यान आया। दिनेश ने आकर सारी परिस्थिति सँभाल ली है। वे कुछ न कह सके। लगा, दिनेश सब की शिकायतों का उत्तर सुलझाकर अब निश्चित हो बैठ गया है।

रेखा बोली, "आपकी चर्चा हम लोग कर रहे थे। आपने इतनी देर कहाँ लगाई?"

"कहाँ?" स्वयं सवाल को उठाकर, दिनेश ने लता पर आँखें गड़ाईं।

लता सोच रही थी कि वह चुप रहेगी। जब उसे कहना आवश्यक होगा वह सही बात कह देगा। उसने दिनेश की ओर देखा। वह उससे कुछ मूक सवालों का उत्तर बूझ लेना चाहती थी। अपने मन की बातों को खोद लेने तुली। लेकिन दिनेश ने आँखें मूंद लीं थीं। वह कुछ सोच रहा था। अब सावधान होकर उसने चाय की प्याली उठाई और पीने लगा।

"मैं आपके होटल गई थी। सुना कि वह आपने छोड़ दिया है।" बात कहकर, रेखा ने सवाल पूछ डाला।

"हाँ दूसरे होटल में चला गया हूँ। उस होटल में बहुत शोर गुल रहता था। कुछ सहूलियत नहीं थी। वैसे मुझे होटल का जीवन बहुत पसन्द है। दुनिया में किसी भांति निभ जाना चाहिए। होटल भी एक साधन है।"

"दिनेश तेरा क्या है? असंभव को स्वीकार कर लेता है। कह देगा वह ठीक बात थी।" मिस्टर सिंह बोले।

"और मिस रेखा तो संभव को विश्वास मानती हैं। क्या यह कम आश्चर्य की बात है?" दिनेश ने अपना फैसला सुनाया।

रेखा यह सुनकर ठहाका मार हँस पड़ी। दिनेश व्यर्थ दार्शनिक बनने का ढोंग रच रहा है। यह जानकर हंसती ही रही।

लता तो टोक बैठी, "जीजी!"

अपनी हंसी के फैलाव में लता को पाकर, रेखा ने बात की व्याख्या

की, "दिनेशजी, आपकी बातों से हम परहेज नहीं करती हैं! इस समय चाय तो पी लीजिए। बातों से पेट नहीं भरता है। आपका होटलों में रहना उचित है। मुझे इजाजत मिल जाती तो मैं यही करती। लेकिन वह अधिकार देने में स्वयं कल आप लोग कंजूसी करेंगे।"

'अधिकार'! मिस्टर सिंह बात पर सोचने लगे। दिनेश के व्यक्तित्व से रेखा यह कैसा सवाल कर रही है? यह दोनों साधारण रूप में अपने विचारों का आदान-प्रदान स्वीकार कर लेते हैं। क्या यह आपस में साथ-साथ रहने का कोई समझौता है? व्यंग्य यह नहीं! रेखा अपने विश्वास में सदा सबल रही है। दिनेश ने उसके विश्वास पर ताला लगाने की चेष्टा नहीं की। उसके अधिकारवाली माँग पर विधान नहीं लगाता है। वह खड़ा होकर कह सकता है—रेखा चलो। तुम भी होटल में रहो। समाज से मैंने आज्ञा ले ली है! तुम्हारा व्यक्तित्व स्वयं समाज के ऊपर चमकेगा। तुमको इन बन्धनों से छुटकारा मिल जायगा। तुम आज्ञा न माँगकर, अपनी बुद्धि से बात तोला करो! वह व्यवस्था थोथी लगेगी। यह बुद्धि का युग है। लेकिन दिनेश चुपचाप बैठा हुआ था, जैसे कि अब कुछ नहीं कहेगा। यह चुप्पी अग्राह्य लगी। सारा वातावरण एकाएक उदासीन हो आया। सब बात की गहराई पर गम्भीरता से विचार करने लगे।

रेखा सोच रही थी कि वहीं सावधान रहा करेगी। मिस्टर सिंह उसकी निर्बल शक्तिवाले मोरचे पर बार-बार प्रहार किया करते हैं। वह हरी डाल की भाँति हिल जाती है। वह स्वस्थ आकर्षण नहीं बिसार पाती है। कभी दिल में तूफान उठता है कि 'छुईमुई' की भांति उस पुरुष से लिपट जाय। तब क्या वह शरीर की रक्षा कर सकेगी? वह इन्कार करके भी उद्विग्न हो उठती है। बार-बार कांप जाती है। वह अपने जीवन को बहुत प्यार करती है। वहाँ सहज

ही किसी को जगह दे देना नहीं चाहती। अपनी सरलता के विरुद्ध समाज के लोगों पर कड़ा शासन बरतती है। वह पुरुष पर उत्सर्ग नहीं होना चाहती है। यह उसकी असहायता नहीं, एक साधारण कमजोरी है।

लता उलझन के परोक्ष में दुबक गई। कौन अब कुछ कहेगा! यह सन्देह उठता था। वह उनके बीच अपने को अकेली पाने लगी। कुछ वातावरण खुलता, वह अपने को आसानी से सुलझा लेती। मन में एक 'सन्देह' उठता था कि वह कहीं 'अपराध' साबित न हो जाय। बचपन की एक अवस्था होती है। उसे मस्तिष्क की अबोधता का युग कहेंगे। तब प्यार-प्रेम साधारण अधिकार होता है। बच्चा सरलता से सुख-दुख का अनुमान व्यक्त करता है। मां पूछती है—तुझे मेरी याद कैसे आवेगी? बच्चा चुपचाप अपने गले पर हाथ की उँगलियाँ रख देगा। उसके लिए यह याद एक खास सम्बोधन नहीं रह जाती है। यह केवल गले पर लगती है। हृदय से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वह विछोह का कैसा सुन्दर खेल है? जीवन की विभिन्न रूप-रेखाएँ, तमाशे के अलग-अलग दृश्यों से कम नहीं। बच्चा दिल की पीड़ा न जानकर, गले की गुदगुदी पर निर्भर रहता है। वह अज्ञात भूख, पीड़ा नहीं पैदा करती है। वहाँ समझ कम होती है। भूल स्वस्थ बनाती है। लेकिन वह बच्चा भावी भावनाओं की कोमल डोरियों से प्रतिदिन बँधता जाता है।

रेखा, लता और मिस्टर सिंह—ये सब नारी-पुरुष केवल हाड़-माँस के पुतले नही हैं; प्रत्येक का अपना भीतरी दृष्टिकोण है। एक दूसरे को पहचानते हैं। वे सब जानते हैं कि जीवन में बिना संघर्ष के किसी का व्यक्तित्व नहीं पनप सकता है। लता इससे अनभिज्ञ रहने की ठान चुकी है। इसके लिए कोई परवा नहीं बरतती है। उसे किसी

सबल व्यक्तित्व की आड़ में रहना भला नहीं लगता है।

दिनेश ने सिगरेट-केस से सिगरेट निकालकर परिस्थिति समेट ली। सिगरेट फूँकने लगा। साधारण घेरों में सा धुआँ चारों ओर फैलने लगा। वह उसके बीच सतर्क था। इस बहाने को पाकर कुछ सोचने-समझने के लिए तैयार नहीं था। यह अपनी बचत नहीं थी। फिर भी अपने को लता से नहीं छिपा सका। लता कुछ वास्ता पा उस धुएँ के परदे को हटाकर बोली, "चाय ठंडी हो रही है।"

दिनेश ने आदेश का पालन किया। चाय का प्याला मुँह से लगाया। चार-पाँच बड़ी घूँटों में सब चाय पीकर, प्याला तश्तरी पर रख दिया।

रेखा चुप रही। उसे यह उचित लगा। वह जानती थी कि दिनेश अभी कुछ और कहेगा। मिस्टर सिंह 'इजाजत' वाली बात का निर्णय नहीं कर पाये। आज रेखा ने यह नया सवाल स्वीकार किया था। वह क्या चाहती है? वह चाहे तो क्या आज दिनेश का मुकाबला करने किसी होटल में जा सकेगी? वह क्यों इस भाँति झगड़ा बढ़ा रही है?

"दूसरा प्याला?" लता ने केतली उठाते हुए पूछा।

दिनेश ने लता की ओर देखा। लता चाय उड़ेलने लगी। दिनेश ने इस उत्साह पर कुछ नहीं कहा। बचे हुए सिगरेट के टुकड़े को 'ऐशट्रे' पर मीन डाला। अब चाय की प्याली उठाकर, निश्चित हो रेखा से बोला, "अपने सवालों को स्वयं हलकर जीवन को जागरूक बनाना चाहिए। इसके लिए इजाज़त वाली रुकावट की बात नहीं उठेगी। आप अपने अपनत्व को नहीं बहका सकेंगी। आप अपनी जगह पर ठीक हैं।"

यह सुनकर लता अवाक् रह गई। यह ठीक बात हो, वह दिनेश

की राय नहीं सुनना चाहती थी। दिनेश रेखा को हर एक पहलू से पहचान लेने तुला। वह जानता था कि रेखा अपने को व्यवहार की बाहरी झिझक से ढक लेती है। इसे वह अपना सुख पाती है। आज तक वह किसी से अपनी पीड़ा नहीं बाँट सकी। उम्र के साथ-साथ उसका हृदय किसी 'अज्ञेय' को पाने के लिए विद्रोह करता है। वह इस अवस्था में मां बनने की इच्छा को नहीं बिसार पाती है। दिनेश की दलील है कि नारी मौलिक नहीं होती है। उसे नारी-चाहनाओं का पूरा ज्ञान है। वह रेखा को पढ़ रहा है। उसके आगे घटनाएँ फैलाकर उसका मन परख लेना चाहता है। वह जानता है कि कहीं रेखा चटख जायगी, तो वह सँभाल लेगा। वह रेखा को भली भाँति पढ़ लेगा। यह उसका विश्वास है।

मिस्टर सिंह बार-बार रेखा के नारीत्व में भावुकता बिखेर देते हैं। वह इसी लिए अपने को छिपा लेती है। उसका सही रूप पहचान लेना कठिन होता है। मिस्टर सिंह रेखा को अपने हृदय पर बनी कुछ संचित तसवीरें सौंपना चाहते हैं। ताकि वह उसके अनुसार बन जाय। उसका सही रूप पहचान लेना कठिन होता है। रेखा वास्तव में मिस्टर सिंह की तसवीर-वाली भावुकता से डर जाती है। वह साधारण नारी है। वही रेखा अभी-अभी हँसी थी। वह उसकी बाहरी सत्यता का एक पहलू था। मन में भीतर कुछ झूठ छिपा रही है। कुछ जानती है, फिर भी अनजान बनी रहेगी। दिनेश नारी को एक संस्था मानता है इसके बाद नारी पर अधिक विचार न करेगा। यह रेखा अपनी समझ और दावा का कठिन हथियार आगे लाई। दिनेश के आगे अपने नारीत्व को खड़ा कर दिया है। वह साबित करती है कि नारी खिलौना नहीं है। जीवन को अधिक महत्व नहीं देती। उसका हृदय नारी को इस रूप में पा, एक धुली आत्मा ढूँढ़ता है। वह जानता है कि रेखा

उसे अपना कैदी नहीं बना रही है, जैसा और नारियाँ बरतती है। पुरुष को जीवन भीख-सा दान देकर, उसे जिलाये रखती हैं। रेखा सावधान हो, केवल खेल देख रही है।

मिस्टर सिंह ने रेखा को कब-कब नहीं चाहा। वे यदि गृहस्थ न होते, तो रेखा को पकड़ कर अपने साथ रखने को तैयार हो जाते। क्या रेखा उनके कुमारित्व से न घबराती? उनकी बीबी है। आज रेखा निडर है। मिस्टर सिंह के समीप जाने का बहाना मिल गया है। चुपके मिस्टर सिंह ने उसके नारीत्व के तिनकों से नया घोंसला बनाना शुरू कर दिया है। वह मना नहीं करती। फिर रेखा पत्नीत्व के दरजे से अलग रहने का बहाना ढूँढ लेती है। वह गृहस्थी में इतनी स्वतन्त्र न रह सकेगी। जीवन पर नियंत्रण होगा। आज वह कुमारी है। कल पत्नी बनते क्या देर लगेगी! नारी यह बन्धन स्वयं स्वीकार कर लेती है। तब रेखा कैसी लगेगी? उसका क्या रूप होगा?

"क्लब चलोगे?" दिनेश ने मिस्टर सिंह पर बात लागू कर, सारा वातावरण संभाल लिया।

"चलो, लोग इन्तजार कर रहे होंगे।"

"आप जा रहे हैं?" लता सवाल कर बैठी। फिर इस तरह पूछने पर एक झिझक मन में उठी। मानो कि यह अनुचित पहुँच थी।

दिनेश बोला, "आजकल मेरी गृहस्थी सीमित है—होटल से क्लब तक। क्लब का आश्रय पाकर स्वस्थ हो गया हूँ।" कह, चुपके गुरडी-मुरडी किया काग़ज़ लता को दे दिया। लता सिकुड़ी।

दिनेश ने फिर सिगरेट सुलगाई। उठता हुआ बोला, "मुझे व्यवहार की इस थोथी सभ्यता वाले नियम मालूम नहीं; न वे मुझे मान्य ही हैं। अपनी जान-पहचान वालों पर सब बरतना भूल होगी।"

मिस्टर सिंह उठ गये। दोनों बाहर आये। पिकनिक के प्रोग्राम की बात दब गई थी।

अब सुभीते से लता ने वह काग़ज़ खोला। होटल का बिल था, जिस पर कि मैनेजर ने ६०।≈)॥ की वसूली लिखी थी। वह चुपके मन ही मन हँसी। यह भेद रेखा से नहीं कहा।

रेखा ने बात शुरू की, "दिनेश को अपने व्यक्तित्व के बीच कहीं झिझक नहीं है।"

"कैसे जीजी ?"

"वह सारी दुनिया को पहचान लेने का दावा कर के अपने को धोखा दिया करता है। उसने यह ठीक बात नहीं ठहराई है। ऐसे व्यक्ति जल्द नष्ट हो जाते हैं। दिनेश अपने को कंकड़ से भी कठोर साबित करता है। झूठ को सच बनाने वाली विद्या जानता है।"

"तुम क्या कह रही हो ?"

"देख न वह दूसरे के अहसान को उठाकर अपनी लापरवाही से मुक्त हो जाना चाहता है। जैसे कि बहुत सबल हो।"

"जीजी ?"

उसे कोई व्यवहार नहीं चाहिये। यह स्वीकार कर वह उसे अपनाता है ! मैं गलत हूँ कह कर साबित करेगा कि वही सिर्फ सही है।

इतनी सावधानी से चलना अनुचित होता है। यह जीवन को एक वैयक्तिक दूरी पर सीमित कर देता है। मकड़ी की तरह चारों ओर जाला बुन, अहम् की पैनी आँखों से दुनिया को देखता है। कोई भी उस जाल में फंस जाय, यह उसकी सबल भावना है। मैं सारी बातें समझती हूँ। मुझसे इसी लिए वह कुछ नहीं कहता है। मिस्टर सिंह के द्वारा कहला कर स्वयं अलग हट जाता है। इस भाँति वह मुझे कई

सीखें दे चुका है। वैसे सम्मुख रहने पर कहेगा—उसे किसी से खास सरोकार नहीं है। वह अपने व्यक्तित्व में पूर्ण 'इकाई-मात्र' है।

"क्या कह रही हो जीजी ?" लता के हृदय में एक अजीब झगड़ा शुरू हो गया। वह इस रेखा से कुछ पूछ लेना चाहती है। रेखा, दिनेश की सारी दलीलों को खोलने पर तुल गई है। लता दिनेश को ऐसा नहीं पाती है। वह उस पर पूर्ण विश्वास करती है।

आज रेखा सब कुछ कह देने की धुन में है। कहा, "दिनेश कहता है कि नारी के प्रति उसे कोई लोभ नहीं है। फिर भी नारी की अवहेलना करने का ढोंग रचता रहेगा।"

"जीजी, चुप रहो।" आगे लता नहीं सुनना चाहती थी। वह दिनेश पर किसी की राय नहीं सुनेगी। अपनी एक राय स्वीकार कर चुकी है। और अभी उसे समझ रही है। वह जानती है कि रेखा सबल है। उसकी तरह भावुक नहीं। भय हुआ कि रेखा की दलील कहीं हृदय पर प्रभाव न डाल दे।

रेखा का विद्रोह दिनेश को ढक लेना चाहता था। क्या रेखा दिनेश को मिटा डालने की धुन में है ? दिनेश तोल-तोल कर कुछ ऐसी बातें कहता है कि रेखा के हृदय में राख से ढकी हुई 'नारी आग' सुलग उठती है। आज तक वह बहुत असावधान रही है। अब अपने को नहीं संभाल पाती है। रोज वह दिनेश पर सोचती है। दिनेश रेखा और मिस्टर सिंह के बीच अपनी जगह बना चुका है। उन दोनों के लगाव को सही ठहरा, मखौल उड़ाया करता है। वह पुरुष को भली भाँति पहचानती है। उसके लिए पुरुष-भेद नहीं है। दिनेश रेखा के आगे खड़ा होकर कह सकता है—रेखा, यह तुम्हारा अपराध है। मैं उसे अपराध न कहकर तुम्हारी कमजोरी कहूँगा। तुमको सावधान रहना चाहिए। मैं वही पुराना हूँ। उतना ही अनजान। आज तुम

लोगों के बीच हूँ। कल, भविष्य, की जानकारी मुझे नहीं है। मैं अपनी अधिक परवा नहीं करता हूँ। कारण कि मैंने अभी तक निर्माण पर कभी विश्वास नहीं किया है।

इस बीच शीला सवाल की कापी ले आई। लता ने उलझन में पूछा, "क्या है शीला ?"

"कुछ नहीं। एक सवाल पूछना था।"

रेखा ने किताब ले ली। सवाल देखा और कापी पर हल करने लगी। शीला चली गई।

लता भौंचक्की रहकर सोच रही थी कि यह रेखा जीजी क्या है ? वह उसे बहुत दिनों से जानती है। आज दिनेश ने एक नई विचार-धारा सौंपी है। क्या जीजी दिनेश से गुस्सा है ? यदि है तो क्यों ?

राह में दिनेश ने बात शुरू की, "यह रेखा अपना 'ट्रम्प कार्ड' इस तरह क्यों छिपा लेती है, कुछ समझ में नहीं आता। हर तरह अपने को अजनबी साबित करेगी। वह आजकल मन में बार-बार एक बात सोचती है। वह एक भार है। एक बच्चे की मां बन जाने की भावना से अपना मन बहलाया करती है।"

"क्या दिनेश ?"

"रेखा के मन में एक बच्चे की चाहना है। वह मां बनना चाहती है। तुमने उसकी आखें नहीं देखीं। उनमें एक भारी भूख छिपी है। मैंने उनकी खोखली आकृति में बच्चे का 'ढाँचा' ढूँढ़ लिया है। वह डरती है कि उसकी यह भावुकता कहीं कोई जान न ले। आज तक उसे कोई सही पुरुष नहीं मिला। अन्यथा वह अब तक गृहस्थी में प्रवेश कर चुकी होती। आजकल वह अपने से असन्तुष्ट है! तुमने

उसकी नारी-तृष्णा को जगा दिया है। वह स्वयं अपने मन में इस इच्छा को छिपा लेने की आदी हो गई है। वह लाचार है।"

"दिनेश ?"

"यह काम्पलेक्स युवतियों में आ जाता है! एक खास अवस्था के बाद बच्चे की चाहना उठती है। मैंने कई युवतियों की आँखें फीकी पाई हैं। रेखा आजकल बहुत परेशान है। वह सुन्दर-सुन्दर कपड़े पहनकर अपने को बहलाने की चेष्टा करती है। अपने को गुड़िया साबित न कर, स्वयं गुड़िया बनी डोलती है। उसको समझकर मेरा वह सही निर्णय है। वह अपनी बेबसी को जानकर चुप रहती है।"

"दिनेश, यह झूठी बात है। मैं इसे कदापि स्वीकार नहीं करूँगा।"

"मिस्टर सिंह तुम संभवतः नहीं जानते हो कि 'ब्रिज' की भाँति ही नारी-खेल दुरूह है। उसे जीवट व्यक्ति ही खेल सकते हैं। रेखा वाली अवस्था में नारी पुचकार चाहती है। यदि पुरुष अपने शारीरिक बल से उसे कुचल डाले तो वह विवाद नहीं करेगी। हम 'ब्रिज' को जीवन से तोलते हैं। जीवन का 'दर्शन' उससे मेल खाता है। हम नारियों को अलग-अलग दरजों में विभाजित कर सकते हैं। जंगली नारी-पुरुष 'सेक्स' के भयंकर खेल खेलते हैं। मौत तक से नहीं डरते। हर एक नारी में वैसी ही पशुवृत्ति विद्यमान होती है। वह स्वभावतः पुरुष से अधिक 'पशु' होती है। वह उसका अपना साधन है। अन्यथा वह सुन्दर गुड़िया बनी न डोलती। समाज में देखो, नारी पुरुष के आगे सजधज कर आती है। अपने शृंगार में कहीं कमी नहीं रखती है। लाल, नीले, पीले भाँति-भाँति के रंगीन कपड़ों से अपने को ढक-कर लुभावनी बनाती है। वह पुरुष के दिल में बेचैनी पैदा करना जानती है। वह उससे भागती फिरेगी। इस भाँति पुरुष को बावला बनानेवाला व्यवसाय किया करती है। तुम यदि उसे आँख उठाकर

देखोगे तो वह दुबक जावेगी। ऐसी अनजान बनेगी कि मानो तुमको पहचानती नहीं है। समाज में पागलखानों का होना हितकर है। युवकों को वहाँ आसानी से जगह मिल जाती है। यदि नारी का अधिकार होता तो वह अपने सब प्रेमियों को फाँसी पर लटकवा देती। आदमी होशियार होता जा रहा है। वह चोट खाकर अपनी अध्यात्मिक प्रेमिका का स्वप्न देख, सन्तोष कर लेता है।"

मिस्टर सिंह ने एक बड़ा जमाना देखा है। वे दिनेश को जाने-पहचाने हुए आदमियों की भीड़ से अलग रखते हैं। वह सबसे भिन्न है। दिनेश अपनी दलील पेश करना चाहता था। नारी का सही वास्ता सुझाने पर तुला हुआ था। उसे अपनी पूर्ण व्याख्या व्यक्त करनी हितकर लगी। अब घड़ी देखकर बोला, "अभी बहुत वक्त है; तब तक किसी होटल में न चले चलें।"

'कार' होटल की ओर मुड़ गई।

होटल में पहुँचकर दिनेश ने पाया कि वहाँ भारी हल्ला था, मानों कि वही सही जीवन हो। वह इन होटलों में ही रहना पसन्द करता है। यहाँ उसे थकान नहीं लगती। आसानी से आश्रय मिल जाता है। वह अपनी पहचान के दायरे से मुक्त रह सकता है। वह अपने उपाय की उदारता में निभ जाता है।

अब वे दोनों चुपचाप कोनेवाली मेज पर बैठ गये। फिर 'ड्रिंक' चालू हुआ। आज न जाने क्यों दिनेश का भीतरी दिल बहुत प्यासा हो आया था। प्यास बुझती नहीं थी। अब सिगार फूँकने लगा। मिस्टर सिंह तथ्य से बाहर नहीं बहक सके। पीठ पीछे वाला रेखा का आकर्षण बढ़ रहा था। आज रेखा उनके जीवन का सही सवाल थी। वे बहुत सोचकर बोले, "रेखा ठीक भेद तो है न?"

"भेद क्यों? कुछ और कहो।"

"मैं अधिक नहीं जानता।"

"तब क्या दुनिया के सभी इम्तहानों के सवाल मुझी को हल करने हैं?"

"शायद तुम कुछ अधिक समझ पाये होगे।"

"मैं यही जानता हूँ कि वह अपने नारीत्व के ऊपर मजाक कर लिया करती है। अपने नारी-सौंदर्य से डाह पैदा करती है। पिछड़ती हुई उम्र में आज चाहती है कि किसी तरह लता से फीकी न लगे? ये लड़कियाँ एक ज़माने से बदतमीज़ कहलाती चली आई हैं। चाहे बुद्धि से हों अथवा किसी नैतिक ढोंग के कारण! बात सच है।"

"तुम्हारी धारणा ग़लत है।"

"तब छोड़ो इस झमेले को। मैं समझ चुका हूँ कि नारी का सौंदर्य गौण वस्तु ही है। हम पुरुषों की ज़रूरत शरीर हो सकता है, सौंदर्य ख़ास नहीं। सौंदर्य केवल लुभाव है। नारी को समीप खींच लेने का बहाना-मात्र है। सौंदर्य तो एक गुण है। फूलों का रंगीन होना, उनके उत्पादन का एक साधन है। तितली, भौंरे आदि भरमाकर वहां बैठते हैं। इस बीच नागकेसर और परागकेसर मिल जाते हैं। आगे वे बीज का रूप लेते हैं। यदि यह न होता तो पेड़-पौदे और फूलों की जाति नष्ट हो जाती। इसी कसौटी पर हम नारी को परख सकते हैं। नारी अपने शरीर का चुग्गा फेंक-फेंककर पुरुष को रिझाती है। उसे अपने शरीर और सौंदर्य पर बहुत भरोसा रहता है। पुरुष-जाति ने नारी को आनन्द की वस्तु गिन लिया। यही नारी के घमंड का कारण है। वह भली भांति परिस्थिति सँभाल लेना जानती है।"

"अच्छा, अब क्लब चलें।" कहकर मिस्टर सिंह उठे।

दिनेश अभी धीरे-धीरे 'सिप' कर रहा था। वह आज मिस्टर

सिंह को सारी बातें सुझा देना चाहता था। उसके अधिकार की बात होती, वह एक ऐसा अजायबघर खोलता, जहाँ नारी के अंग-प्रत्यंग के मानचित्र टँगे रहते। वहाँ बड़े-बड़े ग्राफों द्वारा नारी की अवस्था तथा भावों का प्रदर्शन होता। जिससे युवकों में नारी के प्रति फैली ग़लत धारणाओं का निवारण हो जाता। नारी का गुड़िया-रूप उनके मन से हट जाता। वे नारी के शरीर और मन को अलग-अलग पहचान-कर अपनी स्पष्ट राय देने में सफल हो जाते। नारी का विद्रोह नहीं छिप पाता है। विद्रोह में वह साधारण तकरार के बाद चुप रह जाती है। वह अपने शरीर का उपयोग जानती है। अतएव अधिक ओछी नहीं बनती है।

वे दोनों उठे। क्लब पहुँचकर दोनों ने ब्रिज खेला। 'नोट्रम्प्स' का खेल खेलते हुए दिनेश को लगा कि कार्डों के बीच लता का चेहरा फैल जाता है। जैसे कि वह बाजी जीत लेने के लिए सहारा हो। दिनेश 'ब्लफ' करना जानता है। जानता है कि एक वेश्या यही बात ऊपर रखकर अपना रोज़गार चलाया करती है। वह शरीर उसकी हुएडी हैं—ब्लैंक चेक है, जिस पर जितना चाहे लिखवाकर वह दस्तखत करवा लेगी। क्या रेखा अपनी हिफ़ाजत करना नहीं जानती है? वह चतुर है। वह दिनेश के आगे लाज नहीं बरतती है।

क्लब में कोई ख़ास बात नहीं हुई। खेल समाप्त हो जाने पर वह अपने होटल लौट आया। काफी रात गुजर चुकी थी। उसने बाथरूम में जाकर मुंह धोया। सिगरेट सुलगा, ड्रेसिंग टेबुल पर से. कंघी उठा-कर अपने बालों को सँवारने लगा। बड़ी देर तक किसी अज्ञात चिन्ता में डूबा रहा। अपने को भूल गया। ऐशट्रे से धुआं उठकर समूचे आइने को ढक रहा था। उसके मन में एक 'अज्ञेय' चाह उठी। वह एक बेकली थी। सोचा, यह दुनिया क्या है? जहाँ रोज़ अजनबी

मिलते हैं। अनजान लोगों की भीड़ में चलना होता है। उनको समझ लेने की ज़िम्मेदारी उठानी पड़ती है। हम सब अलग-अलग रहें, एक-दूसरे को नहीं पहचानें, क्या सारी दुनिया हमारे आगे शून्य रह जायगी? यह बात सत्य नहीं उतरती थी। जीवन में सदा आकार और व्यक्तित्व का झगड़ा रहेगा।

अब वह खिड़की से बाहर देखने लगा। चारों ओर निपट सुनसान था। उसने एक धीमी आहट सुनी। विचारधारा टूट गई। उसने नीचे झाँककर देखा। अँधियारे में टार्च की रोशनी के सहारे एक युवती होटल के नौकर के साथ, सीढ़ियाँ चढ़ रही थी। वह उस रमणी का चेहरा नहीं देख सका।

यह युवती कौन है? कहाँ से आई? नौकर से उसका क्या वास्ता होगा? समझ में बात नहीं आई। जिस नौकर के साथ वह आई, दिनेश उसे पहचानता है। वह बहुत बातूनी और ख़ुशमिज़ाज है। सब काम हँस-हँसकर कर देता है। एक-एक बात ख़ूबी से निभाता है। हाजिर जवाब! उस पर नाराज़ होने की गुञ्जायश नहीं रहती है। वही पांचू उस युवती को अपने साथ लाया है। साथ लाकर......!

रेखा और लता, दोनों युवती हैं। उनके बीच यह एक अनजान युवती अनायास आ गई। दिनेश ने सोचा कि अब वह सतर्क रहा करेगा। आज न जाने क्यों दिल में बहुत डर बैठ गया था। मानो कि अपने पर सन्देह उठ रहा है। वह उससे अलग रहना चाहता था।

वह कमरे से बाहर निकला। वह उस अनजान युवती से कुछ पूछ लेना चाहता था। सोचता कि अपना सारा मोह उसे बांटकर निश्चित हो जायगा। वह युवती, रेखा लता सबको ढक रही थी। नारी की जिस झुँझलाहट से वह हटकर रहना चाहता था; उसका असली रूप पाकर

सावधान हो गया। आज जैसे कि एक लम्बे-चौड़े स्टेज पर, वह अपना पार्ट अदा कर रहा हो। उस स्टेज के परोक्ष में लता और रेखा हैं।

मानव-घटनाएँ गृहस्थ, समाज और संस्था अवसर को उलझानेवाली समय की गुत्थियां हैं; इसके बाद है जीवन की भूख का नग्न रूप! दुःख-पीड़ा और विछोह!! हर एक इन्सान जीवन-स्टेज पर अपना पार्ट अदा करता है—कुछ सही और कुछ गलत। आगे वे 'कैनवास' पर खिंची 'तसवीरें धुंधली पड़ जाती हैं। एक याद रह जाती है। यह युवती उन सब मैली तसवीरों से उजली और उभरी लगी।

दिनेश दुनिया से दूर रहने की भावना रखकर भी अब उसके बहुत समीप था। कहीं कोई उलझन नहीं थी। फिर सोचता कि इन सब लोगों के बीच वह कब तक रहेगा? होटल के कमरे, किसी खास गृहस्थ का घर नहीं है। हर एक आकर बसेरा ले लेता है। किसी के लिए रुकावट नहीं है। वह युवती किसी एक कमरे में रात भर रहेगी। दिनेश यदि उसके समीप पहुँच सकता तो पूछ डालता—कौन हो तुम? इतनी रात छिपकर क्यों आई हो? इस होटल से तुम्हारा क्या वास्ता है? तुम नौकर के साथ चली आई। सातवें, आठवें, नवें किस कमरे में हो? क्या चुपचाप रात भर वहीं रहोगी?

वह और आगे बढ़ा। नीचे उतरा। डाइनिंग रूम के बाहर लगे बोर्ड पर टँगे कार्ड पढ़ने लगा:

नम्बर सात—अहमदहुसेन।

नम्बर आठ—के० सोराबजी।

नम्बर नौ—एन० के० माथुर।

दिनेश चुपचाप लौट आया। इन नामों पर सीमित आकृतियों का ढांचा बनाता रहा। कहीं, किसी कमरे में वह युवती है।

वह कौन होगी? एक वेश्या या आर्थिक दासता की शिकार कोई

नारी। वेश्या तो अपने जीवन का कोई हिसाब नहीं रखती है। उसे सुबह से रात तक अवकाश नहीं मिलता है। फिलहाल लोगों के बीच सहूलियत से अपना जीवन काट लेती है। अपने शरीर और भावुकता के ऊपर, पैसे का मूल्य आंकती है। अपना सुख-दुःख बाहरी चमक में छिपा लेती है। क्या वह किसी दिन एक पुरुष की होकर रह सकेगी? वह होटल इस नारी की रोजी का ज़रिया है। आज की उसकी यही नौकरी है। उसे यहीं जीवन के कई साल भिन्न-भिन्न स्वभाव के लोगों के साथ, अलग-अलग कमरों में काट देने हैं। होटल के व्यक्तित्व से उसका गहरा सम्बन्ध है। यही उसकी आज की जगह है। यह पाँच इस काम को इनाम के लोभ पर करता है। उसके जीवन की पहली खुशी 'ब्वाय' बनकर पूरी हो गई है। अब चाहता है कि एक दिन 'हेड वेटर' बन जाय। उसकी सीमा बहुत सीमित है। उसकी अपनी दुनिया यही, इतनी रह जाती है।

यह युवती अंधेरी रात में आहट बिखेर कर खिसक गई। दिनेश के हृदय को एक कौतूहल सौंप गई है। अब वह अन्धकार के बीच गौण लगी। उसका व्यक्तित्व सात, आठ, नौ नम्बर के कमरों में से किसी एक में है। इस चलती दुनिया में रेखा, लता, वह युवती या फिर मिस्टर सिंह, के० सोराबजी, एन० के० माथुर! कैसी कशमकश है? लेकिन वह युवती किसी को परवा की भूखी नहीं है। अपना कर्तव्य पहचानती है। उसे जीवन में थकावट नहीं लगती है। वह सावधानी से दुनिया में चलना जानती है। उसका क्या नाम होगा? नाम की व्याख्या के भीतर होता है इन्सान का व्यक्तित्व? नाम का ज्ञान पूरी जानकारी है। वह युवती है निडर। इसी लिए इस तरह चली आई है। उसे कहीं अपनी जगह बनाते हुए अधिक डर नहीं लगता है। कोई हिचक नहीं होती।

दिनेश को नींद आ रही थी। वह अपना मोह किसी को नहीं सौंपना चाहता था। वह निश्चय कर चुका है कि वह दुनिया के किसी रोजगार में खास दिलचस्पी नहीं लेगा। इस अज्ञात रमणी ने उसके भीतरी पुरुष को सजग कर दिया। अब वहाँ विद्रोह शुरु हो गया है। वह युवती सुझाती लगी—मैं रेखा नहीं, लता नहीं हूँ। मैं तो तुमको पहचान लेने की शक्ति रखती हूँ। तुम केवल एक पुरुष हो।

रात बीत रही थी। दिनेश एक भारी जंजाल में फँस रहा था। अब वह थककर सो गया। नींद आ गई थी।

मिस्टर सिंह रेखा से पूरी गवाही लिये बिना घर लौटकर नहीं जाना चाहते थे। 'ब्रिज' के 'एक' शरीर पर बार-बार दिनेश ने प्राण डालने चाहे थे। वे दिनेश की बातों को अपनी बुद्धि से न परख पाये। सदा ही दिनेश ने रेखा को ऊपर उठा, उनको सान्त्वना दी है। आज वे रेखा के नारी-शरीर पर उलझे जाल को तोड़ डालना चाहते हैं। वे उसके बँगले पर पहुँचे। मन में भारी उत्साह था। वे रेखा के स्वस्थ शरीर की महक सूँघ चुके हैं। वे रेखा को अपनाना चाहते हैं। यह सच बात है। मन का झूठा भ्रम नहीं है। ऐसा जान पड़ा मानो दिल में कोई कह रहा है—रेखा उनके योग्य है—उनके मन की सही तसवीर! यदि समाज सुविधा दे दे, तो वे रेखा को फुसला कर अपने साथ रख लें। यह उसका अपना स्वार्थ है। माना कि रेखा को बात स्वीकार न हो, तो क्या होगा? तब बात अधिकार से बाहर लगी। लेकिन यह जानकर कि रेखा उदार है, मन झुकाव हो गया। सब संभव है।

बँगले पर पहुँच कर ज्ञात हुआ कि रेखा अभी तक लौटकर नहीं

आई है। वह लता के यहाँ रह गई है वे अब उलझन में पड़ गये। बात सुलझाने के लिए टेलीफोन उठाकर नम्बर मिलाया।

लता ने 'रिसीव' किया।

"मिस लता!" मिस्टर सिंह बोले।

"जी?"

"रेखा है।"

"अभी भेजती हूँ।"

"............"

कुछ देर टेलीफोन में एक अजीब शोरगुल होता रहा। एकाएक एक भारी शब्द सुनाई पड़ा, "आप है!" रेखा की आवाज गूँज उठी।

"तुम घर नहीं लौटोगी?"

"दिनेशचन्द्रजी कहाँ हैं"

"होटल चला गया है।"

"कोई नया सबक पढ़ाया है? सच बात यह है मिस्टर सिंह कि मैं अब जरा खटके से चौकन्ना रहना सीख गई हूँ।"

रेखा ने टेलीफोन का 'रिसीवर' रख दिया था। टन्न से घंटी बज उठी। बात सच थी।

यह कैसा मजाक़ रहा। मिस्टर सिंह चुपचाप खड़े रहे। इसे अपनी भूल स्वीकार कर ली। इस तरह उनका चला आना अनुचित बात थी। रात हो आई है। रेखा तो स्वतन्त्र है। उस स्वतन्त्रता को बदमाशों की तरह लूट लेने की चेष्टा करना अनुचित बात है। यह बौद्धिक डकैती सही नहीं थी। लता न जाने क्या सोच रही होगी! उसका सन्देह पुष्ट हो सकता है। दिनेश यही कहता है कि उनका रेखा के इतने नज़दीक़ पहुँचना ठीक बात नहीं है। नारी से प्रेम करके उसकी भावुकता को बाँध लेना एक ग़लत धन्धा है—सही रुकावट नहीं।

टेलीफोन की घण्टी बजी। लता बोल रही थी, "जीजी सिनेमा जा रही है।"

"सेकिंड शो में?"

"हाँ, क्या आप चलेंगे?"

"मैं!"

"दिनेशजी के होटल का नम्बर पाँच, सात, नौ है। उनको फोन कर दें। जीजी कहती है।"

"क्या दिनेश को?" आश्चर्य से मिस्टर सिंह बोले।

"क्या वे नहीं आवेंगे?"

"शायद!"

"तब व्यर्थ 'रिंग' क्यों किया जाय!"

मिस्टर सिंह को कोई उत्तर नहीं सूझा। यह रेखा क्या चाहती है। यह सिनेमा जाना उसी के अपने मन की बात नहीं है। अनुरोध-सा करती है। उनको जाना चाहिए या नहीं। अभी रेखा तो कुछ और बात कह रही थी। वह अब दूर रहने की ठान चुकी है। तब साथ जाना अनुचित होगा। दिनेश और रेखा, दोनों उनको सावधान किया करते हैं। दिनेश बार-बार कहता है कि बुद्धि पर निर्भर रहो। रेखा उसकी सब बातें चाव से सुनती है। जब से दिनेश आया, वे किसी बात पर अधिक विचार नहीं कर पाते हैं। वह बिना दिनेश की राय लिये अब कुछ निश्चय नहीं करेंगे।

"आप क्या सोच रहे हैं?" अब रेखा का सवाल था।

मिस्टर सिंह उलझन में बोले, "मिस रेखा!"

"हाँ, मैं ही हूँ 'काली नागिन'! आपके दोस्त ने आपको छोड़ दिया है—बहुत-बहुत बधाई!"

"दिनेश ने ! बात क्या है रेखा ?"

"क्या क्लब में कुछ नये सबक पढ़ाये हैं ?"

"नहीं तो ।"

"नहीं ! यह बड़े आश्चर्य की बात है। कोई सलाह नहीं दी है। आप अपनी राय से आये हैं न ?"

"रेखा !"

"सिनेमा देखने चल रहे हो ?"

"मैं ?"

"हाँ, तुम ।"

"मैं रेखा ! तुम क्या चाहती हो ?"

"लता कहती है ।"

"लता !"

"उसी का प्रोग्राम है ।"

"तब कोई षड्यंत्र रचा गया है ।"

"आप तो अफ़सर हैं। फिर आपको क्या डर है ?"

"फिर भी·········।"

"तो आप नहीं आना चाहते हैं !"

"दिनेश को·········।"

"उनका साथ रहना जरूरी है। तब फिर सही।"

रेखा ने 'रिसीवर' रख दिया था। मिस्टर सिंह अवाक् खड़े रह गये। अभी तक फोन उसी भाँति कान पर लगा हुआ था । आखिर उन्होंने रिसीवर रख दिया। कमरे में इधर-उधर देखने लगे। सामने दीवार पर रेखा का बचपन का फोटो टंगा हुआ था। उसे देखा । फिर कुछ सोचकर फोन का नम्बर मिलाया। घण्टी बजने की आवाज़ कान में पड़ी। घण्टी बजती ही रही। अब कोई बोला, "हलो ?"

"शीला ?"

"जी।"

"लता है। मैं हूँ.........!"

"नमस्ते, बुलाकर लाती हूँ।"

कुछ देर बाद शीला आकर बोली, "वे सिनेमा चली गई हैं।"

"किस ?"

"मालूम नहीं है।"

"अच्छी बात है।"

आधी रात को दिनेश की नींद टूटी। वह उठ बैठा। उसे बड़ी हंसी आई। उसका भीतरी पुरुष उसे बार-बार धिक्कारता था कि क्या यही उसका सही रूप है। एक साधारण नारी के कारण उसकी नींद तक उचट गई। क्या यह लता के लिए कमजोरी है ? वह उस लड़की के व्यवहार से अचरज में पड़ गया। वह जरूर वेश्या होगी। उसे नारी के बारे में एक सरल विश्वास था कि वे जीवन में परेशानी का वातावरण लाती हैं। नारी की यह निर्बलता सबल बनकर पुरुष को जीत लेती है। इसी लिए रेखा पर वह कुछ नहीं सोचता है। क्या उसे रेखा की 'मोती लगी नथ' पर कुछ शक है ? या वह नारी-भूख भली भाँति पहचानता है। दिनेश बाहर कितना ही बच कर चले, उसका हृदय यदा-कदा नारी के लिए पिघल जाता है। सोचता है कि कोई नया ढांचा अब गढ़ेगा। वहां किसकी परछाई होगी, नहीं जानता है। क्या लता इसी लिए असावधान रहा करती है ? दिनेश रेखा से साफ़ बात क्यों नहीं पूछ लिया करता है ! रेखा सबल पुरुष की आड़ चाहती है। वह पुरुष मिस्टर सिंह ही हैं। उनके पीछे समाज में बदनामी नहीं है।

कारण, मिस्टर सिंह गृहस्थ हैं। यदी कोई आवारागर्द लड़का रेखा के यहां आना-जाना शुरू करदे, रेखा के चरित्र पर रोज नई-नई बातें समाज के बीच चालू होते देर नहीं लगेगी। दिनेश से-कोई सवाल करे—तुम रेखा के साथ जाना चाहते हो। वह क्या उत्तर देगा? वे दोनों साथ-साथ कहाँ चले जावेंगे! रेखा भी नहीं जानती होगी। क्या रेखा के मन में किसी अज्ञात व्यक्ति के लिए बेचैनी बढ़ रही है? वह अभी उस व्यक्ति को खुद नहीं पहचानती है। मिस्टर सिंह तो उस व्यक्ति के समीप पहुँचाने के लिए सहारा-मात्र हैं। वह अकेली उस व्यक्ति तक नहीं पहुँच पावेगी। रेखा घटनापूर्ण नारी है। उसके चेहरे पर एक कठिन मुस्कान का भाव है। उसकी आंखों के नीचे उभरी हड्डियां भले ही सुन्दर लगती हैं, उनमें दुःख की स्पष्ट छाप है। पहले उसका चेहरा ऐसा नहीं रहा होगा! उसकी आंखों में एक तत्व है। वह रोजाना व्यवहार पहचानती है। वह सब कुछ जानती है। अपने हृदय की भावुकता से ऊपर उसका ज्ञान है। अपने ज्ञान से वह अपने को धमकाया करती है। कभी बेचैनी में अपने ईर्ष्यापूर्ण अंगोंकी अन्य अंगों से तुलना करती रहेगी। वह उन नारियों में नहीं है, जो अपने हृदय परक कड़ बिछा कर, उसे कूटने के लिए पुरुष को सौंपती हैं। बाहरी असर से रेखा अलग रहना चाहती है।

घना अँधियारा था। वह रमणी कहीं सो गई है। रेखा पर सोचकर, लता की रक्षा नहीं होती है। वह मकड़े की तरह उन दोनों नारियों के चारों ओर जाला बुन रहा था। यदि कोई सावधान लगती, वह चुपके दूसरी ओर झूल जाता है। वह महीन तार मकड़े के शरीर से निकलता है। मकड़ा तारों का जाला बुनता है मकड़ी वहाँ आती है। आखिर एक दिन मकड़ी अपने नर को खा डालती है। यह तो बीभत्स व्यापार है। क्या मकड़ा इससे अनजान है? जानता है तो

ऐसा जाल क्यों नहीं बुनता कि अपनी रक्षा कर सके। या वह अपनी रक्षा नहीं चाहता है? मकड़ी के मातृत्व की आकांक्षा के सुख में वह सब परिस्थिति भूल जाता है। वह मकड़ी चुपके अपने नर को मार डालती है। यह पति के प्रति उसकी कैसी उदारता है? पशुओं में भावना होती है। छोटे-छोटे रेंगते हुए कीड़े 'नर-मादा' के रूप में साथ-साथ खेला करते हैं। इन्सान के बीच यदि यही कानून चलता तो क्या होता? क्या वह मकड़ियों की जाति वाला न्याय अपनी नारी को नहीं सुझाना चाहता है? नारी जानकर चुप रहती है। यह उसका अनुचित मोह है।

इस रेखा को सब जानते हैं। उसका चरित्र है। उस पर वाद-विवाद उठा करता है। यदि वह सामर्थ्यवान् नहीं होती, उसके चरित्र के साथ समाज उसे नष्ट कर डालता। सदा से समाज के पुरुषदल में नारी-शरीर की चाह रही है। वह भेद की बात नहीं है। उस शरीर का विवाद बढ़ जाय तो वह जूठा हो जाता है। समाज तुरन्त उस पर उँगली उठाया करता है। लड़कियों का चरित्र होता है। लड़कों को चरित्र पर बल देना सिखलाया जाता है। जब लड़की पुरुष के समीप पहुँचती है, उसके चरित्र की आलोचना शुरू होती है। किसी को उस चरित्र पर विश्वास नहीं रह जाता है। यह लड़कियों का भाग्य? वे आज इसका निपटारा चाहती हैं। कुछ हो जाय, उनको मान्य होगा। अपनी आलोचना से ऊब गई हैं। वे अपना न्याय स्वयं कर लेना चाहती हैं। पुरुष से अधिकार नहीं माँगेंगी। अपना बल जमा कर रही हैं कि पुरुषदल के खिलाफ बगावत कर दें।

दिनेश उस कमरे की चटखनी खोलकर, उस लड़की से सही बातें पूछ सकता तो नारी-अपवाद सुलझाना सहज हो जाता। यह उसकी चाहना थी। वह उस लड़की का मूल्य पहचानता है। यह कोई संदेह

की बात नहीं है। वह उसके लिए जाल बिछाने की चाहना नहीं रखता है। न उसे बंसी के द्वारा गंदे तालाब में मछलियाँ पकड़नी हैं। वह परिस्थति जानता है। वह भली भाँति उसे सँभाल लेगा। उस लड़की को भयभीत नहीं करेगा। ताकि वह अपनी बात सुना ले। वह उसका विश्वासपात्र बन जायगा।

उसने कपड़े पहन लिये। चुपचाप अपने कमरे का दरवाजा खोला। बाहर निकला। अब वह सड़क पर खड़ा था। आगे बढ़कर उस नये शहर में निरुद्देश्य घूमता रहा। उसका कोई खास ध्येय न था। नया शहर; वह उससे अपरिचित है। फिर भी इधर-उधर घूमता रहा। मन को एक कमजोरी दबोच रही थी कि वह व्यर्थ घूम रहा है। चुपचाप सूनी सड़कों पर जा रहा था। किसी से उसे मतलब नहीं है। दिल उचाट था। वह बिलकुल एकांत चाहता था। सोचता कि क्या वह इस शहर को नहीं छोड़ सकता है। अब तक की सब घटनाओं के लिए अपने को कसूरवार मान लेता है। क्या वह पागल हो गया है? मन में तीखा सवाल उठता था। वह आगे-आगे बढ़ता रहा। अब सँभल गया। देखा कि स्टेशन के सिगनलों की लाल-हरी रोशनियाँ चमक रही थीं। उसे कुछ उम्मेद हुई। रास्ता सुलझ गया। उसने जेब में हाथ डाला। लता के दिये हुए रुपयों में कुछ बच रहे थे। कोई गाड़ी आ रही थी। वह दौड़-दौड़ा स्टेशन पहुँचा। उसने एक टिकट लिया। गाड़ी स्टेशन पर खड़ी हुई। वह एक डिब्बे में घुस गया। देखा कि वहाँ एक गुजराती परिवार है—बच्चे और उसके माता पिता। पत्नी सो रही थी। बच्चा उससे सटा हुआ पड़ा था। पति बैठा हुआ ऊँघ रहा था। गाड़ी ने सीटी दी। दिनेश ने उधर एक भरी-पूरी नजर डाली। मन की गाँठ खुल गई। वह गाड़ी से नीचे उतरा। निश्चय किया कि अभी नहीं भागेगा। गाड़ी चली गई। अब वह

प्लेटफार्म पर टहलने लगा। वह एक 'लेमनेड' की बोतल मँगवाकर 'वेटिंग रूम' में बैठ गया।

"आप इस गाड़ी से नहीं जा रहे हैं?" एक कुली ने पूछा।

"नहीं, अब सुबह की गाड़ी से जाऊँगा।"

"तूफान सात बजे जाता है।"

"बाहर कोई ताँगा हो तो रुकवा लेना।" कहकर वह लेमनेड पीने लगा। अब कुछ स्वस्थ होकर बाहर प्लेटफार्म पर टहलने लगा। गाड़ी चली गई थी। चारों ओर सन्नाटा था। मन फिर फीका हो आया। उसने जान लिया कि आवारों की भाँति मारे-मारे फिरने में चैन नहीं है। वह स्टेशन से बाहर चला आया। आगे बढ़ता रहा। अब बाज़ार के बीच पहुँच गया। उस रात्रि में भी एक बाज़ार में काफी चहल-पहल थी। अजीब शोरगुल था। वहाँ वेश्याएँ रहती हैं। वह वहाँ नहीं ठहरा। उसका शरीर सिहर उठा। इस अनैतिक वातावरण से उसके सारे शरीर में छी-छी छी फैलने लगी। वह और आगे बढ़ गया। भीतर मन में उबकाई आ रही थी। वह एक पुलिया पर बैठ गया। उसने अपने मुंह के भीतर गले तक उँगलियाँ डालकर कै करने की चेष्टा की ताकि सारे मैल को बाहर फेंक दे। कै नहीं हुई। प्रयत्न व्यर्थ गया। उसे अपने इस नाटक पर बड़ी हँसी आई। उसने एक बार सब घटनाओं पर विचार किया। निर्णय किया कि वह सामाजिक जीव है। अपना बचाव उसके हाथ में नहीं है। रेल के सफरवाला टिकट जेब में पड़ा हुआ था। अब तक वह मीलों दूर पहुँच गया होता। वह दूर-दूर तक आँखें फाड़-फाड़कर देखता रहा। क्या पिछले दिनों की चन्द घटनाएँ सच थीं? यदि सच और सही हैं तो उसे समाज का नव-निर्माण करना पड़ेगा। जिस हालत में आज समाज है, उसे उसमें कमी मालूम होती है। उसमें नये विचार आने चाहियें। इस पर अधिक ध्यान देना ठीक

रहेगा। उसका दिमाग़ खाली हो गया था। उसमें कुछ पिछली तसवीरें भरी थीं। जिसे वर्तमान कहते हैं आगे उसका ढाँचा नहीं था। वह अज्ञेय भविष्य पर विचार करना चाहता है। वहाँ काली-काली आकृतियाँ दीख पड़ती हैं—बड़ी दूरी पर। अपनी पैनी दृष्टि से वह सब कुछ पहचान लेना चाहता है। भविष्य का हाल जान लेने की धुन में है। उस भविष्य पर कई उम्मीदें हैं। मौत भी वहीं है। लेकिन मौत तो वर्तमान-सी लगी। उसकी हर एक को जानकारी है। यह मन की असन्तुष्टता! वह रेखा के पास जायगा। उससे कहेगा कि बहुत परेशान है। शायद वह कोई उपाय निकाल ले। नारी पुरुष से अधिक समझदार होती है। लता के समीप पहुँचना असंभव है। उसके चारों ओर बीहड़ रेगिस्तान है। जब कि रेखा के चारों ओर घनी हरियाली है। वह केवल रेखा के पास जा सकता है और कहीं नहीं। लेकिन रेखा क्या समझेगी? उसे पागल तो नहीं मान लेगी। अन्यथा इस आधी रात को जाना? यह संभव है। यह उसकी तृष्णा नहीं है। साधारण एक चाह भर है। वह रेखा से क्या कहेगा? रेखा न जाने क्या समझ लेगी! रेखा उसे भली भाँति पहचानती है। रेखा सब कुछ जानती है। दिनेश की कोई बात उससे छिपी नहीं है। लता, रेखा और मिस्टर सिंह; इन तीनों के बीच की घटनाएँ दिनेश सुन चुका है। कहीं रेखा ने कुछ और समझ लिया? रेखा का अपना दृष्टिकोण है। वह रेखा को बहुत सावधान कर चुका है। रेखा धोखे में पड़ती जा रही है। तब क्या दिनेश का रेखा के लिए कोई स्वार्थ है! अन्यथा इस तरह रक्षा का सवाल नहीं उठता। वह उस रेखा के मार्फत लता को बूझ रहा है। तो......! दिनेश सँभल गया। वह किसे प्यार करता है—रेखा अथवा लता को? दोनों को या किसी को भी नहीं। वह बहुत निर्दयी जीव है। वह अपने भीतर बहुत शीतल है। मन से उफान

नहीं उठता है। कोई उत्साह नहीं है। वह अपने को बहुत बूढ़ा पाता है।

दिनेश ने फिर सोचा कि वह कहीं नहीं जायगा। होटल पहुँचकर सोवेगा। इतनी रात घूमना अनुचित है। तभी तीनों नारियों का झिल-मिल-झिलमिल खाका मस्तिष्क पर उभर आया। वह रेखा पर अटक जाता है। वह रेखा न जाने क्या सोचेगी ? न वह कुछ जानती है। रेखा के घर इस भाँति जाना उदारता नहीं लगी। वह उसका अपना बँगला है। वह स्वतंत्र है। उसके चारों ओर कँटीले तार होने पर भी दरवाजा खुला हुआ मिलेगा। वहाँ कोई इन्कार करने वाला नहीं है। लता का खयाल गलत लगा। वह वहाँ किसी हालत में नहीं जायगा।

वह रेखा के बँगले के पास पहुँच गया। फाटक के भीतर प्रवेश करने पर हृदय को एक कमजोरी ने दबाया। चारों ओर घना अँधि-यारा था। आधी रात ! वह चोर-डाकुओं की भाँति कहाँ जा रहा है ? एक और भय उठा कि वह रेखा से क्या कहेगा ? इसका कोई ठीक उत्तर नहीं सूझ पड़ा। वह रेखा के समीप पहुँच कर चुप रहेगा। रेखा हँसेगी तो नहीं। वह क्या समझेगी ? यह कैसा दाँव होगा ? वह कुछ नहीं कहेगा। वह लौट क्यों नहीं जाता है ? आखिर निश्चय किया कि वह रेखा से कहेगा—मैं अनजाने वह यहां चला आया हूँ ! अब जा रहा हूँ। तुम कुछ अन्यथा न समझ लेना। मुझे आना था, चला आया।

चारों ओर सन्नाटा था। रेखा सो रही होगी। वह उस रेखा को जगाना चाहता है। अब लौट कर नहीं जायगा। वह जगावेगा। रेखा उठेगी। बाहर चौकीदार ऊँघ रहा था। वह उससे बोला, "मेम साहब है।"

"आप ?" वह बूढ़ा दिनेश को आश्चर्य से देखने लगा।

"मैं उनका रिश्तेदार हूँ। अभी गाड़ी से आया हूँ। सामान स्टेशन पर छोड़ दिया। सुबह किसी आदमी को भेजकर मँगवा लेना।"

चौकीदार सकपकाकर बोला, "आप बैठें। मैं दाई को जगाता हूँ।"

दिनेश चुपचाप खड़ा रहा। नाटक का प्रारम्भ हो गया था। कुछ देर के बाद गोल कमरे में रोशनी हुई। रेखा का स्वर सुनाई पड़ा। रेखा बाहर आई। दिनेश को देखकर बोली, "आप! आइए, मैं अभी सोच रही थी कि......।"

चुपके दिनेश भीतर चला गया। रेखा सोफा पर बैठी। दिनेश खड़ा ही रहा। रेखा मुस्कराते हुए बोली, "आप आये यह ठीक ही हुआ, अब बैठिए। आप तो खड़े ही हैं।"

दिनेश ने रेखा को देखा। अभी तक रेखा के शरीर से आलस्य टपक रहा था। वह विचित्र-सी खिली हुई लग रही थी। वह कैसा सवाल पूछ रही थी। वह क्या उत्तर दे? रेखा बात ताड़ कर बोली, "पहले-पहल आप झिझक बरत रहे हैं। यहाँ से तो आप परिचित ही हैं। आप मुझे न जाने क्या समझ रहे होंगे? आप मेरे मेहमान हैं। मेहमान की खातिर करना फर्ज है। कहाँ से चले आये हो? मैं तो समझी थी कि न जाने कौन हजरत टपक पड़े हैं! यहाँ डाकगाड़ी आधी रात को पहुँचती है। अकसर उससे मेहमान टपक पड़ते हैं।"

"मैं सच ही स्टेशन से आ रहा हूँ।"

"स्टेशन से?"

"टिकट लेकर गाड़ी पर चढ़ा था। फिर उतर आया हूँ।" कहकर दिनेश ने जेब से टिकट निकाल कर रेखा को दिया।

रेखा ने टिकट ले लिया और स्टेशन का नाम पढ़ने लगी। पढ़कर सावधान होकर बोली, "बड़ी दूर भाग रहे हैं। बिदा लेने आये हो। न आते ठीक था! वहाँ क्यों जा रहे हो?"

"अब नहीं जाऊँगा।"

"नहीं जाओगे ?"

"हाँ!"

"तब टिकट क्यों लिया है ?"

"उस समय मैं वहाँ से दूर भाग जाना चाहता था।"

"अकेले ?"

"हाँ?"

"मैं तो समझी थी कि लता को साथ ले जाओगे।"

"लता को ?"

"आपकी चिठ्ठी और इस तरह स्टेशन जाने से यही शक पड़ता है।" कहकर रेखा मुसकराई। बोली फिर, "लता नहीं आई होगी। वह डरपोक है। मैं होती तो ऐसा मौक़ा कभी न चूकती।"

"मैं अकेला ही जा रहा था। लता कुछ नहीं जानती है।"

"नहीं जानती ?" रेखा आश्चर्य से बोली। कहा, "तब यह आपका भारी अन्याय था।"

"अन्याय ?"

"मैंने आपकी लता के नाम लिखी चिठ्ठी पढ़ी है।"

"आपने वह चिठ्ठी पढ़ी है ?"

"लता सलाह लेने आई थी।" कहकर रेखा उठी और दूसरे कमरे में जाकर, वहां से चिठ्ठी उठाकर ले आई। अब बोली, "यही तो है न ?"

"हाँ।"

"उसके बाद यह सब तैयारी देखकर भला कोई क्या समझता ? और यह है आपके होटल का बिल !"

"बिल ?"

"लता के यहाँ फ़र्श पर पड़ा हुआ था। आपका नाम पढ़कर मुझे कौतूहल हुआ। यह सोचकर कि कभी आप सबूत माँगेंगे तो दे दूंगी, साथ ले लिया। यह बात लता ने मुझसे नहीं कही कि वह बिल वहाँ कैसे आ गया है। लेकिन मैंने देखा था कि आपने यह उसे दिया है। मुझे चिट्ठी पढ़ने का कोई उत्साह नहीं था। वह खुद लाकर दे गई। उसी ने पढ़ने के लिए जोर दिया। मेरी समझ में कुछ नहीं आया। आप न-जाने क्या-क्या बातें लिखा करते हैं।"

"रेखाजी!"

"सुनिए, अभी कोई चुपके मेरे कान में कह रहा था कि आप भाग रहे हैं। शायद मिस्टर सिंह का स्वर था। मेरी नींद टूट गई और सचमुच ही आप आ पहुँचे।"

रेखा के चेहरे पर बच्चों वाला सादापन फैल गया, जो कि किसी खिलौने के छिन जाने पर बच्चों के चेहरे पर आ जाता है।

"मेरा इस तरह आना अनुचित बात थी। इसी लिए क्षमा माँगे लेता हूँ।"

"इस तरह आप आवेंगे, यह उम्मेद मुझे सदा रही है। आप असमय आना जानते हैं। आप तो निडर हैं। फिर आज आपको भयभीत क्यों पा रही हूँ?"

अब दिनेश ने सब कुछ कह सुनाया। वह पांचू! वह युवती!! रेखा सुनकर दंग रह गई। क्या यह सब उसे ही सुनना था? वह क्या सुन रही है? सब कुछ सुना लेने के बाद दिनेश बोला, "यदि उस लड़की का चेहरा एक बार देख लूँ, तो उसे पहचान सकता।"

"एक बार देखकर?"

"उसे कुछ-कुछ पहचान लूँगा। उसके चेहरे की बनावट, आंखों

की भावना और बातें करने का ढंग जानकर पहचान लेने में अधिक देरी न लगेगी।"

"तब क्या आप मुझे पहचानकर ही यहां आये हैं?"

"मैं?"

"यह ठीक-सा सवाल पूछ रही हूँ, न?"

"हाँ आपका सही सवाल है। आपकी जगह पर लता होती, तो मैं आने का साहस न करता। आप किसी गृहस्थ में ही होतीं, वहाँ पहुँच जाता। कोई हिचक मन में न उठती। यद्यपि वह अनुचित बर्ताव होता! आप परिस्थिति सँभाल लेती हैं। वहाँ मुझे अपनी गलती पर भौंचक्का खड़ा रहने का मौक़ा नहीं आता।"

"तब आप लता के विश्वास से क्यों खेल खेल रहे हैं?"

"नहीं तो! लता पर मैं कुछ नहीं कहूँगा।"

"क्या सब कुछ कह लेने के लिए मैं ही बची हुई हूँ। जैसे कि सब सुनने का ठेका ले लिया है। उधर मिस्टर सिंह हैं। वे कुछ न कुछ कहते रहते हैं। आपने भी बहुत-सी बेकार बातें कह लेनी सीख ली हैं। और कोई होती......"

"क्या रेखा जी?"

"आपने हमारी उस दिन की बातें नहीं सुनी थीं।"

"किस दिन की बातें?"

"शायद आप भूल गये हैं। आपने मेज पर पड़ा हुआ कार्ड पढ़ा था। उसके बाद चुपके आपने हमारी बातें सुनी हैं। आप इस भांति अपना अधिकार क्यों बढ़ाना चाहते हैं। मैंने अपने जीवन में छान-बीन करने की कोई प्रार्थना आपसे नहीं की। मैं सारी बातें जानकर चुप रहा करती हूँ। आज मेरा आप के लिए वही पिछला आदर है। अच्छा

आप तो चेहरा पढ़कर मनुष्य को पहचान लेते हैं। मुझे आपने क्या पहचाना है ? कुछ तो बता दीजिए।

"मैं ! नहीं तो।"

"आप कह रहे थे कि एक बार देखकर उस लड़की को पहचान लेंगे और अभी फिर ?"

"तो कह दूं कि आप सुन्दर हैं, गम्भीर हैं और काली बिल्ली की तरह चतुर हैं। दिल साफ है। वहां मैल जमा रखने की आदत नहीं है।"

"लता ?"

"बच्चों की भांति सरल है।"

"क्या ?"

"उसे समझ लेने की चेष्टा मैंने नहीं की। क्या इसका कारण आप स्वयं नहीं जानती हैं ?"

"मैं इतना समझ पाई हूँ कि आप पर उसका प्रभाव है।"

"प्रभाव ?" दिनेश हँस पड़ा।

"क्या आपकी यह धारणा कि नारी का सुन्दर होना उसकी मानसिक दुर्बलता को बढ़ा देता है, सच है ?"

"किसने कहा ?"

"आपके दोस्त मिस्टर सिंह ने।"

"मिस्टर सिंह ने"

"वे किसी के पक्ष का समर्थन नहीं करते—न आपका, न मेरा; कोई बात मुझसे नहीं छिपाते, इसी लिए कह देते हैं।"

"यह आपके सौभाग्य की बात है।"

"क्या ?" अनायास रेखा के मुंह से निकला। वह सँभली। उसकी आंखें पूर्ण खिल उठीं। सौन्दर्य निखर आया। मन ही मन दिनेश ने

सोचा कि रेखा कितनी सतर्क है। रेखा कुछ और पूछ लेना चाहती है। यदि वह सवाल करेगी, तो वह क्या जवाब देगा? कुछ नहीं न?' रेखा ने बात उठाकर अपने पक्ष का समर्थन किया है।

रेखा फिर बोली, "गुलाम खरीदनेवाले युग की बात कह रहे थे न?" गम्भीरता हट गई। एक सरल मुसकान चेहरे पर फैल गई।

"गुलाम! हां, मिश्र की महारानियों तरह।"

"तब सच बात कह दूं? तुम सब जानते हो ही। मिस्टर सिंह आकर कहते हैं—तुम मुझे परेशान करती हो रेखा। सिर्फ आपको भेजने के लिए वे मुझसे फोटो मांगकर ले गये थे। मैंने जानकर मना नहीं किया। आपने आकर बिना समझे-बूझे उनके पक्ष में वकालत शुरू कर दी। मैंने कई बार चाहा कि मिस्टर सिंह से कह दूं—मैं पिशाचिनी हूँ। तुम कहां जानते हो? तुम उन पगलीं भावनाओं का अनुमान नहीं लगा सकते, जो सदा मुझे घेरे रहती हैं। मैं स्वयं उनको नहीं पहचान पाती। फिर भी चुप रहती हूँ। क्या तुम वह सब जानकर आज मेरे पास आये हो? नहीं, तुमको मेरा भय नहीं है। मैं यह चाहकर कि मिस्टर सिंह की परेशानी न बढ़ाऊँ अपने को असमर्थ पाती हूँ। मुझे अपनी करतूतों का बहुत पछतावा होता है। क्या आप सब कुछ नहीं जानते?"

"मैं?"

"मिस्टर सिंह ने आपसे मेरी एक-एक बात कही है। आपने तो मेरे फोटो की पीठ पर लिखकर भेजा था—जादूगरनी! वह मैंने पढ़ा है। आपका स्वभाव जानकर बुरा नहीं माना। मिस्टर सिंह आपसे मेरी कोई बात नहीं छिपाते। कभी कुछ बातें चोट करती हैं। मैं मुरझा जाती हूँ। दिल में बुराई नहीं बटोरती। पुरुष के विश्वास को अपनी चाहना से मिटाकर मौन रहा करती हूँ।"

"तब तो मिस रेखा, मैं माफी का हकदार हूँ। जो बात मैंने लिखी वह साधारण मजाक़ थी। मैंने वह फोटो इसी लिए लौटा दिया था। मैं चाहता, उसे अपने पास रख सकता था। मैंने यह नहीं किया।" कह कर वह चुप हो गया।

दोनों चुपचाप रहे। दिनेश ने सोचा कि वह उस रेखा पर किसी घरेलू सामान की तरह राय नहीं देगा। रेखा वैसा ढांचा होती, तो वह उसे अपने होटलवाले कमरे में 'हैट-स्टैंड' की भाँति खड़ा कर देता। रेखा हाड़-मांस की बनी है। उसमें प्राण है। उसे रेखा में कोई अहमता नहीं मिलती। वह शायद सही बात की व्याख्या के बाद कुछ ज्यादा नहीं सोचती है। निरर्थक सवाल नहीं करती। किसी अज्ञात पुरुष पर एकाएक रहम नहीं करेगी। यह सब उसने व्यर्थ का झगड़ा फैला दिया है। वह क्यों किसी के बीच खड़ा हो जाय? अपने व्यक्तित्व के लिए किसी की आड़ नहीं चाहता। यह अपने दिल में नारी को साधारण जगह नहीं देना चाहता है। कारण कि वह जल्दी प्यार करने लगती है। अधिक देर तक अपनी कोमल भावनाओं को छिपाना नहीं जानती। वह प्यार स्वस्थ नहीं होता है। तो क्या वह एक कठोर सत्य की भांति लता को प्यार करने लग गया है। रेखा यही समझती है। वह दुनिया में फैली चीजों के प्रति मोह नहीं बटोरता और उसके पास ऐसी कोई वस्तु नहीं बची है, जिसे रेखा मांग लेने का ढाढ़स कर सके! एक झूठे सवाल ने उसे घेर लिया। लता के प्रति एक पगली भावना-वाला सवाल उसके मन में उठता है—शरीर का लुभावना आकर्षण! यद्यपि उसे लता को अपनी बाहों में समेट लेनेवाला उत्साह नहीं है; वह अपने इस अधिकार की मांग नहीं करना चाहता है। वह जानता है कि वह किसी 'अज्ञात' को प्यार करता है। क्या वह 'अज्ञात' लता ही है? आज तक उसने अपने चरित्र में आत्मश्लाघा की भावना नहीं

पाई। आज वह लाचार हो जाता है। हर एक बात सम्भव लगती है। अचैतन्य भावना की शृंखलाओं को वह अलग और दूर हटाने की धुन में है। किसी 'अज्ञाता' के लिए वह इतना उतावला क्यों हो रहा है ? वह नारी को दुरूह जानकर डर जाता है। यदि इस वक्त लता सामने होती, तो वह कह देता—तुम पर मैंने कभी कुछ सोच लेने की चेष्टा नहीं की है लता। रेखा याद न दिलाती, तुमको भूल गया था। हृदय में पीड़ा का होना पहचानकर भी उपचार नहीं करता हूँ। प्राकृतिक बातें स्वस्थ होती हैं, बाकी अस्वस्थ ! मैं तुम्हारी संभव सुन्दरता को पहचानता हूँ।

"नींद आ रही है क्या ?" रेखा बोली।

"नहीं तो ?"

"और दिनेशजी, मैंने कभी मिस्टर सिंह को चोट पहुँचाने की कोशिश नहीं की। आपकी उन सारी दलीलों ने मुझे सबल बनने में बल दिया है। अब वह सब बातें बिसार चुकी हूँ।"

फिर दिनेश चुप रहा। भीतर मन में एक हल्ला शुरू हो गया था। क्या वह उस होटलवाली युवती को आसानी से नहीं पा सकता है ? उह होटल के अस्तित्व में दिनेश का अधिकार है कि वह उस लड़की को प्यार करे। होटल के रोजाना जीवन में वह लड़की भाग लेती है। दिनेश ने इसे अपना घमंड स्वीकार नहीं किया। वह अभी बहुत कमज़ोर है। लता से डर जाता है। वह लता को बलवान मान लेता है। होटलवाली लड़की निर्बल है। आर्थिक कारणों से पुरुष की दासता स्वीकार करती है। अपने व्यक्तित्व को अंधेरे में छिपाकर चुपचाप आधी-आधी रात को आया करती है। वह भी रेखा के यहाँ आधी रात को छिपकर आया है। इधर-उधर फिरकर थका हुआ है। यहां विश्राम लेने चला आया। उस लड़की और दिनेश में क्या

अन्तर है? वह नासमझ लड़की किसी की विशाल बाहों में चुपचाप सो गई होगी। लेकिन दिनेश यहाँ असहाय बैठा हुआ है। एक नारी के सम्मुख अपनी हार स्वीकार कर चुका है कि वह भाग रहा था। अकसर नारी उसके बहुत समीप आई है। उसने उसे छूकर देखा है। आज वह मदारी के खेलवाला रोजगार करने पर तुल गया है। भले ही वह असंभव हो। आज वह रेखा अनजाने लता को उसे सौंप रही है। वह उसे समझा देना चाहती है कि दिनेश ने अपने दिल में लता के लिए जगह बना ली है। दिनेश स्वयं इस बात को नहीं समझ पाता; जीवन के अवसरों की बड़ी ढेरी में से वह किसी ख़ास यादगार को ऊपर नहीं उठाना चाहता है। वह यह सावधानी नहीं बरत सकेगा। अब वह बोला, "मिस रेखा!" देखा कि आँखें उसी पर टिकी हुई थीं। वह चुप हो गया। कुछ कहना चाहकर उस टकटकी वाले वर्ताव में उलझ गया।

रेखा पैनी हंसी हंसते हुए बोली, "दिनेशजी, आप अपने व्यवहार में झूठी आकृतियाँ बना लेना भली भाँति सीख गये हैं। जैसे कि आपका मन तथा उसकी कुछ भावुकतावाले उफान ही, आपकी अपनी दुनिया हो। जब मन में आया चले आये और वैसे ही चले जायंगे। आपका यह थोथा व्यक्तिवाद बहुत खोखला लगता है। लता आजकल उलझन में पड़ी हुई है कि आप उसके सही प्रेमी हैं या नहीं! उसने अभी तक मुझे कोई इशारा नहीं किया है। लेकिन जब पूछेगी, कह दूंगी कि आप अच्छे 'गुलाम' बन सकते हैं।"

"रेखाजी!" दिनेश सावधान हो गया।

"मेरे घर पर आने से पहले आपने वह बनावटी पर्दा हटा दिया है। यह मेरे लिए खुशी और सन्तोष की बात है।"

"आपने ग़लत समझा है।"

क्या कहा ?"

"कोई व्यक्ति अपना पर्दा नहीं हटा सकता। व्यक्ति की अपनी कुछ खास बातें होती हैं, जिनको वह संवार कर रख, आजीवन उनकी व्याख्या करता रहेगा। समाज का कल्याण इसी में है कि वे व्यक्तिगत बातें छिपी रहें। आज के कच्चे समाज में उस बोझे को उठा सकने की सामर्थ्य नहीं है।"

"आपका कहना ...."

"आपने जिस भाँति लता पर सोचा, वह आपका एक नारीवाला दृष्टिकोण है। वह आपके अपने मन की 'आकांक्षा' है।"

"हर एक व्यक्ति यही दलील करता है।"

"मैं उन सबसे सहमत हूँ।"

"मिस्टर सिंह स्वयं यही कहते हैं।" कहकर रेखा गुलाबी पड़ कर चुप हो गई।

अब दिनेश कुछ नहीं बोला। रेखा उसे बहका रही थी। वह रेखा को भली भाँति पहचान गया है। लेकिन आज दिनेश अपने जीवन में कहीं एक भारी कमी पा रहा था। वह रेखा सारी बात को न फैलाकर उसको टुकड़े-टुकड़े करके लुटा रही है। वह एकाएक अपने को जीवन के चौरस्ते पर खड़ा पाता है। चार चौड़ी सड़कें देख पड़ती हैं। रेखा है और उसका स्वस्थ शरीर, लता है और उसके प्रति रेखा का सुझाया कथित प्रेम, होटल है और नारी की नम्रता और चौथी राह है उसकी जीवन तथा समाज से विमुखता ! रेखा यदि पूछे कि वह क्या चाहता है ? वह तुरन्त कह देगा कि, रेखा : मैं अनाचारी और कामुक व्यक्ति हूँ। अब तुम सदा के लिए मुझसे डरते रहना। मैं हिंसक पशु हूँ, जिसे अपनी खुराक कहीं न कहीं मिल जानी चाहिए। इस रेखा का उस पर एक नैतिक विश्वास है। वह उसकी कई बातों से सहमत न होकर भी

उनको चुपचाप सुनती है। उसने रेखा को आधी रात में नींद से जगाया है। रेखा कुछ नहीं बोली। उसका आतिथ्य स्वीकार कर लिया। दिनेश एक साधारण नारी को ढूँढ़कर अपने घर में डाल लेना चाहता था कि युग-युग द्वारा सौंपा गया दासी का काम उसे भी सौंप दे। वह नारी उसकी गृहस्थी को देखेगी, उसे खाना खिलावेगी, घर को साफ़ रक्खेगी, चौका-बरतन करेगी और उसके ख़ानदान को चालू रखने के लिए बच्चे जनेगी। लेकिन इस रेखा का अपना असाधारण व्यक्तित्व है। यह उसके घर में दासी बनकर रहना कदापि स्वीकार नहीं करेगी। वे दोनों एक दूसरे को तोल रहे हैं। नारी के भीतर एक शक्ति होती है और पुरुष उसकी असमर्थता से खेला करता है। नारी जब जान पाती है कि वह अब देवी से माँ बन गई है तो उसे अपनी सही शक्ति पर भरोसा नहीं रह जाता। समझदार से समझदार नारी पुरुष के व्यक्तित्व से झगड़ा करती है। उसके पास पड़ा रहना उसकी बेबसी है। यह रेखा उस सिद्धान्त से बाहर नहीं है। वह उसके बहुत पास आ गई है। छेद-छेदकर उससे सारी बातें उगलवा लेना चाहती है। क्या वह आज अपनी सब बातें कह देने के लिए ही आया है?

रेखा ऊँघ रही थी। वह उसे सोई हुई नहीं देखना चाहता है। वह उद्भ्रांत हो उठा, भरमा गया। वह बहुत उतावला बन गया था। रेखा सोफा पर एक ओर सिर टिकाकर अब गहरी-गहरी साँसें ले रही थी। वह वहाँ व्यर्थ बैठा हुआ था। वह चला जायगा। अब उसका अधिक रुकना अनुचित होगा। वह बहुत थक गया है। होटल में पहुँच कर चैन से पड़ा रहेगा।

"बीबी, बाहर दरवाज़ा बन्द कर दूँ। सोने का क्या इन्तजाम होगा?" नौकरानी आकर बोली। रेखा की कच्ची नींद टूट गई। वह

दिनेश से इस बात का समाधान चाहती थी। वह इस भाँति वहाँ चुपचाप बैठा है। वह क्या कहे? बोली, "दाई पानी ले आना।"

नौकरानी चली गई। दिनेश चुपचाप उठा और बोला, "आप सो जावें, मैं जा रहा हूँ।"

रेखा ने दिनेश की ओर देखा। कहा, "बैठिये, मैं निकाल थोड़े ही रही हूँ। आप इस तरह क्यों भाग रहे हैं? घर के नौकरों के आगे मुझे अधिक अपमानित न कीजिए।"

दिनेश अब अपनी भूल समझकर चुपचाप बैठ गया। बोली रेखा ही, "मुझे नींद आ गई थी, आप जगा लेते।"

"चार बज गये हैं। सारी रात कट गई।"

"आपने एक 'मेलोड्रामा' के नायक का पार्ट अदा कर दिया है। भला यह कैसे मालूम होता कि आप इस तरह चुपचाप भाग रहे थे।"

"मैं भाग रहा था!"

"हाँ, पूछना भूल गई कि क्यों भाग रहे थे।"

"मैं नहीं जानता।"

"नहीं जानते हो न?"

"........."

"कोई समझदार व्यक्ति इस तरह नहीं भागता। समाज से भागकर जाने से अच्छा यह होता कि आप उस कारण को मूल से नष्ट करने के हथियार बन जाते। आप शरीफ घराने की उन औरतों की तरह हैं, जो जब अजायबघर जाती हैं तो वहाँ की सब नग्न मूर्तियाँ काले परदे से ढक दी जाती हैं।"

"क्यों?"

"इसीलिए कि उनको देखकर कहीं वे 'हिस्टीरिया' के दौरे की शिकार न हो जायँ। आपने एक असहाय नारी की नग्नता देखी, आपको 'दौरा' पड़ा और भागने की सूझ गई।"

"आपने यह इतनी शिक्षा कहाँ पाई है रेखाजी ?"

"तुम लोगों से।"

"हमसे ?"

"आप के दोस्त मिस्टर सिंह अक्सर कहते हैं कि वे किसी दिन रात को चुपके से आ, सोते से जगाकर कुछ कहेंगे। मैं उस नग्नता को जानकर चुप रहा करती हूँ।"

"लेकिन हर एक खुशी का नग्न रूप सदा से भद्दा चला आया है।"

"यह झूठ है। मैंने किताबों में पढ़ा है कि गुसलखाने में नहाकर एक ही तौलिए से यदि पति-पत्नी अपना शरीर पोंछते हैं, तो दोनों में झगड़ा हो जाता है। वह तौलिया दोनों के मन पर भद्दी परछांई डालता है। वैसी ही भावुकता आपने बटोर ली है।"

"क्या ?" रेखा की सारी बातों को बूझता हुआ दिनेश सवाल पूछने लगा। रेखा की राय पर और कुछ नहीं कहा।

"यह आपकी सिखलाई सीखों के बल पर कह रही हूँ। गुरु आप हैं। मैं आपके बताये रास्ते से गुजर रही हूँ। मिस्टर सिंह से कही हुई आपकी सारी बातों को तोलकर मैं आज यह कह रही हूँ।"

"तब सारी बात ठीक है।" कहकर, दिनेश उठा और बिना कुछ और कहे ही बाहर चला गया। इससे पहले कि रेखा सँभलकर कुछ कहे, वह चला गया था। रेखा हतबुद्धि, अवाक् बैठी की बैठी रह गई। यह दिनेश का अनुचित बर्ताव था। दिनेश कुछ नहीं कह गया था। एकाएक रेखा के मन में बात उठी—कहीं दिनेश

शहर छोड़कर तो नहीं चला जायगा ? लेकिन वह जानती थी कि दिनेश के मन पर लता की भारी परछाईं पड़ चुकी है। वह इस तरह चुपके से भाग नहीं सकता है।

नौकरानी पानी ले आई थी। रेखा ने गिलास ओठों से लगाया। घूँट-घूँट करके पानी पीने लगी। जब पी चुकी, बोली, "दाई दरवाजा बन्द कर दे।" चुपचाप उठकर सोने के कमरे में चली गई।

अब वह बड़ी देर तक सोचती रही कि यह उसकी हार थी या जीत! अपनी जिस बुद्धि का दिनेश को घमंड था, रेखा ने बार-बार उस पर कड़ी चोटें मारी थीं। लेकिन मन में वह अपनी हार स्वीकार करने लगी। ड्रामा के 'ड्रापसीन' से पहले चुपचाप दिनेश चला गया। उससे आज्ञा नहीं माँगी। साधारण व्यवहार तक भूल गया। आँधी के एक सबल झोंके की तरह आ, उसकी सारी शक्ति बटोर कर ले गया। रेखा बार-बार अपने से सवाल पूछती थी कि क्या वह दिनेश को प्यार करती है? सुबोध के व्यक्तित्व का भारीपन दिनेश में नहीं था। आज वह सुबोध के व्यक्तित्व से झगड़ा नहीं करना चाहती थी।

दिनेश बँगले से बाहर आया। अब सोचने लगा कि रेखा के समीप रहकर उसने क्या पाया है। रेखा ने कुछ नहीं पूछा। वह उससे कुछ कहता, तो वह अस्वीकार न करती। वह अभी यह मन का 'पाप' नहीं बिसार सका था। तब क्या उसका मन स्वस्थ हो जाता? रेखा चतुर नारी की भाँति अपने शरीर की हिफाजत करती है। वह सब बातों में दलील कर अपना पक्ष पूरा-पूरा आगे रखती है। पुरुष को लुभाने का उसे पूर्ण ज्ञान है। वह पुरुष का 'सवाल' जानती है। उसकी चाहना के प्रति उदासीन रहती है। दिनेश अब अपने व्यवहार

का विश्लेषण करने लगा। वह रेखा के पास गया था। अपने दिल का सारा भार उसे सौंप देना चाहता था। रेखा उसे देखकर भयभीत नहीं हुई थी। वह कायर की तरह भाग आया है। जिस हिंसा और भूख को वह जीवन में अपमान-सा पाता है, उसे तोड़ना चाहकर भी वह तोड़ता नहीं है। मानो उसके पिछले संस्कार उसे अशक्त बना देते हैं। उसे रेखा से स्पष्ट ही अपनी बात कह देनी चाहिए थी। सारी परिस्थिति के ऊपर उसे भरोसा होना चाहिए, अन्यथा रेखा अपनी शक्ति बढ़ाकर उसे नष्ट कर देगी।

वह सोच रहा था कि लता को चिट्ठी लिखी। उसने अपना सगापन साबित किया। लता पर वह बहुत विश्वास करता है। रेखा की नारी-बुद्धि ने सही बात पहचानी। वह लता को अपना दोस्त मानता है। क्या वह लता को गृहस्थी में बैठाकर निश्चित हो सकता है? वह रेखा तथा लता को तोल रहा है! जैसे कि किसी एक से बन्धन जोड़कर अपने चारों ओर फैलाये जाले को तोड़ देगा। वह आज तक अपने चारों ओर विचारों का घना जाला बुनकर, वहाँ चुपचाप पड़ा रहा करता था। आगे वह इसे तोड़ देगा। लता बहुत स्वस्थ है। लता रेखा की तरह बीमार नहीं है। लेकिन रेखा का वह पैना कटाक्ष? दिनेश समाज से दूर भाग जाना चाहता है। समाज के भीतर रह कर, वहाँ के रोजाना जीवन से जैसे कि उसे सहानुभूति नहीं। रेखा झूठ बोली थी कि दिनेश वहाँ नहीं रहना चाहता है। वह नहीं रहेगा। उसे कहीं दूर भागकर नदी के किनारे एक छोटी झोपड़ी बना, एकान्त में नदी के तट पर बैठ मछलियाँ मारकर जीवन व्यतीत करने की लालसा नहीं है। फिर भी रेखा और मिस्टर सिंह के प्रेम के खेल और उनके समाज का वातावरण उसे भला नहीं लगता है। वह सब अस्वस्थ है। उस प्रेम में बाहरी आर्थिक सन्तोष की चमक है, सामाजिक

दुराशा है और मानसिक कौतूहल भर है। रेखा को तितली कह देना आसान मानकर, उसको समझ लेना बहुत सरल नहीं है। उसे जीवन की लम्बी-लम्बी मंजिलों से मुड़कर देखने की आदत रही है। क्या वह कल रेखा पर उसी भाँति विचार करेगा ? लता साधारण घटना है। वह सम्भवतः उसे भूल जाय। जिस भांति लड़कियों में कुछ गुण होते हैं, एक महक होती है, वह सब कुछ लता में है। वह किसी गृहस्थ के भीतर पड़ी रहकर, वहाँ का बोझा आजीवन ढोती रहेगी। शायद रेखा बोझा ढोना स्वीकार न करे। वह उसकी मजबूरी होगी।

दिनेश अपने में समय की झूठी व्याख्या कर रहा है। अन्यथा आधी रात को लोभी चोर-डाकुओं की तरह किसी चाह के लिए सड़क-सड़क, गली-गली मारा-मारा नहीं फिरता। रेखा का दरवाजा खट-खटाकर कोई अज्ञात अर्द्ध चैतन्य लालसा न रखता। रेखा समझदार थी। उसने अपने भाव व्यक्त नहीं किये। दिनेश झूठ नहीं बोल सका। रेखा से वह झूठ नहीं कहना चाहता था। जब रेखा ने लता को एक कोरी दीवार की भाँति आगे लाकर लुका-छिपी का खेल खेलना शुरू किया, तब वह उलझन में पड़ गया। लगा कि वह उस कोरी दीवार पर 'जीवन- विज्ञापन' के बड़े-बड़े पोस्टर लगाने को तैयार नहीं है। जैसे 'रेड-क्रास' 'बच्चे के जन्म' के पोस्टर प्रदर्शन कर युवतियों में मातृत्व की भावना सजग कर देता है। यह वही व्यापार होगा! लेकिन मानवीय संस्कृति के आधार पर ही समाज निर्भर नहीं है। व्यक्ति अपराध करके नजीर बना लेता है। पहले वे अपराध समाज की ऊपरी सतह पर तैरते हैं और फिर वहीं मिल जाते हैं। सारी व्यवस्था बुराइयों के विश्लेषण से ही बनती है, अन्यथा सभ्यता सड़ी-गली धारणाओं को पचा लेने की शक्ति न रखती।

दिनेश सँभल गया। पौं फट रही थी। लोगों की छाया सड़क पर

धुधली-धुँधली दीखने लगीं। प्रकाश फैल रहा था। वह सावधान हो गया। लगा कि वह जेलखाने से छूटकर आया है। अब उसे किसी से सरोकार नहीं रखना है। यह उसका सही तर्क है। किसी संभावना के लिए आँखें फाड़-फाड़कर ताकना अनुचित लगा। लता और रेखा की जीवन-दूरी के बीच है। मिस्टर सिंह हैं। वह उनकी परवा करता है। अब लगातार जीवन-घटनाओं को ठोकरें मारकर आगे बढ़ेगा! वे सब लता, रेखा आदि की तरह समय के रेगिस्तान में पड़ी रहेंगी, जहाँ उनकी छानबीन कोई नहीं करेगा।

दिनेश अपने होटल पहुँच गया। कमरे का दरवाज़ा खोलकर बिस्तर पर लेट गया। आँखों में मीठी नींद थी। रात भर वह 'नौटंकी' का खेल खेलकर लौटा था। अब हताश चूर-चूर थका था। वह युवती पांचू के साथ चली गई होगी। वह उसको पहचान सकता है, लेकिन व्यर्थ जान-पहचान नहीं बढ़ावेगा। दुनिया बहुत बड़ी है—एक भारी भीड़ की तरह।

वह सो गया था।

दस बज गये थे। दिनेश चुपचाप सो रहा था। उसकी उस स्वतन्त्रता में दख़ल देनेवाला कोई नहीं था। किसी ने दरवाज़ा खटखटाया। दिनेश की नींद नहीं टूटी। फिर वही खट, खट, खट! अब नींद उचट गई। वह हड़बड़ी में आंखें मलता हुआ उठा। वह रातवाले कपड़े पहने हुए मय जूतों के सो गया था। उसने मुँह पोंछने के लिए कोट की जेब से रूमाल निकालना चाहा कि कोई पैनी चीज़ उसकी उँगली पर धँसी। सावधानी से देखने पर ज्ञात हुआ कि कांच की चूड़ी के कुछ टुकड़े वहाँ थे। ये टुकड़े रेखा की मेज पर पड़े हुए थे। रेखा की

मेज पर चूड़ियों का पार्सल खुला पड़ा हुआ था। वह खुद चूड़ियां नहीं पहनती, फिर भी अपनी सहेली की भेजी चूड़ियां उसने पहनली थीं। रात वे चूड़ियां बजती थीं। रेखा उस खन-खनाहट से स्वयं चौंक उठती थी, लेकिन कुछ बोली न थी। दिनेश उन चूड़ियों से खेल रहा था। अनजाने शायद कोई जेब में आ गई। उसने कोट उतारकर खूँटी पर टांग दिया।

दरवाज़े पर खट-खट की आवाज़ हो रही थी! पांचू पुकार रहा था। चटख़नी खोलकर अचरज के साथ देखा, मिस्टर सिंह किसी नये व्यक्ति के साथ खड़े थे। साथ वाला युवक साहबी ठाट में था। मिस्टर सिंह बोले, "अभी तक सो रहा था? हम तो खड़े-खड़े थक गये।"

"कल रात भर नहीं सोया। सुबह यहां आया हूँ।"

"कहां रह गया था?"

"इस शहर को छोड़ देने की ठहराई थी। स्टेशन पहुँचकर टिकट लिया। एक कम्पार्टमेंट में बैठा रहा। गाड़ी ने सीटी दी, मैं हड़बड़ी में उतर गया और गाड़ी रेंगती हुई चली गई। मेरा टिकट जेब में पड़ा रहा और मैं स्टेशन पर खड़ा था।"

"कहां जाने का इरादा था?"

"बड़ी दूर एक देहाती स्टेशन पर", कहकर दिनेश ने चुपचाप कोट की जेब से टिकट निकाला और मिस्टर सिंह को दे दिया।

मिस्टर सिंह ने टिकट ले लिया। आगन्तुक का परिचय दिया "मिस्टर... ....सक्सेना, अब की आई० सी० एस० का इम्तहान दिया है।" और उस व्यक्ति से बोले, "मैंने सच बात कही थी न?"

"कल रात आप चले गये होते तो भेंट न होती। मैं उसी गाड़ी से आया हूँ।" आगन्तुक ने कहा।

मिस्टर सिंह ने सवाल हल किया, "भावी ससुराल में टिके हुए हैं ! हैं भाग्यवान् ?"

लता का पति ? कोई चुपके दिनेश के कान में बोला। कहा उसने "चलिए, नीचे हाल में बैठें।"

तीनों नीचे उतरे। हाल में एक कोने पर बिछी हुई मेज पर बैठ गये। दिनेश ने पांचू को चाय लाने के लिए कहा और उनसे बोला, "आप मुझे माफ़ करेंगे। मैं पन्द्रह मिनट में आया।" बाहर चला गया।

उसके चले जाने पर मिस्टर सिंह बोले, "यही है दिनेश।"

"वकालत कैसी चल रही है ?"

"मुवक्किलों को साम्यवाद की शिक्षा दिया करता है। कमकरों का राज्य स्थापित करना चाहता है। जनता की शक्ति पर विश्वास करता है। जैसे कि संसार के सभी व्यक्तियों को वह सुखी बना लेगा। कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंजेल्स की धारणाओं से घटनाओं को तोलता है। व्यापारवाद से बढ़कर कैसे पूँजीवाद ने एक भयंकर रूप ले लिया है, यह उसे समझावेगा। पूँजीवादी किस तरह पग-पग पर नफा उठाते हैं; अपने स्वार्थ के लिए क्या-क्या करते हैं; सब बातें सुझाता है। लेकिन अभी वह समाज की ऊपरी सतह खोद रहा है, जनता से बड़ी दूर है। उच्छृङ्खल होने पर भी हर बात को वैज्ञातिक व्याख्या से तोलता है।"

"तब ठीक रही।"

लेकिन मिस्टर सिंह कह रहे थे, "मुझे याद है कि एक दिन उससे मेरी साम्यवाद पर दलील हुई। तुम जानते ही हो कि मेरे संस्कारों में कुछ पीढ़ी-दर-पीढ़ी की आदतें आ गई हैं, जो आसानी से नहीं छोड़ी जा सकतीं। यही मैंने उससे कहा था। वह चटपट बोल उठा—मिस्टर सिंह

सामन्तशाही के जमाने में आपके पुरखे मुग़लों की मुंशीगिरी करके ओहदे पर पहुँचे थे। अब नये शासक के साथ नई मुंशीगिरी कर रहे हो।"

तभी दिनेश आ गया। मिस्टर सक्सेना हँस पड़े। कहा फिर, "आपके कमकरों की सरकार की बातें चल रही थीं।"

"कमकरों की सरकार! मिस्टर सिंह ने क्या और कुछ नहीं कहा?"

मिस्टर ने घबराहट में पूछा, "क्या?"

"वही उस रात की बात, जब आधी रात को मैं तुम्हारे पास आया था और तुम से अनुरोध किया था कि क्रान्तिकारियों के दल में शामिल हो जाओ। तुम हंस पड़े थे। उस समय मेरी धारणा थी कि कुछ क्रान्तिकारी साम्राज्यवाद की जड़ें उखाड़कर फेंक सकते हैं। मैं व्यक्ति पर विश्वास करता था। उन कड़ी परीक्षाओं की मुझे याद है। उंगली से ख़ून निकाल कर, उस ख़ून से काग़ज़ पर लिख कर प्रतीज्ञा करना कि हम दल के साथ रहेंगे और स्वतन्त्रता के लिए मर मिटेंगे। अमावस की आधी रात को गंगा के किनारे जाकर मुर्दे की हड्डियाँ उठा कर लाना। इस भाँति साहस का परिचय देते थे। देशी रियासतों में जाकर किसी भाव पिस्तौल ख़रीद कर लाना। सब भारतमाता को उबारने की सोचे हुए थे। लेकिन एक दिन भारतमाता का नग्न रूप सामने आया। अकाल पड़ा था। मैं एक परिवार में टिका हुआ था। आठ रोज से हम लोगों को अन्न का एक भी दाना नहीं मिला। छोटी चार साल की लड़की मर गई थी। माँ के आंसू नहीं आये। उसे हंसी छूटी। उसकी आंखों में मैंने एक तेज चमक पाई और उस रात हमने तेल में भुना हुआ नमक-मिर्च मिला गोश्त खाया था। उस समय भारतमाता आगे आती, तो हम उसे ही खा जाते।"

पांचू चाय ले आया था। चाय चालू हुई। मिस्टर सक्सेना बात-बात पर तकल्लुफी बरत रहे थे। दिनेश से न रहा गया। कहा, "यह होटल है मिस्टर सक्सेना!"

"क्या?" मिस्टर सक्सेना बात नहीं समझे।

"ससुराल की झिझकवाली गुञ्जायस यहां नहीं होनी चाहिए। यहां आर्डर देते ही सब कुछ मिल जाता है। खाने-पीने के मामले में चुस्त रहना ही हितकर बात है। पांचू, क्या देख रहा है? चार सन्देश, चार समोसे और ले आ। समोसे गरम लाना।"

मिस्टर सक्सेना के इन्कार करने पर बोला, "अजी खा भी लीजिए। शरीर रहेगा सब बात ठीक होगी।"

"अभी चाय पीकर चला हूँ।"

"वह अपनी ससुराल की चाय थी। यहाँ दुनिया भर की ससुराल की है। आपको रंगीन टी-सेट याद आ रहा होगा। सालियों के साम्राज्यवादी गढ़ के नीचे कमकर तक चूँ नहीं करते। मैं किराये की दुनिया के बीच रहना सीख गया हूँ। यहां जरा बात की क़ीमत चुकाकर सन्तोष होता है कि कुछ और लुट गये। मिस्टर सिंह की जब सगाई हुई थी, वे अपनी सालियों की 'इद्रसभा' का हाल सुनाते-सुनाते थकते नहीं थे।"

"अपनी ही बातें करता रहेगा दिनेश। कभी चुप भी रहना चाहिए।"

"तब नहीं कहूँगा। मिस्टर सक्सेना, यह 'आर्डिनेंस' लग गया है। मैं उसे तोड़कर जेल जाने को तैयार नहीं हूँ।"

मिस्टर सक्सेना चुप रहे, पर बोले मिस्टर सिंह, "वह कोई ऐसी बात नहीं है। बात को तूल देना तूने सीखा है। भले आदमियों के ऊपर तू बोझा लादता है। तूने ही वह नग्न लड़कियों की तसवीरों वाला 'अलबम' लाकर मुझे समर्पित किया था।"

"वह 'आर्ट' की चीज़ थी।"

"आर्ट-वार्ट मैं नहीं जानता। तसवीरें मैंने देखी थीं और किताबों की आलमारी मे उसे छिपा कर रख दिया था।"

"यह छिपाने की तुम्हारी बहुत पुरानी आदत है। लेकिन अपनी मिसेज का बखान करने में तुम मिस्टर सक्सेना से अधिक उदार रहे। हर वक्त उनकी खयाली तसवीरें गढ़ा करते थे। वे सर्द आहें! ससुराल वालों ने रुखसत करने में कुछ देरी की कि बस बौखला उठे। उन दिनों सारा घर सिर पर उठाये रहते थे। तुम्हरी साली ने ठीक ही लिखा था— राधा बेचारी सूखकर कांटा हो गई। कृष्णजी द्वारकावासी हो गये हैं। है वह समझदार। रोज डाकिया चिट्ठी लाता था और बड़े-बड़े खसरे लिखे जाते थे। आधी-आधी रात को साइकिल पर बैठा-कर चार मील जंकशन स्टेशन पर पहुँचकर आर० एम्० एस्० में चिट्ठी छोड़ी जाती थी। कैमरा पास होता, तो फोटो लेने लायक सूरत थी। तुम मियां-बीबी के शिकवे-शिकायतें सब मुझे याद हैं।"

"मिस्टर दिनेश, यह सारी दुनिया का हाल है! निगोड़ों को किस्से कहने-सुनने में ही आनन्द आता है।" सक्सेना साहब जरा खुले।

तूने पते की बात कही सक्सेना!" मिस्टर सिंह ने दाद दी।

"नहीं" दिनेश बोला। कहता रहा, "निठल्ले आहें नहीं भरते। उनको समाज की कथित नैतिकता का भय नहीं रहता। वे रुखसतवाला ढकोसला नहीं बरतते। बाजार में लम्बी-चौड़ी गलियां हैं और वहां रात-रात भर दरवाजे खुले रहते हैं। उनको भय नहीं सताता। वे शर्म की परवा नहीं करते; वे उन अभागिनी पतित नारियों का आर्थिक भार ले लेते हैं। यह पूँजीवाद उन निठल्लों तथा उन वेश्याओं, दोनों के लिए जिम्मेवार है। यह मेरा कसूर है कि मैं उन निठल्लों में नहीं हूँ

क्यों मिस्टर सिंह, तुम मेरी बात से सहमत नहीं हो न ! यदि इस बात का प्रचार किया जाय, तो समाज की व्यवस्था का नियन्त्रण करनेवाले ठेकेदार बौखला उठेंगे। पर्दे के भीतर की बातें सच-झूठ बनाई जा सकती हैं। स्वयं क़ानूनवाले नारी की रक्षा करना चाहते हैं, फिर भी इस कोढ़ को वे सही कहकर उस पर तर्क नहीं करते। इसी लिए सामन्तशाही सभ्यता में इसका ख़ूब प्रचार है। मेरी बात का समर्थन तुम भी करोगे।"

आश्चर्य के साथ मिस्टर सिंह ने सारी बात सुनी। सक्सेना कुछ नहीं बोला। पांचू सिगरेट का 'टिन' ले आया। सिगरेट निकालकर दिनेश ने पांचू से पूछा, "कल रात कौन थी तेरे साथ? सच-सच बतलाना।"

"क्या साब?"

"साहब-वाहब मैं नहीं जानता। वह कौन थी, बतलाना न!"

"कोई नहीं।"

"मैंने उसे अपनी आंखों से तेरे साथ देखा है। अब बेकार बात छिपाने से कोई फायदा नहीं होगा। वह कौन थी? तू कहाँ से उसे साथ ले आया था?"

"हज़ूर!"

"बता न! घबराने की कोई बात नहीं है।"

पांचू ने सावधानी के साथ बारी-बारी से मिस्टर सक्सेना और मिस्टर सिंह की ओर देखा। अब डरकर बोला, "मैनेजर साहब नाखुश होंगे।"

"अरे बेवकूफ़, हम उनसे नहीं कहेंगे। तुझे इनाम मिलेगा।"

"वह एक बदमाश लड़की है साब।"

"बदमाश?"

"हाँ, जब आप चाहें वह आ जायगी।"

"क्या कहा ?" मिस्टर सिंह ने पूछा।

" वह दस रुपये पर आती है।" पाँचू ने सवाल का जवाब दिया।

"बस दस रुपये ? कहाँ रहती है ?"

"पास ही उसका मकान है। बेचारे बहुत ग़रीब हैं। उसका बाप पाँच साल से दमे का बीमार है। मा दो साल हुए, हैजे से मर गई है। एक लड़की है, बस। कभी अच्छा घर था। भाग्य की बात है। ससुराल वालों को बात मालूम हो गई है। वे नहीं बुलाते। बेचारी किसी तरह उस घर की इज्जत ढके हुए है। चोरी से रात को आती है।"

"बड़ी बेहया है—पतित !" मिस्टर सक्सेना बोले।

"नहीं साहब, बड़ी सीधी लड़की है। शराब नहीं पीती। उसका आज तक किसी से झगड़ा नहीं हुआ। जो एक बार उसे पहचान जाता है, कभी फिर आता है तो उसे जरूर बुलाता है।"

"जा, काफी के तीन प्याले ले आ।" दिनेश ने कहा। मिस्टर सक्सेना बोले "मैं नहीं पीऊँगा।"

"दो ही ले आना पांचू।" दिनेश बोला। पाँचू के चले जाने पर कहा, "मिस्टर सिंह, यह है दुनिया का हाल। सदाचार और अनाचार साधारण भावनाएँ ही हैं। जिनके पास पैसा है वे नारी को ऐश-आराम का सामान समझते हैं। उनके लिए नारी एक अच्छी खूराक है। यह शोषण ही सही, एक दरजा इस व्यापार से पेट पालता है। हम पुराण-पंथी हैं, वेदों को देवताओं की वाणी कहेंगे। देवता साधारण पुरुष ही थे। अनाचार की घटनाओं को उन लोगों ने धर्म के आडम्बर से ढक लिया है। इसे सामाजिक पाप कहना आसान है और नारी को अनाचारिणी कह देना सरल। यदि हम वास्तविक कारण ढूँढ़ें, तो जान पड़ेगा कि हमारी धार्मिक, सामाजिक,

और आर्थिक व्यवस्था के बीच कोई सीधी कड़ियाँ नहीं हैं। सार
धर्म और पैसेवालों के इशारे पर चलता है! जिन देवताओं का
आज तक होता है, जिनके पाखण्ड में बड़ी-बड़ी पूजाएँ होती हैं,
नमूने इन्द्र और चन्द्रमा हैं। अहल्या शाप से पाषाण बन गई और
गुरु-पत्नी के लिए देवताओं और दानवों में हजारों साल तक युद्ध होता
रहा! मध्यश्रेणी वाले परिवारों का न भगवान् होता है, न धर्म।
उनकी दृष्टि उदार नहीं होती। उजाले में सामाजिक नजीरें जितनी
उजली लगती हैं, उतनी अँधेरे में नहीं, लेकिन इन अनाचारिणी नारियों
का गिरोह अँधेरे में उजाला करता है। उनमें मेनका और उर्वशी
बनने की स्पर्धा चलती है। इस तरह की हजारों लड़कियाँ हैं।
यह वर्ग मेनका-उर्वशी वर्ग से भिन्न है। ये त्याग करती हैं। मध्यवर्गीय
भूखे परिवारों का पेट पालती हैं। ये बेटियाँ नालायक बेटों से लायक
कही जा सकती हैं।"

दिनेश चुप हो गया। मिस्टर सक्सेना इस बात पर सोचने लगे।
मिस्टर सिंह दिनेश के बारे में बहुत कुछ कह चुके हैं। वह सब सच
निकला। इस फक्कड़ व्यक्ति के प्रति उनके मन में लोभ हुआ। वे कुछ
बोलना नहीं चाहते थे, अतएव चुप रहे। मिस्टर सिंह काफी पी रहे थे।
पैसे द्वारा भलाई-बुराई की नीति वह बार-बार सुन चुके हैं। ये सब
बातें अक्सर दिनेश दुहराया-तिहराया करता है। पूछ बैठे, "तू अब
होटल की सब बातों से जानकारी रखने लगा है दिनेश!"

"आपका कहना ठीक है। मैं स्वयं इस बात पर ज्यादा नहीं
सोचा करता हूँ। ये घटनाएँ साधारण बातों की तरह रोजाना जीवन
में रह गई हैं। आज की समझदार लड़की जब इतिहास पढ़ती है और
उसे ज्ञात होता है कि पौराणिक गाथाओं में पन्द्रह हजार रानियाँ तथा
तीन-चार पटरानियाँ चक्रवर्ती सम्राट रखते थे या फिर 'हरम' रखने

की प्रथा बादशाहों में रही है। तब वह बहुत हँसती होगी। वे यह अपमान युग-युग के सहती आई हैं। आज वह देखती है कि साधारण सामान की तरह छः-सात नारियाँ रखने का अधिकार पुरुष को है। मानो बिल्ली-कुत्ते पाले गये हों। नारियों का एक वर्ग इसी लिए गुलामों की तादाद बढ़ाना सीख गया है। सामन्तवाद के युग में यह प्रथा तेजी से बढ़ी। 'सेक्स' को कोढ़ कहना ग़लत बात होगी। इस चरित्र की कसौटी को सही और स्वस्थ बना लेना होगा। कभी लड़कियाँ बहादुरी के पीछे मरती थीं, जब कि आज मरती हैं नमकीन लड़कों पर। हम अपनी संस्कृति-संस्कृति चिल्लाते हैं। यह नहीं समझते कि यह संस्कृति का 'हव्वा' चन्द बुद्धिवादियों का 'अहम्' वाला दौरा है। किताबों में लिखी बातों के बल पर, अपने महान् अतीत को तौलना अनुचित होगा। हमारी शारीरिक शक्ति का ह्रास एक दिन हुआ। जाति अशक्त हो गई। कुछ स्वस्थ जातियों ने खैबर से आकर हम पर विजय प्राप्त कर ली। हमारी गीता, हमारा दर्शन, हमारे वेद, हमारे पुराण; ये सब हमारी रक्षा नहीं कर सके। किसी जाति के सांस्कृतिक उत्थान के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि उसकी सांस्कृतिक शक्ति भी बढ़े। 'सेक्स' पर अनाचार-सदाचार की दूरबीन लगाने से कोई लाभ न होगा। हमें बहुत-सी पिछली धारणाओं को सबल बनाना होगा। लेकिन वह सांस्कृतिक शक्ति चन्द महन्तों के सहारे नहीं बनेगी, वह आवेगी स्वस्थ जनता से। तब वह अतीत की महत्ता, इस नई सांस्कृतिक शक्ति में डूब जायगी।"

"दिनेशजी, आपकी बातें होती ही रहेंगी। आपके 'नोट्रम्प की बीबी' के दर्शन कब होंगे?" हँसते हुए मिस्टर सक्सेना ने पूछा।

"वाह, आपने क्या बात कही! अभी आर्डर किये देता हूँ। वह

हाज़िर हो जायगी। मियाँ यह दो अंडों के 'आमलेट' के आर्डर देने से सरल काम है।"

यह सुनकर मिस्टर सक्सेना खिल-खिलाकर हँस पड़े। अब मिस्टर सिंह बोले, "साथी, तब कुछ शगल भी रहे।"

लेकिन दिनेश ने सक्सेना से कहा, "दोस्त हो तुम भाग्यवान्! अच्छी बीबी पाने के लिए बधाई देता हूँ। हमारे यहाँ के लोगों से अभी थोड़े दिनों का ही परिचय है। बहुत थोड़ी जानकारी है। सालियों ने जुलूस तो नहीं निकाला है। 'मैडम' का क्या हाल रहा। नये ज़माने की लड़कियाँ हैं।"

पाँचू आकर एक चिट्ठी दे गया। मालूम हुआ कि अभी कोई आदमी दे गया है। दिनेश ने खोलकर पढ़ी और फिर मिस्टर सिंह को दे दी।

रेखा की चिट्ठी थी। रेखा ने लिखा था; 'कृपया आज दिन में किसी वक्त जरूर आइएगा। मैं इन्तज़ार करूँगी। एक बहुत ज़रूरी मसले पर आपकी राय लेनी है।'

मिस्टर सिंह की समझ में बात नहीं आई। सक्सेना साहब चुपचाप बैठे हुए थे। दिनेश ने अपनी बात शुरू कर दी, "गाड़ी छूट जाने के बाद में रेखा के यहाँ गया था। मेरा मन अस्वस्थ हो रहा था। उस समय मुझे लगा कि मैं युग की निराशा के थपेड़ों से खेल रहा हूँ। मुझे अपना भविष्य बिलकुल अन्धकारमय लगा। यह उस तरह का मेरा पहला अनुभव था। सोचा, होटल जाना अनुचित होगा। एकाएक रेखा की याद आई। आशा की रेखा मेरे आगे चमक उठी।"

"दिनेश जी, मुझे तुम्हारे साहस से ईर्ष्या होने लगी है।" सक्सेना बोले। ऐसा जान पड़ा कि वे दिनेश की महत्ता के प्रभाव में 'सेन्टिमेंटल'

हो गये हैं। दिनेश का वह व्यवहार सही-सा लगा। एक कुमारी से विश्वास की आशा करे, यह सही दृष्टिकोण था।

"मुझे किसी बात से एतराज नहीं होता मिस्टर सक्सेना! भावुक इन्सानों की दुनिया सरोकार और वास्ता रखने की सही जगह नहीं है। किसी का आदर करना ठीक है, पर उसे रोग की तरह पालना अनुचित होता है। आज की अपनी दूरी के भीतरवाले लोग अपने हैं। कल पीठ-पीछे, उनकी याद की गठरी को लादे-लादे फिरना मुझे नहीं जँचता। वह व्यर्थ ही है। भविष्य मौत की भाँति अटल नहीं है। वह अव्यवस्थित और अज्ञात भले ही हो, पर हम उसकी वैज्ञानिक व्याख्या कर सकते हैं।"

"रेखा क्या बोली थी!" मिस्टर सिंह ने पूछा।

"कुछ नहीं। उसे मेरे इस कर्त्तव्य पर आश्चर्य नहीं हुआ। उसने मेरी सारी उलझन को सुलझाने की चेष्टा की। उसने इस व्यवहार की आड़ में अनादर की भावना स्वीकार नहीं की। वह इन छोटी बातों की परवा नहीं करती। मैंने उससे इस लड़की का ज़िक्र किया। बस, वह हंस दी।"

"तूने इस लड़की की बात कह दी?" मिस्टर सिंह आश्चर्य में पड़ गये। यह अप्रिय सत्य था।

"मैंने सारी बात समझाई थी। कुछ नहीं छिपाया। अपने स्टेशन जाने की बात भी कही। यह सब उसने हंसी में टाल दिया और कहा कि वह मेरे लिए एक पींजड़ा शीघ्र ही बनावेगी। कहती थी, तुम्हारे दोस्त की मार्फत बनवाऊंगी। हर बात को वह उत्साह से सुनती थी। कोई खास कौतूहल उसने नहीं दिखाया। मुझे आशा थी कि वह उदासीनता बरतेगी, लेकिन उसने सब कुछ सुना। वैसे अपनी कोई स्पष्ट राय

नहीं दी। अब शायद मैं वहां उन परिस्थितियों में दुबारा कदापि न जा सकूँ।"

मिस्टर सक्सेना घड़ी देखकर बोले, "साढ़े ग्यारह बज गये हैं।"

"दोस्त, कोई फ़िक्र की बात नहीं है! अभी से ऐसी पाबन्दी चलेगी! नकेल बीबी के हाथ में कभी नहीं पड़नी चाहिए।"

"वे लोग व्यर्थ इन्तज़ार कर रहे होंगे। तेरी तरह फालतू वक्त उन लोगों के पास नहीं है। चलिए, आपको छोड़ आऊं।" मिस्टर सिंह उठ गये।

दिनेश बोला, "यहां ख़ास घूमने की जगह नहीं है, दिन को नहीं चले चलते। हाँ, मिस्टर सिंह मैं आज शाम को बाहर जाऊंगा।"

"कहां?"

"मोहन के गांव। अब के पट्ठे ने गुड़ का कारोबार शुरू किया है। वहाँ गुड़ बनाने का काम करता है। गांधीजी पर भक्ति हो आई है। मैं कहकर थक गया कि यह उसकी शक्ति का दुरुपयोग है, पर वह कब मानता है। मुझे उसने गरम-गरम गुड़ खाने का न्योता दिया है। ताजा रस पिलावेगा। सिर्फ आठ मील दूर है। साइकिल से जाऊंगा और परसों तक लौट आऊंगा।"

मिस्टर सिंह और सक्सेना चले गये। अब दिनेश ने पांचू को बुलाकर हिदायत दी कि उसकी साइकिल ठीक कर ले। फिर बाथरूम में जाकर ख़ूब नहाया। कपड़े बदलकर आराम करने लगा। वहीं नींद आ गई। कुछ देर पड़ा रहा।

पांचू ने आकर जगाया। एक चिट दी। रेखा ने लिखकर भेजा था—आपका इन्तजार कर रही हूँ। चिट पढ़ते ही चले आइए।

एक बज गया था। दिनेश उठा और हाथ-मुंह धो, कपड़े पहन कर तैयार हो गया। पांचू ने पूछा, "खाना ले आऊं?"

"नहीं !"

"अच्छा थोड़ा-सा !"

"भूख नहीं है ।" कहकर दिनेश नीचे उतरा। तांगा लिया और रेखा के घर की ओर रवाना हुआ।

रेखा बाहर बरामदे में टहल रही थी। दिनेश को देखते ही नमस्ते करके बोली, "कष्ट के लिए माफ़ कीजिएगा। मुझे डर था कि शायद आप नहीं आवेंगे। आपकी कोई परतीत थोड़े ही है।"

"क्या कहा ?"

"कुछ नहीं। अभी-अभी लता आई थी।"

"वह आई थी! और मिस्टर सक्सेना को बिदा करके मैं आ रहा हूँ। जोड़ी सलामत रहे ?" वह हंस पड़ा।

"आपसे मुलाक़ात हो गई, ठीक ही हुआ। लता सुबह से यहाँ बैठी रही। वह कहती थी कि अभी शादी नहीं करेगी।"

"नहीं करेगी, कहकर लड़कियां अपनी स्वीकृति दिया करती हैं। मुझे मिलेगी तो मैं उससे यही कहूँगा।"

"आप !"

"क्यों, आश्चर्य की क्या बात है ?"

"आप अजीब व्यक्ति हैं। कोई लोभ नहीं रखते। वह बड़ी देर तक रोती रही। कहती थी कि माँ लड़कियों को पैदा होते ही क्यों नहीं मार डालती हैं। उसे यह रिश्ता पसंद नहीं है। वह चाहती है कि मैं उसकी माँ से कहकर यह रिश्ता तुड़वादूं।"

"लेकिन मुझे मिस्टर सक्सेना बहुत पसन्द हैं। मैं कुछ ही मिन्टों में पहचान गया कि वह बादशाही तबियत का आदमी है।"

"आप सब लोग एक से मिल गये। चोर का साथी बटमार! भला पसन्द क्यों न हो। लता को इससे कोई मतलब नहीं है।"

"तब क्या वह इस भाँति क्वाँरी ही रहेगी। वैसे हर एक लड़की का क़सूर है कि वह शादी से भागना चाहकर भी भाग नहीं पाती। मैं उसे इतमीनान करवा दूँगा कि मिस्टर सक्सेना 'हुकुम के गुलाम' हैं। शायद उसे कुछ समाधान होगा।"

"क्या आप अपने प्रभाव का दुरुपयोग करेंगे। लता का तर्क किसी हद तक ठीक ही है। वह कहती है कि वह ज़रा-ज़रा-सी बातों से रोमांचित नहीं होती। वह सयानी और समझदार हो गई है। अपने लिए एक ईमानदार साथी चाहती है। मैं उससे सहमत हूँ। फिर भी चाहती हूँ कि यह रिश्ता हो जाय; लेकिन लता ने मेरी बात अनसुनी कर दी। वह बड़ी देर तक रोती रही। मैं उन आँसुओं के आगे कुछ नहीं बोली। सुबह वह बहुत डरी हुई थी। पहले मेरी समझ में बात नहीं आई। कोई बात अवश्य होगी। संभवतः मिस्टर सक्सेना व्यवहारकुशल न हों!"

"मिस्टर सक्सेना में ऐसी कोई कमी नहीं है। लता इधर दया करना सीख गई है। वह जानती है कि एक 'भिखारी' इसी शहर में पड़ा हुआ है। वह भीख माँग-माँग कर गुजारा किया करता है। आप ही विचार करें कि उस तरह लता से रुपया माँगना क्या मेरे हक में ठीक बात थी? उस बेबसी में मुझे और कुछ नहीं सूझा। मुझे लता पर आपसे अधिक विश्वास था। अब वह क़र्ज़ा दे-देकर एक दिन मुझे ख़रीद लेने की बात सोच रही है। लेकिन मैं इसे पसन्द नहीं करता। यही बात स्पष्ट रूप में मैं लता से कह देना चाहता हूँ।"

"क्या दिनेशजी!" रेखा के माथे पर बल पड़ गये। बोली, "आप लता को जहर देकर क्यों नहीं मार डालते। उसे आत्महत्या कर लेने पर उतारू न कीजिए। आप फाँसी देनेवाले जल्लाद से कम नहीं है।"

"जल्लाद! उनसे ज्यादा सहृदय कौम मैंने आज तक नहीं देखी।

यह अपना-अपना पेशा है। उस मौतवाले कारोबार के पीछे एक परिवार की गुजर होती है। वे घर पहुँचकर उस दिन प्रायश्चित करते हैं। वे सजा देनेवाले नहीं हैं। सजा देते हैं जज! मैं एक सेशन जज को जानता हूँ, जो शेखी बघारता हुआ कहता है कि उसकी मोटी लाल पार्कर कलम से तेईस आदमियों को फाँसी लगी है। उस कलम के प्रति उसका बहुत मोह है। उसने वह कलम निकालकर मुझे दिखलाई थी। लेकिन आपको सुनकर आश्चर्य होगा कि वह पक्का 'घरू मर्द' (Henpecked Husband) है।

"Hen Pecked !"

"बहुत दब्बू-सा आदमी! बीबी लाल मूसा-सी काली है। उसकी एक आँख चेचक की बीमारी से बचपन में फूट गई थी। उसकी नकली काँच की आँख है। सोने की कमानी का चश्मा लगाती है। जब वे पढ़ते थे, लड़कीवालों ने रुपया देकर शादी की। घर की अदालत में वह अपना क़ानून चलाया करती है। यह 'घरू मर्द' होना कुछ व्यक्तियों का अपना निम्न-आत्मभाव होता है। जो इस बीमारी के शिकार होते हैं। उनका व्यक्तित्व बचपन में किसी भारी घटना से ज़रूर दबता है।"

"जल्लाद और जज की यह तुलना मेरी समझ में नहीं आई। मैं लता की बात कह रही थी न!"

"और मैंने जल्लाद का क़िस्सा शुरू कर दिया। यह फाँसी की सजावाला प्रचलित कानूनी रोजगार मुझे पसन्द नहीं है। किसी व्यक्ति को आज सजा सुना दी जाती है और फाँसी लगेगी भविष्य की किसी अनिश्चित तिथि को। वह मौत व्यर्थ में उस व्यक्ति की उपहास-कसौटी बन जाती है। सब उसे फांसीवाला कैदी कहते हैं और वह हंसी हंसी में उसे उड़ा देता है। तुम चाहती हो कि मैं जल्लाद बन जाऊं। मुझे

यह पेशा पसन्द है। पिछले साल एक जल्लाद से मेरी भेंट हुई। उसने मुझे बहुत-से कैदियों का हाल सुनाया। अठारह साल की उसकी नौकरी हो आई है। वह सारी बातें इतनी सरलता से सुना रहा था, मानो वह साधारण बात थी। उसे गर्व था कि अपने साथियों में वह सबसे बाजी मार कर ले गया है। एक बार सरकार से उसे इनाम भी मिला था। उसकी बातें मैंने चाव से सुनी थीं। सोचा था कि यदि मेरे अधिकार की बात होती, तो वह पेशा ले लेता और सब अस्वस्थ बुद्धिवादियों को टिकटी पर लटका देता। लेकिन हर एक की मौत के परवाने पर आपके दस्तख़त होने ज़रूरी होते।"

"मेरे!" रेखा मुर्दे की तरह सफ़ेद पड़ गई। कुछ देर तक दिनेश की ओर टकटकी लगाकर देखती रही। वह क्या कह रहा था? यह कैसी बात थी? वह कौन-सी जिम्मेवारी सौंपने को तुला है। वह अवाक् चुप रही।

तब दिनेश ही बोला, "आप चिन्तित क्यों हो गई हैं। मुझे जल्लाद घोषित करने से पहले, कल रात आपने लता पर अपना फैसला नहीं सुनाया था?"

"मैंने। आप क्या कह रहे हैं?"

"लता को इस भाँति 'पराजित' करने में आपका हाथ है। आपकी सारी बातें वह भाँपा करती है। कल रात आपने कहा था—लता मेरे साथ स्टेशन पहुँच सकती है। यह आप क्या सोचा करती हैं?"

"वह बात सच है।"

"मैं कब कह रहा हूँ कि वह झूठ है। अब मैं जल्लाद बन बैठा हूँ और आप सेशन जज! मैं लता के आगे एक भिखारी की तरह खड़ा होकर कहूँगा—'माई चल', और वह चल देगी! तब लता खांड का खिलौना है। जिससे खेलना मेरा धन्धा है। यदि वह चूर-चूर हो

गई तो मैं अपना आश्रय देकर उसे संभाल लूंगा। आप पीली पड़ती जा रही हैं। मैं यह आपकी धारणा को ही बल दे रहा हूँ। आज तक मैं चुप था। आपने उसे बार-बार उभारा है।"

"मैं ही कसूरवार हूँ। आप अपना 'फाउन्टेन पेन' कल गोल कमरे की मेज पर छोड़ गये थे न?"

"मैं!" दिनेश ने देखा, कोट की छोटी जेब से पेन नदारद है। बोला, "शायद भूल गया हूँ।"

"आप भूल सकते हैं। भूल सदा आसान होती है, चटपट माफ़ी मांग ली। आप बच नहीं सकते। लता ने सुबह वह काग़ज़ देखा, जिस पर आपने मेरा नाम बार-बार लिखा है। आपकी क़लम और वह सब लिखा हुआ देखकर वह भौंचक्की रह गई। मेरा ध्यान उधर देर से गया। लता को हिस्टीरिया का दौरा आ गया था। वह जान गई कि सारी आपकी करतूत है। नौकरानी से वह मेरे पीछे छानबीन कर चुकी थी। जब मेरी नींद टूटी तो वह मुझसे झगड़ पड़ी। उसका कहना था कि मैं आपको फंसाने के लिए जाल बिछा रही हूं।"

"आप और मेरे लिए जाल बिछा रही हैं। सुना है, आंखें कवि लोगों की प्रेमिकाएँ बिछाती हैं। लेकिन यह आपका जाल बिछाना मेरी समझ में नहीं आता।"

"मैंने कुछ नहीं कहा। बात की सफ़ाई देने का मतलब यह होता कि उसके सन्देह की पुष्टि करूँ। वह कदापि मेरी बातों पर विश्वास नहीं करती। मैं चुप रही। एक घंटे के बाद वह होश में आई, तभी उसने मुझे सुनाया कि मिस्टर सक्सेना आये हैं। वह यह पूछना चाहती थी कि आप उस तरह रात को क्यों आये थे? पूछा नहीं। वह पूछती, मैं क्या जवाब देती।"

"आप सब लोगों ने मेरे जीवन को अपने मज़ाक का साधन बना

लिया है। यह बात मैं पहले दिन ही जान गया था।" दिनेश खिलखिला कर हंस पड़ा।

वह बिलकुल फ़ीकी हंसी थी। कहीं उसमें भावुकता का प्रसार नहीं मिला ! दिनेश ने सच बात कही थी। रेखा के पास कोई बचाव नहीं था। वह क्या कहती। दिनेश रेखा की छानबीन कर रहा था। रेखा मुरझा गई। उसने आज बहुत बड़ा अपराध किया। उसने एक बार संभलने की चेष्टा की। सारी अस्तव्यस्त फैली घटनाओं को सावधानी से संवार कर बोली, "आपकी धारणा सही नहीं है। मैं पगली हो गई हूँ। आजकल न जाने क्यों इस तरह के खेल खेलना सीख गई हूँ। मुझे माफ़ करोगे न।"

"मैं आपको माफ़ी नहीं दे सकता। इतना छोटा नहीं हूँ।"

"सुनो, कल रात आपने जिस लड़की का जिक्र किया था, वह यहां आई हुई है।"

"वह लड़की ?"

"हां, सुबह मैंने पांचू को बुलाया था। उसी ने मुझ पर यह अनुग्रह किया है। खाना खाकर आये हो या नहीं ?"

"नहीं।"

"अभी मंगवाती हूँ।"

"पूछ लिया, यही क्या कम उपकार है ?"

"खाना तैयार ही है।"

"मुझे भूख नहीं है। कुछ हरारत-सी लगती है।"

"रात भर ओस में टहलते रहे हो। काफी को कह दूं।"

"एक प्याला पी लूँगा।"

"कल मिस जेम्स के यहां से पेस्ट्री आई हैं। वह चख लीजिएगा।"

रेखा ने नौकरानी से कॉफी बनवाकर मँगवा ली। प्याले में उड़ेलती

हुई बोली, "वह लड़की देखने में बहुत सुन्दर है।"

"सुन्दर होगी। उसे होना ही चाहिए। वह रूप बहुत क़ीमती है।"

"उसे आपको दिखलाना चाहती हूँ कि आप उसका चेहरा देख कर उस पर अपनी राय दें।"

"मैं ?"

"आप इस विद्या को भली भांति जानते हैं।" कहकर रेखा ने एक और चिम्मच चीनी प्याले में डाली। कुछ देर चिम्मच चलाकर, प्याला दिनेश को दिया।

एक घूँट पीकर दिनेश बोला "आप इस तरह बखेड़ा जोड़ना कब से सीख गई हैं !"

"बखेड़ा, कौन-सा ?" रेखा बोली।

दिनेश ने इस सवाल का उत्तर नहीं दिया। तो रेखा ने कहा, "कुछ खा लो न ! आपको देहात जाना है। पांचू कह रहा था।"

"आपको होटल के शासन में दख़ल देने का क्या अधिकार है ? आप यह बहुत ख़तरनाक खेल खेल रही हैं। मुझे यह सब पसन्द नहीं है। वैसे आप समझदार हैं। कोई क्या राय दे सकता है ? यह मेरा अपना विचार है।"

"क्या मैं ग़लती पर हूँ ?"

"हां यह मैं साफ़ कह दूंगा। मेरी अपनी दृष्टि में यह ग़लती है ! वैसे आपने कुछ सोचकर ही किया होगा। मैं उस लड़की को नहीं देखना चाहता हूँ। उसे बुलाकर आपने क्या जानकारी हासिल करनी चाही है ?"

"उस ज्ञान को पा लेना, जिससे आप अपने को सबल समझकर नारी को कुचल सकते हैं।"

"लेकिन वह यह सब नहीं जानती होगी।"

"क्यों ?"

"यह उसका ख़ानदानी व्यवसाय नहीं है। आप उसकी गरीबी का उपहास उड़ाकर आज कौन-सा आदर्श सम्मुख रखना चाहती हैं। यदि वह मेरे प्रति कोई उदारता है, तो मुझे अपना दर्जा नहीं बढ़ाना है।"

"लेकिन मैं तो......"

"नहीं नहीं।......... वह भयानक चुग्गा है। गोश्त के टुकड़ों को दिखलाकर चीलों को आमन्त्रण देना, अपने को ख़तरे में डालना ही होगा। मैं इसे अनुचित दया कहूँगा। इसे अपेक्षित स्वीकार करना ढोंग होगा।"

"चलिए पहले कुछ खा लीजिए।"

"मुझे भूख नहीं है।"

"तब...!"

"आप क्या कहना चाहती हैं, रेखा जी ?"

"यही कि शायद आपने प्रायश्चित करने की ठहराई है।"

"मैंने ?"

"तो थोड़ा खाना खाना ही पड़ेगा। क्या आपका सारा अनादर मुझे ही सहना है। बात क्या है।?"

"कुछ नहीं।"

"मैं कसूरवार हूँ लेकिन क्या इस लड़की को अंधेरी रात में देखकर आपके आगे एक तूफ़ान खड़ा नहीं हो गया ? निराशा में एक विपत्ति की आकांक्षा ने आपको घेर लिया। आप होश-हवास खोकर पागलों की तरह इधर-उधर बाजार-बाजार घूमते रहे हैं। आपके मन में दूर भाग जाने की भावना उठी और इसी लिए आप स्टेशन पहुँचे। आपने एक परिचित मकान का दरवाज़ा खुलवाया और वहाँ प्रवेश

किया । यह सब मेरा अपराध तो है नहीं । इस समय मैं कोई फैसला देकर, उस लड़की की क़त्ल करवाने पर नहीं तुली हुई हूँ ।"

"मिस रेखा ?"

"चलिए, उठिए । खाना खाना ही पड़ेगा । मेरे घर की नौकरानियां क्या समझेंगी । अभी तक वे आपके कल रात के व्यवहार से डरी हुई हैं । आपके कल रातवाले पहनावे से मैं ख़ुद ही डर गई थी । अब बात बढ़ानी अनुचित होगी । नौकरों को सफाई नहीं दी जाती है । इस समय अब आप......"

दिनेश उठा, रेखा का हाथ अपने हाथ में उठाकर बोला, "चलो, चलो, मैं आवारा हूँ ।"

रेखा चुप रह गई । उसका चेहरा फ़क पड़ गया । लगा कि दिनेश उसकी लाश को अपने कन्धे पर उठाकर, चिता पर जलाने ले जा रहा है । अनायास उसके मन में भावना उठी कि कल रात दिनेश चुपके आया और उसके माथे पर सिंदूर का टीका लगाकर, उसके बालों में भी भर गया है । अब वह राख मात्र बचेगी । रेखा ने अपना हाथ छुड़ा लिया । दिनेश कुरसी पर बैठ गया और कुछ देर बाद उठकर खानेवाले कमरे की ओर बढ़ गया । वहां पर उसने देखा कि एक युवती सामने कुरसी पर बैठी हुई थी । दिनेश सन्न रह गया । तब यही वह लड़की थी, जिससे रेखा मुक़ाबला करवाना चाहती है । वह उस लड़की को भूल नहीं सकी है । दिनेश को कुछ नहीं चाहिए । क्यों सारी दुनिया उससे सरोकार रखना चाहती है ? अब तक उसे मालूम नहीं था कि वह लड़की इतनी सुन्दर होगी । अब उसे ज्ञात हुआ कि 'किराये' पर चलने के लिए वस्तु का आकर्षक होना ज़रूरी है । बड़ी-बड़ी काली-काली काजल लगी आँखों से डेबलियां इधर-उधर ताक रही थीं । वह क्या ढूँढ़ रही है । ठीक, वह यहां की परिस्थिति से परिचित नहीं है ।

दिनेश से भी अनजान है। उसकी आंखों और पहनावे पर 'चरित्र' की कोई छाप नहीं है। मानो कि वह चरित्र आज जीवन को चालू रखने का एक बहाना हो। उसका वह पहनावा और वह शृंगार! जामुनी बुन्दोंवाली साड़ी, कत्थई मखमल की वास्कट......

वह तो खाना खा रहा था। रेखा बोली, "लता 'फाउन्टेन पेन, ले गई है।"

"ले गई !" दिनेश ने चम्मच प्लेट पर रख दी। एक हलकी आवाज हुई।

"हाँ, शायद मिस्टर सक्सेना को भेंट देगी।" रेखा मुसकराई।

"ठीक !"

"वह तो कल यकायक आ गये। घरवालों को सूचना नहीं दी। आपकी ही तरह आधी रात को दरवाज़ा खटखटाया। उनको पहले लता को लिख देना चाहिए था, ताकि लता तैयार रहती। वे आज साँझ को जा रहे हैं।"

"आज जा रहे हैं। मैं समझता था कि कुछ दिन यहीं रहेंगे।"

"मैंने साँझ को खाने पर सबको बुलवाया था। यही जवाब मिला है।"

"मैं उनको न मिल सकूँगा। आप स्टेशन जावेंगी, तो मेरी ओर से माफ़ी माँग लीजिएगा।"

"मैं ! आप साँझ को वहाँ चाय पीने नहीं आवेंगे ?"

"नहीं।"

"लता क्या समझेगी ?"

"उसका कुछ समझ लेना भूल है। मैं जरूर जाता, पर वक़्त नहीं है। मैंने देहात सुबह तक पहुँच जाने का दावा किया था। वे लोग इन्तज़ार कर रहे होंगे।"

"यह तो आप जानें। शान्ति क्या देख रही है?"

"कुछ नहीं।" वह लड़की संकुचित होकर बोली।

"हमारे घर आया करेगी?" रेखा उससे बातें करने लगी।

"जब बुलाओगी।" वह भीतर मन में डरी हुई थी।

एक बार दिनेश ने उस लड़की की ओर देखा और कोई खास बात न सोचकर चुपचाप खाना खाता रहा। यह रेखा क्या चाहती है? आज पहली बार ऐसा प्रश्न उसके मन में उठा। फिर सोचा, कल दुनिया इस बात का प्रतिवाद करेगी। वह इतनी नासमझ नहीं है।

लेकिन रेखा उस लड़की से पूछ रही थी; "तेरे पिताजी अब कैसे हैं?"

"हालत बहुत खराब है।"

"दवा का इन्तज़ाम है?"

"हाँ, डाक्टर बोस देख रहे हैं।"

दिनेश खाना खा चुका था। चुपचाप हाथ धोकर गोल कमरे में पहुँच गया। गोल कमरे की मेज़ पर धरी तश्तरी से पान के बीड़े उठाकर मुँह भर लिया। सिगरेट-केस से सिगरेट निकालकर उसे फूँकने लगा। एक राय उठी कि रेखा यथार्थ नारी है। लता दार्शनिक नारी मालूम हुई। यही उसका फैसला था। रेखा बिलकुल लिहाज नहीं बरतती। फिर लता का उस तरह रोना, वह भावुकता! क्या उसका मृत-प्राण वहीं पड़ा रहना चाहता है। लता क्यों उलझन में पड़ी रहती है? रेखा बिना कुछ सोचे-विचारे समस्या गढ़ती रहेगी। वह परिस्थिति को पहचानकर चलती हैं। वह नारी की भाँति हर वक्त डावाँडोल नहीं होती है। हर एक के विश्वास पर मौक़ा पाते ही विजय पाकर, वहाँ अपनी चाह उड़ेलने पर तुल जाती है। क्या यह भाग्य के साथ जुआ नहीं है? वह भाग्य, रेखा जिसे मानती है।

बार-बार अपनी ताकत से भाग्य को सँभालकर अनिश्चित भविष्य के लिए साधारण-असाधारण घटनाओं को टाल देती है। रोना, यह नारी की कमजोरी है। नारी शरीर के आगे अपने दिमाग को हरा देती है। शरीर सब कुछ है। उससे आदमी 'शैतान' बनाया जा सकता है। नारी का बाकी गुण एक दिखलावा है। यह रेखा बात को तोलती है। इसीलिए धोखा नहीं खाती।

रेखा जानती है कि प्रेम देना है, न कि बदले की कोई भावना ? अपनी श्रद्धा से अपना सर्वस्व प्रेमी को अर्पण कर देना पड़ता है। आदमी मतलब का भूखा होता है। उसे पालतू बनाकर चुगाया जाय, तब वह भागेगा नहीं। आज वह प्रेम की इस संज्ञा का प्रयोग नहीं करना चाहती। बहुत सावधान रहती है। अक्सर वह लता से कहना चाहती है— नारी पुरुष से दान पाने की भावना नहीं हटा सकती। लेकिन कहेगी नहीं। वह व्यर्थ ही लता को परेशान नहीं करना चाहती है। न वह मिस्टर सिंह के बलवान् बाहुओं के सहारे आजीवन खड़ी रहेगी। वह सारी बातें समझती है।

कल रात दिनेश से कोई पूछता कि तुम उस लड़की के साथ जाना चाहते हो तो वह कभी इन्कार न करता। वह कहां जाना चाहता था, इसका उसके पास कोई उत्तर न था। वह लड़की पहली नज़र में जितनी प्यारी लगी, अब उतनी नहीं लगती थी। यदि कल वह पास पड़ जाती, तो वह उसे साथ चले चलने के लिए ज़रूर उकसाता। दोनों कहीं दूर चले जाते। अब आज उस लड़की के साथ टिकने का कोई उत्साह नहीं बचा है। लता और रेखा, दोनों उसे भीख मांगना सिखला रही हैं। उसे आज की नारी एक भूलभुलैया लगती है! वह बड़ी दुरूह है। गृहस्थी के भीतर उसे पति का पूरा ख़याल रहता है।

एक युवक को पति के रूप में ग़ुलाम बनाकर, वे उसे गृहस्थी में रहना बख़ूबी खिला देती हैं। यह उनका सही व्यापार है।

वह लड़की और रेखा कमरे में आईं। तीनों पास-पास बैठ गये। वह लड़की चुपचाप थी। दिनेश ने सोचा कि यह लड़की अपने पिता के घर की सारी व्यवस्था खुद संभाले हुए है। कोई और उपाय कब उसके पास है। उसकी हंसी उड़ानी अनुचित लगी। रेखा आज बहुत ख़ुश थी। दिनेश उठा और बोला, "मैं जा रहा हूँ।"

"आप कब लौटेंगे ?"

"चार-पांच रोज़ में।"

"चार-पांच !"

"नहीं, परसों तक लौट आऊंगा। वहां ज्यादा रुककर क्या करना है ?" दिनेश बाहर निकला और होटल की ओर रवाना हो गया।

सन्ध्या को पांचू आकर बोला, "साइकिल ले आया हूँ।"

"अच्छी बात है।"

"और बाबूजी......!"

"क्या है रे ?"

"उस लड़की का बाप मर गया।"

"मर गया! कैसे ?" पांचू की बात से उसे बहुत आश्चर्य हुआ।

"सालों से बीमार था। अभी-अभी एकाएक सीढ़ी से गिर पड़ा। बस यही बहाना बन गया।"

दिनेश कमरे के भीतर गया और न जाने क्या सोचता रहा। उस लड़की का चेहरा याद आया। यह क्या हो गया ? इस दुनिया में

दुखियों की 'लिस्ट' बनानें से कुछ लाभ नहीं होगा । सारी सामाजिक व्यवस्था पर जंग लग गया है । सब कुछ एक बार फिर नये सिरे से चालू करना होगा । भावुकता में सुख-दुःख को तोलने से कोई लाभ नहीं। उसने एक चिट्ठी लिखी :—

रेखाजी,

अभी एक दुःखद घटना हो गई है। पांचू सारी बात समझा देगा। आपकी सहेली पर विपत्ति पड़ी है। पचास रुपया पांचू के हाथ भिजवा दीजिएगा।

—दिनेश

उसने पांचू को बुलाकर चिट्ठी दी और सारी बातें समझा दीं। पांचू चला गया। वह स्तब्ध खड़ा का खड़ा ही था। उसे लगा कि उस लड़की के एक तमाचा भाग्य ने मारा है! वह इस समाचार को सुन लेने के लिए तैयार नहीं था। दिल में कुछ देर तक माया-मोह का ज्वार-भाटा उठा। फिर साधारण घटनाओं की भांति उसने उस घटना को भी कुचल डाला। यह परिचय रेखा ने कराया था। रेखा कुछ सोचती-विचारती नहीं है। अपने मन की है। उसका अपना कोई नहीं है, जो उस पर शासन करके आज्ञा दे। वह सुझा रही थी कि उस लड़की को दिनेश ने महत्व दिया है। वह दावा-सा कर रही थी कि वह लड़की कुछ नहीं है।

लता अलग परेशान है। पति ठीक तो है और क्या उस पर सुरख़ाब के पर होने चाहिए थे! लता अपनी अवस्था के साथ एक 'रोमांस' चाहे अथवा अपने किसी अज्ञेय-अज्ञात प्रेमी से प्रेम की जाली बुना करे, यह ठीक नहीं है। वह प्रेमी कौन होगा?

रेखा झूठ बोला करती है। वह कुछ न कुछ कहती है। हिचक

नहीं बरतेगी। अनजाने उसे नीचा दिखलाना चाहती है। यह उसका कैसा विद्रोह है?

उस लड़की के पिता की मौत ने सारी विचार-धारा को ढक लिया था।

लता स्टेशन से लौटकर, गोल कमरे में बैठी हुई कोई 'मैगजीन' पढ़ रही थी। उसे अपने आज के व्यवहार पर आश्चर्य और दुःख था। रेखा के आगे उसने जो बात स्वीकार की, क्या वह सही थी? रात भर दिनेश वहाँ बैठा रहा है। वह टिकट लेकर कहां जा रहा था? जीजी से वह सब बातें कहता है। वह चाय पीने तक नहीं आया। चुपके देहात चला गया। अपने मन का ही है। वह मिस्टर सक्सेना पर सोचने लगी। उनका व्यवहार भला था। वह और कुछ नहीं चाहती। वे एकाएक न चले आते तो उनके मन में झगड़ा न उठता। वह सँभल रही थी। अब वे चले गये हैं। मिस्टर सक्सेना बच्चों के लिये चीजें लाये थे। उसके लिए कुछ नहीं लाये। क्या इसी लिए वह बदले में दिनेश का 'फाउन्टेन पेन' उठाकर ले आई है? मन में यह कैसा खयाल उठ रहा था? वह क्या जानना चाहती है? बात समझ में नहीं आई। दिनेश को देखकर एक सद्भावना उठती है। वह कुछ नहीं सोच पाती। उस पर कुछ सोचना व्यर्थ होगा। वह सदा व्यस्त रहता है। कभी-कभी लगता है कि कई विचार-धाराओं का संघर्ष उसके हृदय में हो रहा है। वह यह भाव नहीं छिपा पाता। वह बहुत थक गई थी। मिस्टर सक्सेना की चुटकियों और बातों ने उस पर गहरा प्रभाव डाला था। पहले वह उनसे जितना दूर रहना चाहती थी, अब वह सम्भव नहीं था। वह अपनी स्वीकृति दे देगी। सब यही कहते हैं। वह हां करेगी। यही ठीक न्याय है।

दिनेश कमरे के भीतर आकर बोला, "मुझे देहात से पैदल ही लौट आना पड़ा है।"

लता भौंचक्की रह गई। सटपटाकर उठी। कुछ कह न सकी। कुछ देर के बाद सारी चूकी सामर्थ्य बटोरकर बोली, "बैठिए-बैठिए। कॉफी के लिए कहे देती हूँ।" भीतर चली गई।

दिनेश ने उस अस्तव्यस्त लता की रूपरेखा को भांपा। बालों की लटों से पांव तक उसे देखा था। जब वह चुपके भाग गई, तो वह समझ गया कि यह झिझक क्यों है? मिस्टर सक्सेना उस घर के स्वामी हैं, जहां लता को रहना है। वह तो एक साधारण मुसाफिर है। उसे अपने पर हँसी आई कि क्या उसे आजीवन अपनी यादगार की गठरी का बोझा पीठ पर लादे हुए, अपना जीवन व्यतीत कर देना है। गांवों, कस्बों और शहरों का एक भौगोलिक जाल है। जहां घर हैं, गृहस्थ हैं। वहीं उसका कोई स्थान जरूर होगा। आज इस सूरज, चांद और सितारों से ढकी हुई दुनिया का असर उसके हृदय पर न पड़े, पर एक दिन शायद वह उनके आकर्षण से नहीं भाग सकेगा। इन्सान की कमजोरी पर उसे ख़ास भरोसा नहीं है।

लता लौटकर आई। सावधानी से बैठकर बोली, "आप तो...?"

"हां, मैं देहात चला गया था। मोहन वहां नहीं मिला। लौट आना पड़ा। सुबह वह मेरा इन्तजार करता रहा। लौटते समय सायकिल में पंचर हो गया। पांच मील पैदल घसीटने पड़े हैं।" उसने जेब से सस्ती सिगरेट की डिबिया निकालकर, सिगरेट पीना शुरू कर दी।

लता ने ठठोली की, "आपने तो सिगरेट का 'स्टैंडर्ड' बदल दिया है।"

"ग़रीबी आ गई है।"

लता ने नौकर से सिगरेट मँगवाई। दिनेश बोला, "गाँव के

लोगों को बढ़िया सिगरेट कहाँ मिलती है? एक देहाती दूकान पर ख़रीदी है।"

"आप 'फाउन्टेन पेन' माँगने आये हैं। मैं समझ गई। वैसे ही उठाकर ले आई थी।"

"फाउन्टेन पेन! नहीं, मैं वैसे ही चला आया—आपको बधाई देने के लिए। खुदा आपका जोड़ा सलामत रक्खे। हमें एक साफ़ा-अचकन मिलेगी।"

दिनेश हँस पड़ा। फिर पूछा, "मिस्टर सक्सेना चले गये। दो-एक रोज रहना चाहिए था। मैं अपनी ससुराल जाता तो आठ हफ्ते ज़रूर ठहरता।"

लता गुलाबी पड़ गई। बोली, "चले गये। आपने रोका ही नहीं। यह घर उनको पसन्द नहीं आया। यदि आपने होटल में निमन्त्रण दिया होता तो वे ज़रूर रुकते।"

"मैंने नहीं कहा। भूल गया। अन्यथा यह शिकायत क्यों सुननी पड़ती।" कहकर दिनेश ने रूमाल जेब से निकाली और मुँह पोंछ रहा था कि चूड़ी का एक टुकड़ा गिर पड़ा। उसने भाँपा कि लता की आँखें उस पर गड़ी हुई हैं। अब लता चौंक उठी। उसने जेब से और टुकड़े निकालकर मेज पर रखते हुए कहा, "कल न जाने कैसे एक चूड़ी जेब में आ पड़ी। उसी के टुकड़े हैं।"

"जीजी की सहेली ने चूड़ियाँ भेजी थीं। उसने कहा था कि चलो अब आज से सुहागिन बनकर रहने का बहाना मिल गया है।"

"अच्छा?"

"कल वह शृंगार की और सामग्री लाई है। आप चूड़ी के टुकड़े चोरी करके क्यों ले आये हैं?"

"चोरी !"

"तब क्या किसी ने आप की जेब में डाल दी ?"

"चूड़ियों से खेल रहा था। न जाने कैसे जेब में पड़ गई है ! खुद मुझे आश्चर्य मालूम होता है।"

"साइन्स का जमाना है। उड़कर चली आई होंगी। अच्छा जाने भी दीजिए। आपने वह होटल छोड़ दिया। अब कहाँ चले गये हैं ?"

"न्यू रायल में।"

बाहर कार का हार्न बजा। लता बोली, "जीजी आ गई।"

शोफर भीतर आया। उसने लता को एक चिट्ठी दी। लता ने खोलकर पढ़ी और सन्न रह गई। उसका चेहरा सफ़ेद पड़ गया। कुछ न कहकर दिनेश के हाथ में चिट्ठी दे दी। दिनेश ने पढ़ा। लिखा हुआ था, यहाँ अभी-अभी एक दुर्घटना हो गई है। यह भी सन्देह है कि रेखा जीवित रहेगी। रेखा होश में नहीं है। तुरन्त चली आओ।

मिस्टर सिंह की लिखावट थी। दिनेश लता से बोला, "चलो।"

"आती हूँ।" कहकर लता उठी और भीतर चली गई। कुछ देर के बाद कपड़े पहनकर लौट आई।

वे दोनो रेखा के बँगले पर पहुँच गये। भीतर जाकर देखा कि रेखा ख़ून से लथपथ सोफा पर बेहोश पड़ी थी। लता चीख़कर बेहोश हो गई। दिनेश ने उसे सँभालकर लिटा दिया। जब लता को होश आया तो सिविल सर्जन कह रहे थे, "अभी प्राण हैं। शायद बच जायँ। अस्पताल 'एम्बुलेंस' में ले जाना होगा।"

दिनेश लता से बोला, "जो होनहार होगा, टल नहीं सकता।"

अभाग्यवादी दिनेश ने 'होनहार' पर सारी बात रखली। यह भाग्य पर तर्क करने का समय नहीं था। रेखा को 'नर्स' स्टेचर पर ले गई थी। रास्ते में मिस्टर सिंह ने सुनाया कि रेखा उनकी 'पिस्टल' से

खेल रही थीं। उसका विचार एक 'पिस्टल' खरीदने का था। बस उसे खोल रही थी कि धोखे से अचानक गोली छूट गई।

लता का दिल डूब रहा था। दिनेश साथ न होता तो न जाने क्या होता। वह घबरा गई थी। रेखा के कमरे का फर्श खून से रँगा था। उसके सारे शरीर पर कँपकँपी फैल गई थी। बीच-बीच में एक पहचाना हुआ भय उसे घेर लेता था। वह अस्पताल के बाहर कुरसी पर बैठ गई। बदन में थकावट फैल रही थी। वह एक फैसला सुनने के लिये तैयार थी। डाक्टर आकर कहेगा—वह मर गई है। सच ही रेखा जीजी मर रही है। कोई उसे बचा नहीं सकेगा।

दिनेश इस घटना से अप्रतिभ नहीं हुआ। उसे उस मेले की याद आई, जहां देवी का मन्दिर था और वहां भैंसों को बलि चढ़ाया जाता था कि देवी खुश रहा करे। यह साधारण घटना थी कि रेखा की बलि हो रही है। अस्पताल के चारों ओर के वातावरण में एक नीरव चुप्पी छाई हुई थी। उस बड़े हॉल के मोटे-मोटे आइनों से बिजली का प्रकाश बाहर नहीं आ पाता था। वहीं हॉल के भीतर डाक्टर लोग अपनी कुशलता में लीन हैं। कोई पत्ती फड़,फड़ उड़ा। लता चौंकी। दिनेश बोला, "क्या है लता ?"

लता चुप थी। दिनेश कहता रहा, "उस होनहार के खेल पर तुम विश्वास मत करना लता। यह 'होनहार' हमारी निर्बलता का एक पक्ष है। सबल होना चाहिए कि घटनाएँ जीवन पर प्रभाव न डाला करें। बचपन में मैं एक बार एक पूजा में शामिल हुआ था। वहां परिवार के बड़े लड़के की तबियत खराब थी। ओझाजी ने मुर्गी मारकर 'जिन' को खुश रखकर भगा देने की ठहराई थी। आगे मैंने भैंसे कटते देखे हैं। वह दशहरे की अष्टमी पड़ती है न, उस दिन नैपाली गोरखे देवी की पूजा करके भैंसा काटते हैं। तुम तो देवी-

देवताओं पर विश्वास नहीं करती ! यदि करती हो तो कुछ देवी के नाम चढ़ाने का वादा कर दो, यदि रेखा भली हो गई !"

"क्या जीजी मर जायगी ?" गद्गद लता बोली।

"शायद ! उस होनहार को सही साबित करने के लिए मर जाय।"

"मर जायगी जीजी !" लता की आँखों से झर-झर आँसू बहने लगे।

सारा वातावरण एक अजीब व्याकुलता से घिर गया। चारों ओर मौत का सन्नाटा छा गया था। आखिर सिविल सर्जन और लेडी डाक्टर बाहर आये। उनके चेहरे पर गम्भीरता थी। नर्स इधर-उधर जल्दी-जल्दी आ-जा रही थी। मिस्टर सिंह सब से पीछे आये। वे बोले, "कोई ख़तरा नहीं है। गोली फेफड़े से पार हो गई है। अब रेखा के बच जाने की आशा है। वैसे डाक्टरों में मतभेद है। तीन कहते हैं कि अभी कुछ नहीं कहा जा सकता है। लेकिन बूढ़ा सिविल सर्जन का कहना है कि ख़तरा टल गया।"

दिनेश ने उस सिविल सर्जन के चेहरे की व्यस्तता भांपी थी। वह फिर उसी हाल की ओर चला गया। डाक्टरनी डाक्टरों के साथ गपशप कर रही थी।

"आप सच कह रहे हैं न ?" लता ने बच्चों वाले कौतूहल से पूछा। अपनी खिली आंखों से वह मिस्टर सिंह को देख रही थी। उसके मन का डर अभी हटा नहीं था।

"हां, मिस लता।"

अब लता कुछ सँभली। मिस्टर सिंह बोले, "दिनेश, तुम लता को छोड़ आओ। रेखा यहीं रहेगी। यदि चाहो तो फिर चले आना। यहाँ रात किसी न किसी को रहना ही पड़ेगा। मैं इन्तजाम कर लूँगा।"

"मैं आ जाऊँगी।" लता बोली।

"दिन में आपकी जरूरत पड़ेगी।" पास खड़ा हुआ डाक्टर बोला।

लता ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप दिनेश के साथ रवाना हुई। राह में लता बार-बार कांप उठती थी। एक बार उसका हाथ दिनेश की उँगलियों से छू गया। वह अलग हटकर बैठ गई। दिनेश ने कहा, "आपका दिल बहुत कमज़ोर है। अब भय की बात नहीं है।"

"जीजी का वह हाल, उफ़!" लता की आवाज़ बन्द हो गई। वह बहुत उत्तेजित हुई। दिनेश ने परिस्थिति सँभाल ली। उसका सिर ठीक तरह रखकर उसे लिटा दिया। लता के सिर के बालों से उसकी उँगलियाँ अनजाने खेलने लगीं। अब वे बँगले पर पहुँच गये थे।

लता होश में आई! दिनेश ने सहारा देकर उसे भीतर सोफा पर लिटा दिया। उसे असमर्थता का क़ानूनी अधिकार प्राप्त हो गया। लगा कि लता का हृदय अभी साधारण बच्चों का-सा है, भले ही वह बड़ी हो गई है। उनके कुछ संस्कार हैं, जो कि उस परिवार के मर्यादा-वाले दायरे की रक्षा करते रहे हैं। और जो एक, दो, तीन कई युगों से नारी-पुरुष का रिश्ता चला आता है, वह इससे अनभिज्ञ है। इसकी जानकारी के बाद सुकुमार हृदय नहीं चाहिए। उस पर तो समय की बड़ी-बड़ी चोटें पड़ेंगी। हृदय तो आइने की तरह उसे प्रतिबिम्बित करने वाला होना चाहिए, न कि फोटोग्राफी वाले 'निगेटिव' की तरह कि वहां अक्स पड़ जाय। सृष्टि का चलना कुछ भावनाओं पर आश्रित नहीं है।

शीला तथा घर के और लोग आ गये। शीला बहुत घबराई थी। दिनेश बोला, "एक नाउम्मेदी के बाद भी रेखा जीवित है। वह बच गई। यह बड़े आश्चर्य की बात है!"

"अब वह कहाँ है ?" लता की मा ने पूछा ।

"अस्पताल में । कुछ दिन वहीं रहेगी । वह अभी होश में नहीं है । मैं वहीं जा रहा हूँ ।"

अब लता की माँ बोली, "मैं साथ चलूंगी ।"

"माजी, इस वक़्त आपकी ज़रूरत नहीं है । फ़िक्र की बात नहीं । आप कल सुबह आइएगा ।" दिनेश ने समझाकर सबको इतमीनान दिलाया ।

लता को होश आया । चारों ओर आँखें फेरकर चौंकी । अपनी अस्तव्यस्त हालत पर सोचा । दिनेश बोला, "मन को इतना कमज़ोर बनाना ठीक नहीं । अब आप आराम करें । मुझे देर हो रही है ।"

किसी बात की प्रतीक्षा न करके दिनेश हाथ जोड़कर चला गया । लता टकटकी लगाकर जाते हुए दिनेश की ओर देखती रही । वह कड़ी-से-कड़ी बात तथा अग्राह्य घटनाओं को अपनी शक्ति में समा लेता है । उसके लिए कोई बात कठोर और कठिन नहीं है । लता ने देखा कि जितना ही दिनेश उसके समीप आ रहा है, वह उसे पहचान नहीं पाती । वह किसी बात की परवा न कर, अपने मन की करेगा । आवश्यक, निश्चित-सा व्यवहार बरता करता है । आसानी से हर जगह चला जाता है । मानो कोई रुकावट नहीं है ।

•

मिस्टर सिंह रेखा के सिरहाने बैठ हुए थे । सामने से 'टेबुल-फैन' की हल्की-हल्की हवा आ रही थी । दिनेश के पहुँचने पर भी वे वैसे ही बैठे रहे । यदा-कदा टकटकी लगाकर रेखा को देख लेते थे । ऐसा जान पड़ा मानो वे अपने भीतर बहुत परेशान हों । उनके चेहरे पर

उदासी छाई हुई थी। दिनेश पास आया तो वे चौंक उठे। जैसे किसी ने एक भारी धक्का लगाया हो। वे सहमकर, निराशापूर्ण कातर आँखों से उसे देखते रहे। दोनों चुप रहे। कोई कुछ नहीं बोला।

दिनेश ने कहा, "आप जायँ। मैं यहाँ हूँ। आपकी इस बहुमूल्य वस्तु की रक्षा कर लूँगा।"

"दिनेश तू आ गया?" मिस्टर सिंह की निर्जीव देह पर थिरकन हुई। प्राण आया।

"आपकी तबियत ठीक सी नहीं लगती। यहाँ रहकर क्या कीजिएगा! मुझे रोगियों के साथ रहने की आदत हो गई है। अब कोई फ़िक्र की बात नहीं। वे भली हो जायँगी। नौकरानी यहाँ है। नर्स यहीं रहेगी।"

"तूने खाना नहीं खाया होगा?"

"खाना! मुझे भूख नहीं है। ज़रूरत पड़ने पर होटल से मंगवा लूँगा। 'फ़ोन' किये देता हूँ।"

"लेकिन दिनेश?"

"यह, इस भांति बच्चों की तरह बातें करने से कुछ लाभ नहीं। आपको आराम चाहिए। परेशान होने वाली घड़ी टल गई। अब निश्चित होकर ख़ूब सोइए। मैं इस काम में उस्ताद हूँ। कुर्सी पर बैठे-बैठे सैकड़ों रातें काट चुका हूँ। यहां तो आरामकुर्सी भी है।"

अब मिस्टर सिंह उठे। दिनेश उनको बाहर तक पहुँचाने के लिए आया। जब वे चले गये, तो वह बड़ी देर तक बाहर खड़ा रहा। आख़िर ख़ाली मन भीतर लौटा। देखा, रेखा के चेहरे पर सफ़ेद पतली मलमल की चादर थी। वह चुपचाप चिड़िया की बच्ची की भांति सोई हुई थी। उसके पंख न टूट गये होते, तो वह अब तक उड़ गई होती।

और यह वही रेखा है ! उसने उस चेहरे पर से कपड़ा हटा लिया। वह चेहरा मोम की तरह सफेद गढ़ा हुआ-सा लगा। हल्की सांस चल रही थी। सुबह ही इस रेखा ने एक चरित्रहीन लड़की से परिचय कराया था। उस सत्कार की बात को वह अब तक नहीं जान सका हैं। पहले वह लड़की अपराधिन लगी, फिर न जाने क्यों रेखा ने उसे अपराध से मुक्त कर दिया ! रेखा ने उसके लिए आदर बरता। सारी परिस्थिति पर विचार करके दिनेश दंग रह गया। उन छोटे-छोटे खेलों को खेल लेने के बाद, रेखा अब स्वयं एक खेल बन गई है। इस बात की संभावना उसे नहीं रही होगी। अन्यथा वह सावधान तथा होशियार रहती। उसे कुछ ज्ञान है। अब रेखा की इन मुँदी हुई आंखों से कुछ बात ज्ञात नहीं हो सकती। वह अपने होश में नहीं है। प्राण बाक़ी हैं, इसी लिए रक्षा करने का प्रश्न उठ गया है।

अभी इस शरीर का मूल्य है। मौत हो जाती, रेखा नाम का 'व्यय' हो जाता। एक दिन कभी निकट भविष्य में रेखा मरेगी। आज मर जाती तो कुछ नहीं होता। कल लोग उसे भूल जाते। इस नौकरी पर कोई दूसरी आ जाती, जिसे समाज अपना लेता। मिस्टर सिंह तथा कुछ परिचित लोगों की याद के बाद और सब कुछ मिट जाता। दुनिया और समय इसी भाँति क़दम से क़दम मिलाकर चल रहा है।

नर्स आई थी। रेखा की नाड़ी देखी और बोली, "यह ऐसा पहला 'केस' है। गोली निकल गई। एक तरफ का 'लंग' ख़राब हो गया है। ज़िन्दा रहेगी। आप जा सकते हैं।"

"मैं ? नहीं, यहीं रहूँगा।"

"बेकार रह कर क्या कीजिएगा। कोई ज़रूरत पड़ेगी तो नौकरानी है। मेरी ड्यूटी है।"

"मेरे यहाँ रहने से आपको एतराज़ न हो तो......।"

"नहीं-नहीं, आप रहें। मैं आपके सुभीते के लिए कह रही थी। हमें रोज मरीजों के बीच रहते-रहते आदत पड़ गई है।"

"मुझे भी है।" कहकर दिनेश ने पूछा, "यहाँ 'फोन' होगा?"

वह 'नर्स' के साथ बाहर निकला। 'फोन' पर पाँचू से 'थरमस' में 'कॉफी' ले आने को कहा। वह बहुत थक गया था। ये सारी घटनाएँ अचानक हुईं। वह अपने मन में बहुत घबरा गया था। किससे अपने मन की बात कहता!

वह बाहर बरांडे में टहलता रहा। अस्पताल की उस बड़ी इमारत के बाहर कभी वह साफ 'सिमेंट' की सड़क पर दृष्टि फेरता। एक जगह ऊँचे-ऊँचे युकलिप्टिस के पेड़ खड़े आकाश के तारों को छू रहे थे। वह प्रकृति की इस सौन्दर्य-छटा से बाहर था। उस सूखे पत्ते की तरह, जो पतझड़ में आँधियों के साथ इधर-उधर उड़ता फिरता है। बड़े फाटक से साइकिल पर पाँचू आ रहा था। वह भीतर चला आया।

दिनेश चुपचाप कॉफी पीने लगा। तीन प्याले पीकर उसे प्रतीत हुआ कि वह स्वस्थ हुआ! पाँचू ने कोई बात नहीं की। वह चला गया और दिनेश आरामकुर्सी पर लेट गया। पासवाले दूसरे वार्ड में कोई टी० बी० की मरीज स्त्री थी। वह बार-बार खाँसती थी। उसने देखा कि उस औरत का एक छोटा बच्चा है। वह माँ के पास जाने के लिए मचल रहा था। माँ मना करती थी, उसे अपने रोग के डर से पास नहीं आने देती थी। फिर भी अनजान बच्चा मचल रहा था। नर्स से ज्ञात हुआ कि माँ पर पहले से टी० बी० का शक था। बच्चा हुआ और माँ रोगिणी बन गई। वह युवती माँ बहुत परेशान सी जान पड़ती थी। कभी उठकर अपनी सूनी और फीकी आँखों से बच्चे को

देखती। अन्त में हताश होकर बिस्तर पर लेट जाती थी। उसके पास-पड़ोस मोहल्ले की औरतें बारी-बारी से दिन-रात उसकी देखभाल करने के लिए आती थीं। उनका रात-रात जगना रोगिणी के लिए बड़े दिलासे की बात थी। सबकी सब उसे समझाती थीं कि वह शीघ्र ही अच्छी हो जायगी। रोगिणी को सूखी खाँसी थी। वह खुट-खुट खुट करके खाँसती थी। इस आवाज़ को सुनकर बहुत भय होता था।

आज रेखा ने अस्पताल में बसेरा लिया है। यह बात उसने कभी नहीं सोची होगी। उसे घटना की कोई जानकारी नहीं है। दिनेश के मन में उस पासवाली युवती को भली भाँति देख लेने की चाह उठी। उसके लिए दिल में अब भी एक छटपटाहट और आकुलता थी। वह माँ है, भले ही अवस्था अधिक नहीं। वह छोटा बच्चा टुकुर-टुकुर कर माँ की ओर ताकता था। खुट-खुट खाँसी बन्द हो गई। लगा कि वह रोगिणी सो गई है। अस्पताल में चारों ओर सन्नाटा था। रेखा एक छोटे अनजान बच्ची की भाँति सोई हुई थी, जिसको चारों ओर से ढककर उसकी हिफ़ाजत की जाती है। वैसी ही परवा रेखा की हो रही थी, मानो वह छोटी बच्ची हो, जिसे अपनी रक्षा का कोई ज्ञान नहीं है।

अब दिनेश जागकर उस गुजरती हुई रात को पार कर रहा था। वह जानता है कि रेखा ने उससे अपने जीवन में, घर पर और समाज के बीच बचाव की चाहना नहीं रक्खी है। वह निर्भीक और निडर होकर सारा व्यवहार बरता करती है। उसके लिए कोई बात कठिन नहीं है। इस वक्त वह एक दुर्घटना के कारण अपनी सामर्थ्य खो चुकी है। वह चुपचाप लेटी थी। दिनेश उसे देखने लगा; वे ही ओंठ, वही आँखें और सब कुछ अस्त-व्यस्त फैला हुआ। कहीं शर्म और लाज नहीं थी। वह साधारण गोली पार हो गई और रेखा को जीवित रहना था, वह जीवित रही। मौत अभी न आई थी, इसी लिए नहीं

मरी। आज वह मर जाती तो यौवन की हिलोरें लेते इस शरीर आ इस अधकच्चरे सौन्दर्य की महक दिनेश के दिमाग में भर जाती। आगे सुदूर भविष्यवाली मौत के दिन कौन जाने एक भद्दी यादगार बन जाय—पके बाल, टूटे दाँत, स्थूल शरीर। उस भद्दी तसवीर पर उसने नहीं सोचा। रेखा गहरी नींद में सोई हुई थी। वहाँ छाती पर एक बड़ा घाव है। क्या वह उस घाव को देख सकता है ? वह देखेगा। उसे यह अधिकार है। पहले कभी उसने इस युवती को पाने की चाहना नहीं बटोरी थी। यह अनुमान नहीं लगाया था कि वह उसकी सगी होगी। उसके शरीर से वह कोई नाता नहीं रखना चाहता है। वह घाव को देख लेगा। धीरे-धीरे उसने चादर उठाई। नीचे का गरम पशमीना एक ओर सरकाया। नीचे एक सफ़ेद चादर थी। आगे रेखा का नग्न शरीर था। दवा की तेज़ महक नाक में भर गई। छातियाँ उभरी हुई थीं। चारों ओर पट्टियों का जाल था। उस शरीर को देखकर मन में एक अज्ञेय उमंग उठी। वह कुछ क्षण सब कुछ देखता रह गया। उस नग्नता के प्रति उसके मन में सहानुभूति के भाव उदित हुए। फिर दवा की तेज़ महक ने सब कुछ ढक लिया। दिमाग़ में सनसनाहट हो रही थी। वह चुपचाप देख रहा था कि सभ्यता के साथ इन्सान ने कितनी भावुकता अपने चारों ओर लपेट ली है। वह लाज, वह शील, वह शरम......! इस समय रेखा की भावुकता सो रही है। घटना ने उस पर प्रभाव डाला है। अब ज़िन्दगी मामूली बात थी। पट्टियों से घाव ढका हुआ है। वह कुछ नहीं सोच सका। उस शरीर को उसने छू लिया। मुलायम और गरम था। उसने एक-एक करके तीनों चादरें उढ़ा दीं।

दिनेश ने इस रेखा पर मिस्टर सिंह से बहुत कुछ कहा है। अपनी राय देने में वह नहीं चूका है। इस समय उसका वही मत है! रेखा

वैसी ही है। मिस्टर सिंह को रेखा को अपनाने वाला पागलपन सवार है। यहाँ के कई सभ्य युवक पागल कुत्तों की तरह इस शरीर को नोच डालना चाहते हैं। रेखा सावधानी से अपनी रक्षा किया करती है। आज दिनेश ने मौका पाकर उस शरीर को झाँककर देखा है। वह कोमलांगी रेखा बेहोश पड़ी हुई है। पहले उसे इस कोमलता का अनुमान नहीं हुआ था। उस शरीर को ठीक तौर पर ढककर अब वह कुर्सी पर बैठ गया। रेखा की मुँदी आँखें, पतले ओंठ और सफ़ेद पड़ा हुआ चेहरा! वह भ्रम में पड़ गया। नहीं, रेखा के लिए उसके दिल में आदर की भावना है। रेखा इस बात को जानती है! सुबह रेखा ने एक विचित्र चाल रची थी। उस लड़की का परिचय कराते हुए अनजाने सुझाया था कि यह पुरुष का कैसा स्वार्थ है! वह उस 'चुग्गे' का प्रश्न.हल नहीं करना चाहती थी। एक अनैतिक व्यवहार के लिए मन उदास था। उसने उस लड़की की हँसी न उड़ाकर सहानुभूतिवाला बर्ताव किया था। साधारण सामाजिक भावनाओं के बल पर वह उस नारी के चरित्र को कदापि कोढ़-सा स्वीकार नहीं करेगा। रेखा अपने जीवन की असमर्थता से परिचित है। उस लड़की पर उसने कोई दलील आगे नहीं रक्खी है। वह लड़की कुछ नहीं बोली। क्या रेखा यह सुझाना चाहती थी कि उस लड़की के शरीर को पुरुष साधारण किराये पर ले लिया करता है? यह पुरुष की कैसी दया है? यह नारी की लाचारी का सही उपभोग नहीं लगता है। रेखा ने कुछ नहीं कहा था। वह गम्भीर थी। उस लड़की का पिता आख़िर सारी दुनिया की माया-ममता को छोड़कर दूसरी दुनिया को कूच कर गया है। उसके लिए पुत्री ने बहुत कलंक बटोरा, लेकिन वह बचा नहीं। पिता तो एक साधारण धक्के से चटख गया। अब वह उसके लिए रो रही होगी। इसे बहुत दुःख होगा। वह आज तक अपने पिता की रक्षा के लिए अस-

धारण मजदूरी का भार स्वीकार करके आधी-आधी रात को होटल आया करती थी। समाज के प्रति उदासीन रही है। उसका हृदय, नारी-कमज़ोरियों की खान है। उस पर अब सुकुमारता की कोई छाप विद्यमान नहीं है। वह पुरुष से दान मांग कर प्रतिदिन उसकी दासी बन जाती थी। रेखा तो किसी की दासी नहीं है। वह समाज में बराबर का मान और अधिकार रखती है। पुरुष को ख़ूब पहचानती है। जानकर ही उसके साथ सहूलियत बरतती है। रेखा के सुबहवाले कर्तव्य पर उसे आश्चर्य हुआ था। फिर वह उसे भूल गया था। रेखा अपना समाज स्वयं बनाती है। वहां उसे हिचक नहीं रहती। वह कल को अपने उस समाज में इस लड़की को आसानी से जगह दे सकती है। वह लड़की अनैतिक व्यवहार के बाद भी दोषी नहीं है। यह दिनेश का अपना सहज विश्वास है। अब वह होटल के व्यक्तित्व के बाद रेखा की संरक्षता में आ गई है। रेखा आसानी से उसे समाज के बीच कोई ठीक-सा स्थान दिला सकती है। अपनी चर्या में उसे शामिल कर लेगी। तब कोई कुछ नहीं कहेगा। इस लड़की को बहुत कम लोग जानते हैं। होटल के कुछ अनजान मुसाफिरों ने उसे थोड़ा-सा पहचाना है। कुछ ने उसकी आँखें सहमी पाई होंगी। उनको अधिक सोचने-विचारने का समय कहाँ था! वे इतने लोभी नहीं थे! इस व्यवसाय में नारी मोह नहीं बरतती। ख़ुद दिनेश ने क्षण भर इस पर विचार किया है। अब वह उसे भूल जाना चाहता है। रात की उस घटना पर वह भविष्य की किसी छोटी इमारत का ढाँचा नहीं गढ़ना चाहता है। उसे अपनी इस हालत पर खेद नहीं है।

दिनेश को लगा कि वह बड़े ऊबड़-खाबड़ रास्ते को तय कर रहा है। जो ऊँचे-ऊँचे बीहड़ नग्न रूखे पहाड़ों की घाटी है। जिनका सौन्दर्य उनका नग्न भद्दा डरावना रूप है। इस रास्ते को प्रतिदिन

इन्सानों का कारवाँ पार करता है। कहीं-कहीं उनके लिए छोटी-छोटी सरायें हैं। जिनके चारों ओर जीवन के रेत-कण बिखरे पड़े हुए हैं। वहाँ एक दरजे की वैभव की ख़ुशी और दूसरे दरजे की आह के बीच जीवन तेज़ी से चलता है। इस चौड़े रेगिस्तान में कहीं सजावट है तो कोई हिस्सा उजड़ रहा है। लेकिन दिनेश भूल जाता है कि वह मध्यवर्ग के खोखले ढाँचे के भीतर पैठा हुआ है। यदि वह वहाँ से बाहर निकल आँखें खोल कर देख सकता तो रेखा, लता और मिस्टर सिंह नहीं देख पड़ते। वहाँ बड़ी दूर एक भीड़ है, जिसकी आवाज यदा-कदा उसके कानों में पड़ती है। जो व्यवहार-कुशल न होने पर भी ओछे नहीं हैं। वह वहाँ क्यों नहीं चला जाता। यहाँ वह एक नागफाँस में फँस गया है। वह मध्यवर्ग की उजड़ी दुनिया से सोना बटोर लेना सीख गया है। उसे स्वस्थ उपजवाली धरती में पहुँचकर अपना काम शुरू कर देना चाहिए। यही उसके लिए हितकर होगा। यहाँ तो वह एक बीच के समाज के दायरे वाले दलदल में फँस गया है। वह बहुत विचार करता है तो लगता है कि उसका वह साम्यवाद किताबों की पढ़ाई तथा साधारण गपशप तक ही सीमित है। रूस की अक्तूबर-क्रान्ति का असर उसके दिमाग़ पर पड़ा है, लेकिन वह दिमाग़ रोज़ और असरों के झोंके भी खाया करता है। वह उस पर एक बुद्धिवादी की भाँति विचार करता है और कहीं कुछ नहीं पाता। उसने आज तक साम्यवादी धरती को खोदने की चेष्टा नहीं की। वह उस वाद का पाठक-मात्र है। इस लता और रेखा वाले दायरे से भले ही वह सन्तुष्ट न हो पर वह इतना जानता है कि यहाँ यदि उसकी हैसियत बन गई, तो वह बहुत कुछ काम कर सकता है। वह चाहता है कि पहले बहुत बड़ा होकर, आसमान से देखे कि दुनिया का क्या हाल है? तभी वह समाज के रोगी हिस्सों पर नश्तर लगाकर वहाँ से मवाद निकाल सकेगा। अपनी महत्ता को

वह नीचे फेंककर वहाँ से नहीं उठना चाहता है। वह तो आजकल साम्यवादी गुरु बना हुआ है। लेकिन दिनेश अपने झूठे आडम्बर को पहचानता है। आज से नहीं, बहुत दिनों से बार-बार वह अपनी स्थिति को फैलाकर उसकी आलोचना किया करता है। उस आलोचना के लिए वह आधुनिक विज्ञान की सहायता लेता है। उसे बहुत ग्लानि होती है। फिर वह आँख मूँद कर तालाब में कूद कर स्वयं तैरना नहीं सीखना चाहता है। वह तो अभ्यास कर रहा है।

आज की उसकी जो दुनिया है। उसने उसमें कभी लता की तुलना रेखा से नहीं की। वह जानता है कि लता बड़ी भावुक है। गृहस्थी में भाई-बहनों की शृंखला के बीच पली है। वहाँ उस पर उनका अचैतन्य प्रभाव पड़ा है। घर का एक शासन है, अपने कायदे-कानून हैं। रेखा उन सब से दूर है। लता एक व्यवस्था के भीतर रहती है। रेखा दूसरों के लिए व्यवस्था का निर्माण करती है। दोनों के नारीत्व का प्रभाव एक-सा नहीं है। उन धाराओं के बीच दिनेश चुपचाप खड़ा हो रहा है। वह लता एक साधारण झोंके से भयभीत हो गई थी। अब जल्दी ही उसके पीले हाथ हो जायँगे। उसका दुलहिनवाला रूप कितना विचित्र लगेगा! एक बड़ा जलसा होगा। बरातियों की बड़ी पलटन आवेगी, सात भाँवरें होंगी। उसको पिता दान कर देंगे। लता इस 'उपहास' के प्रति आवाज़ नहीं उठा सकती है। रूढ़ियों से जो बातें धर्म की आड़ में नज़ीर बन गई हैं, उनके खिलाफ कोई बग़ावत नहीं करना चाहता है। वह विवाह का सारा प्रदर्शन उनकी उपयोगिता की ग्रन्थि को जोड़ देता है। नारी को पुरुष की सन्तान जनने का अधिकार मिल जाता है। अब वह फलदात्री बन जाती है। आदिकाल की नारी का रूप दूसरा ही था। वह बच्चे जनती थी। वे बच्चे युवा हो जाने पर

उसके नारीत्व से खेलते थे। उस समय कौन किसका पिता है, जानना कठिन था। उन दिनों मा परिवार की स्वामिनी होती थी। उसके पतियों की संख्या सीमित नहीं थी। उन दिनों मानव खोहों में रहा करता था। वे शिकार करके पेट भरते थे। आजवाली भावुकता तथा प्रेम का रोजगार नहीं चलता था। 'सेक्स' एक झुँझलाहट की चर्चा नहीं थी। भावुकता बहुत बाद का प्रसाद है। पहले गृहस्थी की कोई संस्था नहीं थी। वह स्वामिनी मा परिवार को बीस-पच्चीस तक स्वस्थ पुत्र-पुत्रियां भेंट करती थी। उसका गौरव था कि युवकों से स्वस्थ बच्चों की पैदावार करे। आज गृहस्थ बच्चे पालने की नैतिक संस्था है। आज समाज में अस्वस्थता है। धार्मिक, आर्थिक, नैतिक आदि कई दासताएँ हैं। यह विवाह का प्रचलन है। सबका एक गुरु है कि मनुष्य की जाति बढ़े। विवाह उत्पादन की पहली सीढ़ी है। एक लड़की है जो कि गृहस्थी के दायरे से हट कर रात-रात भर पैसों के लिए होटल में पड़ी रहती है। वह उसका व्यवसाय है। आज वह डरती नहीं है। यदि थक जाती होगी तो कोई चारा नहीं। उसके लिए कहीं विश्राम कर लेने की जगह नहीं है। वह स्वयं चलती है। अपने लिए रास्ता बना लेती है। उसे किसी भाँति थकावट नहीं लगती। वह अपने अनुभव के बाद रेखा के आगे निःसंकोच बैठी हुई थी। रेखा ने दिनेश के साथ झगड़ने के लिए यह कैसा हथियार उठाया था? दिनेश को शक्तिहीन बनाकर वह उस पर हमला करना चाहती थी। उसने मौक़ा पाकर आज रेखा के अंगों का निरीक्षण किया है। उस असहाय नारी के प्रति यह उसका कैसा व्यवहार है? नारी-पुरुष के भेद को वह जानता है और यदि चाहे कि उस लड़की के अंगों को रेखा के अंग-अंग से तोल ले, तो वे बांट और तराज़ू सही नहीं होंगे। वे अंग साधारण हैं, फिर भी एक वर्ग की नारी उनका मूल्य बढ़ाना जानती है।

दिनेश झपकी लेने लगा और कुछ देर में सो गया। लेकिन आंखें बार-बार खुल जाती थीं। भ्रम मन में होता कि वह क्यों सो रहा है? आँखें मलकर देखता कि रेखा मसहरी के भीतर सोई हुई है। लेकिन नौकरानी ने कहा, "बाबूजी।"

दिनेश ने नौकरानी की ओर देखा। वह कह रही थी, "आपसे कोई मिलने के लिए आई हैं। बाहर खड़ी हैं।"

झटपट दिनेश उठा और बोला, "दाई, तुम यहीं बैठी रहो। मैं अभी आता हूँ।"

दिनेश चुपके से बाहर चला आया। बरांदे में देखा कि एक युवती काले बुरके में खड़ी है। वह अवाक् रह गया। वह कुछ पूछना चाहता था कि युवती ने मना कर दिया। उसकी उँगलियों की गठन बहुत सुन्दर थी। मन में प्रश्न उठा—वह कौन होगी? वह उसके साथ-साथ बाग़ में पहुँच गया। दोनों एक घनी झाड़ी की ओर बढ़ गये, जहां कि निपट अँधियारा था। वह अपने मन में सोच रहा था कि यह युवती ......? अब आगे बढ़कर वे एक बेंच के पास पहुँचे। युवती उस पर बैठ गई। दिनेश चुपचाप खड़ा था। युवती बोली, "बैठिए।"

उसने बुरका एक ओर सरकाया। दिनेश सन्न रह गया। वह फिर बोली, "आपको उम्मीद रही होगी कि लता आई है। हम दोनों का कद एक-सा है। आप खड़े क्यों हैं? मैं इतनी भूखी नहीं हूँ कि आपको खा जाऊँ। खा सकती, खा डालती। लेकिन इतनी सामर्थ्य नहीं है।"

"आप क्या कह रही हैं?"

"कुछ नहीं। आपने रुपया कर्ज लेकर मुझ पर दया दिखलाई है। मुझे वह दया स्वीकार नहीं है। वह तो आपने मेरा बहुत बड़ा अपमान

किया है। मैंने रुपये नहीं लिए हैं। पांचू आपको लौटा देगा। मैं यह बात जानती हूँ कि आप रास्ते से क्यों लौट आये ?"

"मोहन नहीं मिला। मेरा विचार तो पाँच-सात रोज़ वहीं रहने का था।"

"आपके क्या विचार थे, इस सबसे मुझे कोई सरोकार नहीं। इतना जानती हूँ कि आप लता से प्रेम करने लग गये हैं। सुबह मिस्टर सक्सेना ने आकर आग भड़काई है।"

"आपने सच बात कही है। सच ही मेरे मन में यह भावना उठी। देहात जाने को मन ने गवाही नहीं दी।"

"मैं आज ख़ुद ही भाग रही हूँ। एक बार आपसे मिलना ज़रूरी था, इसी लिए चली आई। आप रेल का टिकट मुझे दे सकेंगे ? हमारे पास पूरा पैसा नहीं है। मैं अपने दोस्त को होटल में छोड़ आई हूँ। उससे घंटे भर की मोहलत माँगी है। यदि आप चाहें......!"

"मैं !"

"आप मुझे उबार सकते हैं।"

"क्या कहा आपने ?"

"आप मेरे साथ क्यों नहीं चले चलते हैं। मुझे बहरहाल भाग जाना है। एक ग़लत आदमी से एक सही आदमी के साथ भागना ठीक होगा। हम दोनों कमज़ोर हैं। न मेरा उस पर ज़ोर है, न उसका मुझ पर। आप मुझे अच्छी तरह सँभाल सकते हैं। मैं आपको सुबह पहचान चुकी हूँ।"

"वह लड़का कौन है ?"

"मैं उसे चार साल से जानती हूँ। पिताजी के मर जाने के बाद अब मैं अकेली नहीं रह सकती। सब जानते हैं कि मैं बदचलन हूँ। ससुराल

का रास्ता बन्द है। यदि आप तैयार हों जायँ! हम लोगों में निभ जायगी। आप व्यर्थ ही क्यों भयभीत हो रहे हैं?"

"क्या?"

"यह ग़लत धारणा है कि एक बार घर से निकली लड़की इज्जत के साथ नहीं रह सकती है। यदि कोई उसे ईमानदारी से रखनेवाला मिल जाय, तो वह सदा वहीं रहेगी। मैं यह अनुभव की बात कह रही हूँ।"

"शायद आप नहीं जानती हैं कि मैं......"

"ठीक है! आप जान-बूझ कर मेरी हँसी उड़ा रहे हैं। पिताजी की मौत के बाद पुरुष की भाँति आपने मुझे दान देना स्वीकार किया। मैं उसकी भूखी नहीं थी। मैंने तो पुरुष से बदला पाया है। दुनिया से घृणा होने पर भी मुझे पुरुष से घृणा नहीं है। मैं आजीवन पुरुष को नहीं कोस सकती हूँ। उसने मुझे पैसा देकर आश्रय दिया और मैंने उसे साधारण शरीर समर्पित किया है। मेरे शरीर का वही एकमात्र सही उपयोग बचा हुआ था। फिर पुरुष को क्यों हिचक होती। उसने अपनी तृष्णा बुझाने के लिए ही मुझे पैसा दिया है। मुझे पिताजी तथा अपनी रक्षा करने के लिए धन प्राप्त हुआ और पुरुष की मानसिक भूक मिटी या नहीं, मैं नहीं जानती। शायद न मिटी होगी। मैं सही साधन नहीं जानती। अपनी कमी के लिए मुझे दुःख होता था। मैं एक वेश्यावाले हाव-भाव नहीं जानती हूँ। मेरे संस्कार गृहस्थी वाले हैं। अब मेरे लिए सब रास्ते बन्द हैं। मैं अभी केवल अठारह साल की हूँ। मौत की बात नहीं सोच सकती। अठारह साल की अवस्था में भला कौन मरना चाहेगा?"

"आप यह सब बात क्यों कर रही हैं?" झुंझलाकर दिनेश बोला।

"यदि मेरी जगह पर लता काले बुरके में यहाँ आई होती तो आप फूल उठते। यह आपका कैसा न्याय है ?"

"मेरा न्याय !"

"मैं तो अपनी अधिक परवा नहीं करती। आप न उबारेंगे और कई पड़े हुए हैं। आप पर मेरा अधिक विश्वास है।" यह कहते-कहते वह गद्गद् हो उठी। आँखों में आँसू छलछला आये।

उस लड़की का चरित्र नहीं है। अपने भविष्य की रक्षा के लिए वह चाहती है कि दिनेश उसका साथ दे दे। फिर ये दोनों आवारा क्या करेंगे ? दिनेश ने सोचा कि वह उसके साथ चला जायगा। लेकिन मन में कोई धमका रहा था—हैं ! है !! रेखा बीमार है। वह अच्छी होती तो वह चला जाता। वह उसकी आज्ञा लेकर ही जा सकेगा। वह सावधान होकर बोला, "आप उस लड़के के साथ जा सकती हैं !"

"जा सकती हूँ !" दुहराकर वह फूट-फूटकर रोने लगी। बाद में बोली, "आप पत्थर का दिल रखते हैं।"

"नहीं ! नहीं !!"

"मैं यही समझती हूँ। आप किसी का आदर नहीं कर सकते।"

"यह झूठ है।"

"मैं सच बात कह रही हूँ। आप लता के पीछे पागल हो गये हैं। उसके दीवाने हैं !"

"क्या ?"

"सब इस बात को जानते हैं। स्वयं रेखा भी जानती है। किन्तु वह नासमझ लड़की लता अभी भूल में है। वह इस बात को भलीभांति नहीं समझ पाती। उसका कोई निश्चय नहीं है। वह पगली है !"

"पगली है वह !"

"आपकी ही तरह।"

"मेरी !"

"आप मेरे चरित्र को उपेक्षा के रूप में व्यवहार में नहीं बरतते हैं। मेरा अनादर न करना चाहकर भी कोई उपाय नहीं निकालेंगे। संभवतः मेरे चले जाने के बाद मुझे अपवादी नारी कहेंगे। अच्छा, वह टिकट जल्दी दे दो। जिस गाड़ी से कल तुम भाग नहीं सके हो, मैं उसी से जाऊँगी।"

"तुमको सच ही टिकट चाहिए ?"

"अब मैं ज्यादा इन्तजार नहीं कर सकती। रेखा से सब बातें कह देना। शायद तुम यह न जानते होगे कि रेखा तुमको कितना प्यार करने लगी है। तुम इस तरह उसके जीवन में व्यर्थ चले आये और उसी के आगे बार-बार लता की दुहाई देते हो। क्या तुम्हारा ख़याल है कि यह सब केवल एक घटना ही थी ?"

"कौन-सी ?"

"यही असावधानी से 'पिस्टल' का छूट जाना।"

"नहीं, नहीं! वह रेखा ने ख़ुद जान-बूझकर चलाई थी। वह सोचती थी कि वह मर जायगी। मैं सारी बात भलीभांति जान गया हूँ। मैंने सुबह को रेखा की आँखों में ख़ूनियोंवाली दृढ़ता पाई थी। वे सुर्ख़ अधिक थीं। उसकी सारी मख़ौल तथा हँसी में वेदना की पुट थी। उसके बाद उसे मेरी चालीस रुपयेवाली चिट मिली। वह बहुत परेशान हो गई। राह भर मैं उस पर सोचता रहा। एकाएक मेरे मन में एक दुर्भावना उठी और मैं लौट आया। मैं जानता था कि वह अपने प्राण पर आक्रमण कर सकती है। यदि लता के यहाँ न जाकर सीधे उसी के घर गया होता तो वह वर्तमान बदल जाता। उसने मौका पाकर ही यह किया है। अब उसे अपने इस कर्त्तव्य पर बहुत आश्चर्य होगा।"

"आपने ठीक बात सोची है। सुबह रेखा ने मुझसे कहा था कि आजकल उसका जी बहुत ख़राब रहता है। उसके भीतर यौवन निचुड़ता जा रहा है। मिस्टर सिंह की बात उसने सुनाई थी। बच्चों के प्रति उठते हुए मोह की चर्चा की थी। वह बच्चे की चाहना भूली हुई थी। आप-सा बच्चा किसे भला नहीं लगेगा। वह चाहती है कि तुम, न कि मिस्टर सिंह, उसके बच्चे के पिता बनो।"

"आप क्या कह रही हैं शान्तिजी ?"

"रेखा आपको बहुत प्यार करती है। फिर भी यदि आप मेरे साथ भाग जावेंगे तो वह नाख़ुश नहीं होगी। वह सिर्फ़ एक बच्चा चाहती है। मैं अपना बच्चा उसे सौंप दूंगी। मुझे यह मंजूर होगा।"

"मुझे यह ज़रूरी नहीं लगता। मैं तो यह सोच रहा हूँ कि रेखा के मन में मेरी हत्या की भावना सबल हो गई थी और उसे उसने अपने पर ही लागू कर दिया।"

"तो जाने दीजिए। वह टिकट कहाँ है ? आप सारी दुनिया को कब तक कुचलेंगे। यह असम्भव वाला उपकार......!"

"मुझे झगड़ना नहीं है।"

"आपकी झगड़ा न करनेवाली आदत !" कहकर वह फूट-फूट कर रोने लगी। दिनेश हतबुद्धि चुपचाप रह गया। उसे समझाते हुए बोला, "यह ठीक बात नहीं है। क्या आपको मुझे बदनाम करने में ख़ुशी होगी ?"

शान्ति चुप हो गई थी। उन बड़ी-बड़ी आँखों से आँसू ढुलकते हुए देखकर दिनेश सन्न रह गया। शान्ति तो सँभलकर बोली, "टिकट दे दीजिए। वह इन्तज़ार कर रहा होगा।"

"आप जा ही रही हैं ?"

"हाँ, बाहर मेरा ताँगा खड़ा है। वह स्टेशन पहुँच गया होगा।"

दिनेश ने टिकट निकाल कर दे दिया। वह उसे लेकर बोली, हमें आशीर्वाद दो कि....."

"तुमको आशीर्वाद दूं! शान्ति, पुराने जमाने में नारी, परिवार की स्वामिनी होती थी। वह आदेश देती थी और सब उसका पालन करते थे। जब परिवार के लोग शिकार पर अथवा दूसरे परिवार के साथ लड़ाई पर जाते थे तो वही अगुआ होती थी। उसका काम परिवार को बढ़ाना था। परिवार की रक्षा का समस्त भार भी उस पर ही था। नारी का वह दरजा धीरे-धीरे मिट गया और वह 'दासी' बन गई। आज उसका कोई व्यक्तित्व नहीं है। मैं देख रहा हूँ कि तुममें वही स्वामिनी बनने की क्षमता है। तुम इस समाज के कच्चे बन्धनों को तोड़ सकती हो। मेरे मन में तुम्हारे लिए आदर है। पर मैं बुद्धिवादी पंगु हूँ। विचार पर अधिक विश्वास करता हूँ। उस बात को व्यवहार में बरत लेने का साहस नहीं होता है और संभवतः तुम न जानती होगी शान्ति कि स्वामिनी बनने के लिये नारी की आपसी स्पर्धा हिंसक होती थी। मां और बेटी तक आपस में एक दूसरे की हिंसा कर लेने की सोचती थीं। वह हिंसा पशुओंवाली हिंसा सी होती थी। लेकिन देख रहा हूँ कि रेखा, लता अथवा तुममें वह हिंसावाली भावना नहीं है। यदि वह बात होती तो........."

"उस परिवार की भावना से आप मुझे बरी कर दें। आपकी शुभ आकांक्षाएँ हमें चाहिएँ। रेखा से मेरी ओर से माफी माँग लीजिएगा। उसे कभी दुःख न दीजियेगा। वह बहुत दुःखी है। मैं उसका दुःख पहचानती हूँ।"

"दुःख और दुःखी होना?"

"अन्यथा उसे बच्चे की चाहना न होती।"

"और तुम जा रही हो?"

"हाँ, मुझे जाना ही है।"

"कुछ दिन तक रुक नहीं सकोगी कि मुझे सोचने का मौका मिल जाय।"

"इस अपवाद के बाद एक क्षण नहीं ठहर सकती हूँ। आप शायद यह न जानते होगे कि शहर के कई सभ्य आवारे मेरे पिता को फूंकने के बाद अपने नौकर भेजकर आश्वासन दिला चुके हैं कि वे मुझे घर में डाल लेंगे। कुछ शराब पीकर मेरे मकान के बाहर धरना देकर बैठे हुए हैं। मैं तो पिछली खिड़की से भागकर चली आई। अब मेरे लिए यह आवश्यक नहीं रह गया है कि मैं आगे के दरवाजे से वहाँ फिर प्रवेश पा जाऊँ। पिता को धोखा देने के लिये मैंने सदा पिछली खिड़की से निकलकर होटल की शरण ली है। आज वह नहीं हो सकेगा। अब आप मुझे क्षमा कर देंगे, ऐसी आशा है।"

"मैं ?" दिनेश क्या कहना चाहता था, समझ नहीं सका।

"मैं रुक नहीं सकती। आप एक बार खुले हृदय से मुझे बिदा दे दीजिए। इसके लिए मैं आजीवन आपकी आभारी रहूँगी। गाड़ी का वक्त हो गया है। अच्छा तो रेखा की रक्षा कीजिएगा।"

वह लड़की चुपचाप चली गई। दिनेश ने उसे नहीं रोका। यह एक सच्ची घटना थी। दिनेश का विवेक बात तोलने में असमर्थ रहा। क्या सच ही रेखा उसे प्यार करती है। यह लड़की जल्दी नहीं करती तो वह उसके लिए कोई निश्चित बात सोच लेता। वह आँधी की तरह तेजी से आकर, उस सबल पेड़ को हिला देना चाहती थी। असफल रही। अब वह चली गई है। उसका चला जाना अखरा, पर उपाय कोई नहीं था। व्यर्थ उससे लगाव रखकर अब कोई उपाय नहीं है। वह सब भूल होगी। जीर्ण सामाजिक व्यवस्था के छोटे छोटे तिनके इसी भाँति उड़ जाते हैं।

वह उस धुंधली रात को चारों ओर देखने लगा। वह लम्बा-चौड़ा अस्पताल का हाता, जहां मनुष्य की अस्वस्थता का एक अपूर्ण ढाँचा-मात्र है। चारों ओर कुछ प्राप्त नहीं था। लँगड़े, लूले, रोगी, अपाहिज ही हैं। यह एक पगली लड़की यहाँ आई थी और अब भाग गई है। वह ओस पड़ी हुई दूब को कुचलता हुआ अस्पताल की ओर बढ़ गया। सीढ़ियां पार कीं। भीतर एक ओर नौकरानी फर्श पर सो रही थी। रेखा उसी तरह पड़ी हुई थी। वही सफ़ेद पड़ा हुआ चेहरा था। वह उसकी ओर एकटक देखता रह गया।

फिर दिनेश को नींद आई। वह झपकी लेता हुआ, बीच-बीच में चौंक आँखें खोलकर इधर-उधर कुछ ढूँढ़ने लगता था। उस वातावरण में अभी तक उस लड़की की मखौलवाली हँसी विद्यमान थी। लेकिन स्वयं वह चली गई थी। वह आंखें मूंदकर कुछ सोचने लगता। तभी कोई चुपके से उसके कान में कह देता—तुम ख़ुश रहो। वह तुम्हारी अपनी कौतूहल की दुनिया है। मुझे सन्तुष्ट रखनेवाला वहम अपने मन से हटा देना। मैं अपने साथी के साथ भाग रही हूँ। अज्ञेय भविष्य का ज्ञान हमें नहीं है। क्या स्वयं तुम इस दुनिया से दूर नहीं भाग जाना चाहते थे? मैंने उसे व्यवहार में बरत लिया है। मैंने प्यार किया है। उस प्यार पर उत्सर्ग हो गई हूँ। तुमको अपने साथ लाने की चेष्टा मैंने नहीं की है। मैं तुमसे एक बात पूछ लेना चाहती थी कि क्या तुम मुझे प्यार करते हो? मैंने पहले-पहल तुमको सुबह देखा है और यह मेरा अपने जीवन का पहला पाप था कि परिस्थिति की पूरी जानकारी हासिल किये बिना ही तुमसे प्रेम करने लगी। मैंने तुमको किसी ख़ास कसौटी पर नहीं परखा है। अपनी साधारण समझ

से परिस्थिति को तोलकर विश्वास कर लिया कि तुम सच्चे इन्सान हो। मेरा चरित्र नहीं है। इसीलिए तुम्हारे चरणों को छू लेने का साहस मुझे नहीं हुआ। आधी रात को मुझे देखकर आपके मन में मुझे पहचान लेने का सवाल उठा था। उस अँधेरे पहर की एक खोह के भीतर......। अपना पूरा परिचय आपको देती, पर अवकाश नहीं मिला। मैं निम्न हूँ और तुम मुझसे घृणा कर सकते हो। लेकिन रेखा और लता से जिस प्रेम को पाने की आकांक्षा तुमको है, वह स्वस्थ नहीं है। मेरे मन की आग स्वस्थ है। मैं खोटी हो सकती हूँ, वह 'आग' नहीं। उस आग के प्रभाव की जानकारी तुमको नहीं है।

दिनेश अपनी इस भावुकता पर हँस पड़ा। सोचा कि वह जीवन के सुन्दर चित्र खींचना सीख गया है। रंगीन तितलियों को पकड़ना चाहता है। सपने देखकर झुठाई में पड़ा हुआ है। झूठ से सदा ही जीवन आरम्भ हुआ है, और जो संस्कार जन्म से आ गये हैं, उनसे छुटकारा पाना जरूरी है। उन संस्कारों के पोषण के लिए संस्कृति का सहारा लेना आवश्यक नहीं।

वह हठात् चौंक उठा। उसने लता को पत्र लिखा था। क्या वह, उसे जीत लेना चाहता है। या वह उसकी लता के लिए जीवन की पहली भावुकता है, जो सम्भव बन गई। वह क्यों दावा करता है कि वह नारी के साधारण गुण से पूर्ण परिचित है। वह तो उस सबसे अनभिज्ञ जान पड़ता है। नारी कमज़ोरी का प्रात प्रस्तुत प्रश्न सुलभ है। नारी भाग्य से निकली हुई पहेली नहीं है और वह दिनेश एक पागल जिद्दी बच्चा है। उसने लता को पकड़ना चाहकर, रेखा के दिल पर नश्तर लगाया है। वह बेहोश रेखा चुपचाप सो रही थी। दिनेश का दावा गलत निकला। रेखा जीवन से क्यों निराश हो गई। मिस्टर सिंह उसकी निराशा बढ़ा देते हैं। अपने जीवन वेग में वह आत्महत्या का संरक्षण

कर लेने तुली। सब उसे एक घटना कह दें; पर रेखा वस्तु तथा परिस्थिति के ज्ञान के बाद अब क्या सोचती होगी। अब उसकी निराशा पिघल गई है। वह सबल निकलेगी। उस आशावादी रेखा का व्यक्तित्व ? रेखा पर उसने विश्वास किया है। अपने विश्वास में उसे ले आने की फिर भी चेष्टा नहीं की। वह रेखा के प्रति उदासीन नहीं है। राह में एकाएक उसे रेखा का ख्याल आया। उस सम्भव भावना के लिए वह रेखा की रक्षा करने आया था। वह लड़की बार-बार सावधान करती थी, मानो उसे परिस्थिति की पूरी जानकारी हो। यह आश्चर्य की बात है कि वह रेखा को इतनी जल्दी पहचान गई। यही सबकी धारणा है कि वह तो अपने घमंड में रहा करता है। उसका काम हर एक बात को उलझा देना है। लता, रेखा तथा वह चरित्रहीन लड़की उसे अपने से अलग न रखना चाहें; पर उसके व्यक्तित्व से समझौता नहीं करना चाहती हैं। वे जानती हैं कि दिनेश उनके नारीत्व का उपहास उड़ाकर सवाल पूछा करता है, जो कि सच बात नहीं है। यह उच्च मध्यवर्गीय समाज अपनी थोथी संस्कृति का ढोल पीटा करता है। न यह नीचे उतरना चाहता है, न आर्थिक स्थिति के कारण साहूकारों के चंगुल से छुटकारा पाता है। इसका अपना झूठा अभिमान है। ये श्रेणियां आर्थिक तल पर निर्भर रहती हैं। एक दूसरी के बीच कोई ख़ास सीमा नहीं है।

दिनेश को नींद आ गई। वह सोया रहा। जब नींद टूटी, दिन चढ़ आया था। बरामदे में धूप फैली हुई थी। नर्स रेखा का टेम्परेचर ले रही थी। रेखा की आँखें वैसी ही मुंदी हुई थीं। पास टी॰ बी॰ के मरीज़ की खुट-खुट खांसी बार-बार दिल पर चोट मारती थी। उसकी बच्ची मां के पास जाने के लिए मचल रही थी। उसने नर्स से पूछा, "वह कब से बीमार है ?"

"पांच महीने हो गये हैं।"

"और बच्ची?"

"मां के पास उसे नहीं रहना चाहिए। वह मां का दूध नहीं पीती।"

दिनेश जानता है कि प्रति दिवस औजारों के जरिये वह दूध निकालकर बाहर फेंक दिया जाता है। मां अपने इस साधारण अधिकार से वंचित है।

नर्स दिनेश को चुप देखकर बोली, "इसमें आश्चर्य क्या है? विज्ञान की कसौटी पर जीवन को परखकर खरा बनाना चाहिए। वह औरत चाहती है कि उसके एक लड़की भी हो जाय। इसी लिए वह मरना नहीं चाहती है।"

"क्या वह मर जायगी?"

"अभी कुछ नहीं कहा जा सकता है। उस लड़की की आकांक्षा का सवाल आप पूछ सकते हैं। यह अपनी-अपनी भूख है। कल ही उसने यह भेद मुझसे कहा था। माना कि कन्या होगी तो वह भी रोगिणी होगी। अपनी अपाहिज हालत को भूलकर वह चाहती है कि फिर एक बार मां बन जाय, जो कि सम्भव नहीं है।"

"क्यों?"

"माना कि वह कुछ स्वस्थ हो गई। मातृत्ववाली आस्था न रह सकेगी। उसका 'आपरेशन' हुआ है।"

"तब उसकी भावुकता......"

"वह पूरी न होगी। वह कल रात बार-बार मुझसे पूछती थी कि वह मैर तो नहीं जायगी। वह कसमें दिलवाती थी। लाचारी में मुझे झूठी कसम खानी पड़ी। वह बच्चा उसके प्रेमी का है। समाज के विरुद्ध उसने बग़ावत की थी। उसे समाज का कोई डर नहीं है।"

"प्रेमी का बच्चा और समाज का डर नहीं है ?"

"वह जायज बच्चा नहीं है। उसका प्रेमी उससे छुटकारा चाहता है। इस बीमारी में एक बार भी उसे देखने नहीं आया। यह तो रोज उसे ख़त भेजती है कि अच्छी हो रही है। उसे लिखेगी कि अपनी सेहत की परवा किया करे। कई हिदायतें रहती हैं। इसे उसकी आवारागर्दी का पूरा ख्याल है। उसे समय पर रुपया भिजवाती है। अभी हाल में लिखा था—बच्चे का चेहरा तुमसे मिलता-जुलता है। वह तुमने जो बचपनवाला फोटो दिखलाया था, बिलकुल उसी की तरह है। वह मेरे पास आने को मचलता है। डाक्टर पास नहीं आने देते। तुम यहाँ मत आना। मैं अच्छी हो रही हूँ।"

"उन चिट्ठियों का उत्तर क्या आता है ?"

"कुछ नहीं। चिट्ठियां डाक में छोड़ दी जाती हैं। उत्तर पाने की उत्सुकता उसे नहीं रहती। हर तीसरी तारीख को नियमित रूप से रुपया भेज दिया जायगा। घर भर परेशान है। रुपया कहीं न कहीं से लाना ही पड़ता है। बड़े घर की एकलौती बेटी है, इसीलिए कोई मना नहीं करता। उसके आगे किसी की नहीं चलती। लेकिन शायद वह अधिक दिन जीवित न रहेगी।"

कहकर नर्स चुप हो गई। दिनेश ने इस प्रश्न पर कोई उत्साह नहीं दिखलाया। वह खुद ही बोली, "हमारी कसमों से रोगी को सांत्वना जरूर मिलती है। उसका जीना-मरना हमारे हाथ में नहीं है। मेरा अनुमान है कि वह मर जायगी। कल से ह्यू मिरेज, भीतर खून बहना आरम्भ हो गया है। अब भारी खतरा है।"

"कौन, शीला, माजी आई हैं।" दिनेश उठ खड़ा हुआ। बाहर जाकर माजी को हाथ जोड़कर अभिवादन किया।

"रेखा कहां है ?"

"भीतर, अभी बेहोश ही है। लता कैसी है?" दिनेश ने शीला से पूछा।

"वह अभी सो रही थी।"

माजी रेखा के पलँग के पास पड़ी कुरसी पर बैठ गईं। शीला चुपचाप खड़ी थी। "बैठ जा शीला।" दिनेश ने कहा।

माजी ने चारों ओर एक सन्देहपूर्ण दृष्टि डाली। फिर कहा, "मैं जानती थी कि यह सब होगा। लापरवा लड़की है। घर पर कोई देखभाल करनेवाला नहीं। बड़ी उम्र के हो जाने से क्या होता है? मैंने शुरू में कहा था कि हमारे साथ रह। पढ़ी-लिखी लड़कियों से किसी की नहीं चलती।"

"यह तो होनहार था।" दिनेश ने कहा।

"धर्म नहीं मानेंगी; पूजा नहीं करेंगी; भगवान् की हँसी उड़ाती हैं। पढ़-लिखकर सब कृस्तान हो गई हैं। हमारा तो जमाना कट गया। इनकी न जाने कैसे निभेगी! घोर कलियुग आ गया है।"

"माजी, सब की ही निभ जाती है। लता की भी सेहत भली नहीं है, आप सच ही कहती हैं। लेकिन वक्त तो बुढ़ापा लाने का अवसर ही है।"

"लता रात भर पढ़ती रहेगी। सुबह नौ बजे उठ जाय, धन्य भाग्य!"

'मा, चुप रह।" शीला ने टोका। वह मा की इस ज्यादती का विरोध करती है। जानती है कि कल उसकी बारी आवेगी। आधुनिक लड़की सदा से इसके खिलाफ जिहाद बोलती आई है।

रेखा उधर पड़ी हुई थी। अभी वह किसी के जगाने से जाग नहीं उठेगी। एक है लता, अपने में ही मधु-मक्खियों की रानी बनकर रहती है। किन्तु है बहुत कोमल। तीसरी वह तेज लड़की है। जो ठीक

अवसर जानती है। पैसा बटोरकर रखनेवाले दरजे से पैसा आसानी से निकाल सकती है। वह दान का आसरा नहीं ताकती। ख़ुदमुख्तार बनकर उस लड़के के साथ भाग गई है। आगे की आर्थिक समस्या वे स्वयं सुलझा लेंगे। क्या वह फिर रोजगार शुरू करेगी? उस पर सोच कर अब क्या होगा? रेखा को डर लगा रहता है कि उसके चरित्र पर लोगों को विश्वास नहीं है। वह स्वयं दिनेश से कुछ नहीं कहती। चुपचाप उसकी सारी बातें स्वीकार कर लेती है। वह उस पर विश्वास करती है। लता गृहस्थी में प्रवेश पाते ही सुघड़ गृहिणी बन जायगी। वह आवारा लड़की, उस आवारा लड़के को पाकर पिछली सात भांवरें बिसार चुकी है। वह अपनी रक्षावाला ज्ञान जानती है। वह लड़का उसके खोटे चरित्र से परिचित है। वह सभ्य वेश्या नहीं है। वह तो वर्तमान जीवन से भागकर नया जीवन चाहती है। वह उस पर शासन करना चाहती है। क्या यह सम्भव है?

मिस्टर सिंह आ गये थे। दिनेश उठकर बोला, "आप सब लोग तो बैठे ही हैं। मैं जरा होटल हो आऊँ।"

"मैं यहीं हूँ।" लता की मा बोलीं।

दिनेश होटल पहुँचा। पांचू को बुलाकर उससे पूछा, "वह कहां है?"

"वह कल रात चली गई। रुपये नहीं लिये।"

"कहां?"

"किसी को मालूम नहीं है।"

"उसके घर पर गया था?"

"वहां ताला पड़ा हुआ है।"

बस, दिनेश चुप हो गया। उसकी वे बातें धमकी नहीं थीं। वह सचमुच ही चली गई है। दिनेश कुछ सोच नहीं सका। उस लड़की पर उसकी बुद्धि नहीं टिकती है। वह दिनेश से कम भावुक है। उसे अपनी बातों के साथ-साथ उनके कर्तव्य पर भरोसा है। वह तो खुद रेखा तथा लता के साथ शतरंज की बाजी लगाया करता है, ताकि वे दोनों उससे उलझकर प्रेम करने लगें। वह अपने तर्क से उनको जीत लेना चाहता है। रेखा सब कुछ जानती है। इसी लिए असमर्थ हो ऐसा खेल खेल लेने पर तुल गई। जीवन को अकारथ नहीं माना जाता। उसका तो मूल्य है। फिर वह रेखा की कैसी सनक थी कि अपना मूल्य एक गोली से मापने पर तुली। इस सबमें कौन-सा तथ्य था। उसे जिस अज्ञेय को पाने की तड़प है, वह स्वस्थ हो उसे पाने की ओर सचेष्ट क्यों नहीं होती? फिर यह सब निराशा स्वयं मिट जायगी। सुबह रेखा ने उस लड़की को अपने घर बुलाकर परिचय दिया था। वह क्यों उस लड़की को आगे ले आई थी? क्या पुरुष-जाति का बड़प्पन जताने के लिए कि यह उसका अपराध है? आज की लड़कियां पहेली गढ़ना खूब जानती हैं। कभी तो स्वयं पहेली बन जाती हैं। उनके आगे स्वस्थ गृहस्थों के निर्माण की भावना नहीं रहती। वे नहीं जानती हैं कि स्वस्थ परिवारों का बढ़ना समाज के लिए कल्याणकारी होता है। राष्ट्र का बल स्वस्थ परिवार तथा बलवान् बच्चे ही हैं। उन पर ही भविष्य निर्भर है। सैनिकों की सबल जाति सदा से निर्बल जातियों पर आधिपत्य जमाती रही है। निर्बल जातियां धीरे-धीरे मिट रही हैं।

और वह क्षयरोगवाली लड़की?—वह लेट गया। भारी थकान लगी हुई थी। वह अनुभव कर रहा है कि वह कभी-कभी बहुत थक जाता है। इस थकान का बटवारा चाहता है। किसी से एक सामाजिक

समझौता कर लेना चाहता है। वह रेखा, लता, वह लड़की! क्षय की रोगिणी की भांति ही वह लड़की है। एक बहुत बड़ा लड़कियों का गिरोह उसके आगे आता है, जैसे कि वह चरवाहा हो और वे लड़कियां ढोर। वह एक मोटा जानवर वहां से छांटकर ले आवेगा। वे सब तो...

पांचू ने जगाया। पूछा, "कुछ खाना आवेगा?"

उसे बड़ी भूख लग रही थी। पांचू न जाने इस बात को कैसे जान गया। होटल में रहते-रहते वह आदमी नामक जानवर को भली भांति पहचान लेता है। उसकी हर एक ज़रूरत को जानता है। उसे हर एक इन्सान को ख़ुश रखनेवाली तदबीर आती है। दिनेश ने पांचू से पूछा, "गरम पानी होगा?"

"हां।"

"तो पहले नहा लूँ। बड़ी सुस्ती आ रही है।"

वह कुछ देर के बाद खा-पीकर लेट गया। पांचू को समझाया कि वह एक घंटे आराम करेगा। अपने में निश्चय किया कि वह व्यर्थ बहुत बातों पर विचार किया करता है। यह ठीक नहीं।

जब नींद नहीं आई तो वह उठकर अस्पताल पहुँचा। रेखा वैसी ही पड़ी हुई थी। वह सोई हुई थी। जैसे सदा ऐसी ही नींद में रहेगी, जिसे मौत नहीं कहते हैं। माजी वहाँ अकेले बैठी थीं। दिनेश से पूछा, "खाना खा लिया? सुना, होटल में पड़े हो।"

"यह शिकायत किसने की है?"

"शीला कहती थी।"

"उसने सच बात कही है।"

"इस तरह वहां कब तक रहोगे? ठीक से खाना न मिलता होगा।"

"अभी शहर की हालत देख रहा हूँ। पीछे समझ-बूझकर डेरा-डंडा जमा लूँगा।"

"घर फिर भी घर ही होता है।"

"नहीं माजी, वह आदत नहीं है। बचपन आर्य-समाज के यतीमखाने में कटा। कुछ बड़ा हो जाने पर शहरों की धर्मशालाओं का आसरा लिया। उन बड़े-बड़े सेठ-साहूकारों के पुरखों का नाम जपा, जिनके नाम से उनकी स्थापना हुई थी। उसके बाद पढ़-लिखकर सभ्य नागरिक हो गया हूँ। अब होटलों में रहा करता हूँ।"

"मा के पास नहीं जाते? उसे यहीं बुला लो।"

"उनको मैं नहीं जानता। आर्य-समाज के बाद की बातों की मुझे जानकारी है। उससे पहले के सबूत मालूम नहीं।"

माजी यह सुनकर स्तब्ध रह गईं। लेकिन दिनेश हँसता हुआ बोला, "बहुत कठोर व्यवहार का आदी हो गया हूँ। आर्य-समाज में बच्चों की टोली के साथ गीत गा-गाकर भीख मांगा करता था। अपने को अनाथ कहकर भले परिवारों से दया की भिक्षा बहुत मांगी है। सारी जिन्दगी वैसी ही चलती थी। तब ऐसा जान पड़ता था कि मांगने और हाथ पसारने की विद्या में निपुण होकर एक दिन बहुत बड़ा साधु बन जाऊँगा। किन्तु एक घटना हो गई। तब मैं मैट्रिक में पढ़ता था। एक लड़की उस अनाथालय में दाखिल हुई थी।" कहकर दिनेश रुक गया। देखा कि लता न जाने चुपके से कब चली आई है। वह चुप रहा।

लता बहुत सुस्त-सी जान पड़ी। शीला और मिस्टर सिंह बाहर बाग़ में चले गये थे। रेखा उसी भांति लेटी हुई थी। कमरे में वे ही तीन थे।

"फिर क्या हुआ?" माजी ने पूछा।

माजी के प्रश्न का क्या उत्तर दिया जाय। दिनेश ने लता की ओर देखा, वह अस्वस्थ देख पड़ी। वह मुरझाई थी।

लेकिन दिनेश लाचारी में बोला, "वह अनाथ लड़की थी। परिवार में ताऊन की बीमारी फैली और उसे नहीं निगल सकी। किसी भले परिवार में उसे स्थान नहीं मिला। अनाथालय का रास्ता खुला था, लेकिन उसमें सबसे बड़ा दोष यह था कि वह युवती थी। वह संस्था का आदर जानती थी, मान को पहचानती थी। साथ ही साथ वहाँ के संरक्षक अपनी आंखों से उसका मुल्य परखने में नहीं चूके। उनकी उस पर उदारता बढ़ने लगी। वह लड़की बहुत भयभीत हो गई। वह मारी जाती थी। मैंने उसके बदन पर बेतों के दाग देखे थे। उसका मुझ पर न जाने क्यों बहुत विश्वास हो गया था। वह मुझसे अपनी सारी बातें कह दिया करती थी। उसकी रक्षा करना चाहकर भी मैं लाचार था। एक-दो बार मैंने उसकी रक्षा का प्रश्न हल करना चाहा। अधिकारी यह न देख सके। हम लोगों को अलग-अलग कर दिया गया। मुझे वहाँ से निकाल देने की धमकी दी गई। वह घुलती जाती थी। हम सब लड़के असहाय थे। हम दूर से दिलासा भर दे सकते थे। कभी अनायास वह मिल जाती; तो मैं उसे विश्वास दिलाता था कि भविष्य में एक दिन उसका छुटकारा अवश्य करूँगा। वह मेरी बातों पर हँसकर कृतज्ञता प्रकट करती थी। एक दिन वह मुझसे आकर बोली कि वह गर्भवती हो गई है। वहाँ के संरक्षक चाहते हैं कि यह अपवाद न फैले। वे उसे धीरज और दिलासा देते गये। वह उनके प्रयोगों को अपनाने के लिए सहमत नहीं हुई। वह उन आश्रयदाताओं के तोहफे को समाज को भेंट करना चाहती थी। अब उसका सारा विद्रोह सुलग चुका था। वह मौका पाकर वहाँ से भाग जाना चाहती थी। उसे आश्वासन दिलाया गया कि उसकी हर प्रकार से रक्षा की जायगी। फिर

उसे धमकी दी गई और अन्त में वह मारी-पीटी गई। फिर भी वह उनकी बातों को स्वीकार न कर सकी। एक दिन मुझे अधिकारियों ने वहां से निकाल दिया। उन सबका मत था कि मैं वहां के अनुशासन को बिगाड़ रहा हूं। मैंने एक दिन सुना कि कई ख़ून की क़ै करके उस लड़की ने प्राण दे दिये। बाहर समाचार-पत्रों में छपा कि अनाथालय में हैजा हुआ था। सबने उस प्रतिष्ठित संस्था के अधिकारियों की बात पर विश्वास कर लिया। मुझे पहले बहुत दुःख हुआ।" दिनेश ने बात समाप्त-सी कर दी। लता की ओर देखा, वह आँखें मूँदे हुए थी। जब कि रेखा की आंखें अधखुली थीं। क्या रेखा होश में आ गई है? एक अजीब भय मन में उठा।

लेकिन लता ने सवाल पूछा, "फिर क्या हुआ?"

दिनेश स्तब्ध रह गया। बोला, "कुछ नहीं। कई लड़कों से मेरी मुलाकात हुई। वे सब उसे बहुत प्यार करते थे। वह उन सबको सुन्दर-सुन्दर खेल सिखलाती थी। उनके लिए खिलौने बनाती थी। उसे विश्वास था कि मैं उसे शीघ्र ही वहां से छुड़ा लूँगा। उसे मुझ पर बहुत विश्वास था। मैं उसके छुटकारे का रास्ता न निकाल सका।"

फिर वह चुप हो गया। रेखा की आंखें तो मुँदी हुई थीं। तो वह अभी सो ही रही थी। लता ने सवाल किया, "दिनेशजी, दया हमारा अस्तित्व उठा देती है, ठीक बात है न?"

"दया और उसका अस्तित्व एक दूसरे पर निर्भर है।"

"आप तो उस दया की गठरी को खोलना नहीं चाहते। स्वयं ही लादे रहते हैं।"

लता की मा उठ गई। बोली, "मैं तो जाऊँगी। तू चलेगी न?" लता स्वयं छुटकारा चाहती थी। वहां वह क्या करती। वह उठी।

दिनेश उठा और उनको बाहर तक पहुँचाकर लौट आया। लता और माजी चली गई थीं।

दिनेश ने उनको जाते हुए देखा। आज उसका मन बहुत कोमल हो गया था, अन्यथा वह उस भूली लड़की की बात न कहता। क्या वह यह कहने का अधिकारी था? वह लड़की मर गई, लेकिन उसकी स्मृति वैसी ही ताजी है। कभी-कभी उसकी याद करके वह बहुत रोया करता है। उस मिट्टी बनी लड़की के प्राणों को इसी भांति वह व्यर्थ जीवित रखने की चेष्टा करता है। वह चाहती थी कि वह बच्चा जीवित रहे। उसकी यही प्रार्थना अधिकारियों से थी। किसी ने उसकी बातों की परवा नहीं की। सब उसकी भावुकता पर हँसते थे। उस बच्चे के साथ उसका जीवन मिट गया।

एक यह रेखा है कि अपनी चाह को नहीं कहेगी। जीवन से छुटकारा पाना चाहती है। इतनी समझदार होकर आत्महत्या करने पर उतारू हुई है। वह जीवन में अड़चन क्यों पाती है। वह लड़की जीते न चाहकर जीवित रहकर विद्रोह करना चाहती थी, और यह रेखा······

"क्या मैं जीवित हूँ दिनेशजी?" रेखा चुपके से बोली।

रेखा की आंखें खुली थीं, दिनेश बोला, "चुप रहो रेखा। तुम अभी बहुत कमजोर हो।"

"मैं कहां हूँ?"

"अस्पताल में।"

"तो मैं मरी नहीं हूँ। मैं मरना नहीं चाहती थी।"

रेखा हांफने लगी। दिनेश पास सरककर बोला, "तुम सो जाओ।"

रेखा बड़ी देर तक आंखें खोले रही। मूँदकर सोई नहीं। बहुत कमज़ोरी थी। कुछ देर के बाद नर्स ने आकर दवा दी। वह नशे में फिर सो गई।

अब नर्स बोली, "जागकर क्या कहा था ?"

"कुछ नहीं ।"

"अभी उसका बेहोश रहना ही ठीक होगा ।"

"क्यों ?"

"पास के उस टी० बी० वाले मरीज की हालत ठीक नहीं है। फिर भीतर ख़ून बहना आरम्भ हो गया है, वह रुक नहीं रहा है। डॉक्टर हैरान हैं ।"

"ऐसी बात क्यों हुई ?"

"उसे भारी सदमा पहुँचा है ।"

"कैसा सदमा ?"

"उसके प्रेमी ने उसकी सब चिट्ठियां लौटा दी हैं। पिछला भेजा हुआ मनीआर्डर वापस आ गया है। दिन को सब लोग सो रहे थे। पोस्टमैन ने उसे वह सब दिया। तभी वह जोर से बोली, "अब मैं जिन्दा नहीं रहूँगी ।"

"उसकी मा पास ही खड़ी थी। उसने उठकर देखा कि वह गुस्से में चिट्ठियाँ फाड़ रही थी। उसने सब नोटों के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। वह सब बखेरती हुई बोली—यह है तुम्हारी धन-दौलत। उसे नहीं चाहिए। उसके मुँह से 'उफ' निकला और धड़ाम से गिर पड़ी। अब वह किसी से बातें नहीं करती। मैं गई थी। वह बोली, 'मैं अब जिन्दा नहीं रहना चाहती हूँ ।"

"क्यों बीबी ?" मैंने आश्चर्य से पूछा था।

"वह नाखुश हो गया। अब मेरा जीवन व्यर्थ है ।"

"झूठ बात है। कल तुम चिट्ठी लिखना ।"

"चिट्ठी ! उसे अब कुछ नहीं चाहिए। उससे कोई उम्मेद नहीं की जा सकती। मैं बिना लड़की की मा बने हुए ही मर रही हूँ ।"

दिनेश आश्चर्य में पड़ गया। नर्स बोली, "यहां तो तरह-तरह के मरीज़ आते हैं। पूरा अजायबघर है। ऐसी बातें लगी ही रहती हैं। हम रोज सब देखा करती हैं।"

"क्या मैं उसे देख सकता हूँ ?"

"कोई हर्ज नहीं है। आज रात को चले चलना।" नर्स बोली।

—रात को मिस्टर सिंह आये थे। कुछ देर बैठकर चले गये। पाँचू खाना लाया। दिनेश चुपचाप खा-पीकर अकेला बैठा हुआ था। अब वह किताब पढ़ने लगा।

"आप चलेंगे ?" नर्स आकर बोली।

दिनेश अचकचाकर उठा। नर्स के साथ बाहर निकल गया। वे दूसरे वार्ड में पहुँचे। देखा कि वह साधारण मध्यवर्गीय परिवार की युवती है। चेहरा बहुत सुन्दर था। कहीं-कहीं हड्डियाँ चमक रही थीं। वह दिनेश को देखकर उठने की चेष्टा करती हुई बोली, "मैं आपके बारे में सुन चुकी हूँ।"

"आप लेटी रहें।"

"रेखा आपसे प्रेम करती है न ?"

"यह झूठ बात किसने कही है ?"

"फिर आप इतनी परेशानी उठाकर आधी-आधी रात क्यों जागते रहते हैं ?"

"यह तो साधारण कर्तव्य है।"

"कोई किसी के लिए इतनी मुसीबत नहीं झेलता। आपने उसके प्रेम को ठुकराना चाहा था, लेकिन आप समझदार हैं। अब बात समझ ..."

"...ाप क्या कह रही हैं ?"

"मैं रेखा को पहचानत हूँ।"

"आप ?"

"वह मिस्टर सिंह के कारण सारे शहर में बदनाम है। सब भले घरों के लोग यह बात जानते हैं। शायद आप यह नहीं जानते कि समाज की लड़ियां चारों ओर फैली हुई हैं। मैंने उसे कई बार देखा है। मैं उसके दिल की बातों का भली-भांति अनुमान लगा लेती हूँ। आप मेरी सारी कहानी सुनकर मौत की घड़ी से पहले मुझे सांत्वना देने आये हैं। मैं आपकी आभारी हूँ। रेखा ने आपको नारी जाति के प्रति दया करनी सिखला दी है। मैं आपको देखकर ही भांप गई थी कि रेखा कट्टर आदमी की दासी बनकर रह सकती है। आप पुरुष अधिक हैं।"

"अब आपका स्वास्थ्य कैसा है ? आप ठीक हो जावेंगी।"

"मैं मर जाऊँगी। उसकी मुझे परवा नहीं है। क्या आपको नर्स के दिलासे पर विश्वास नहीं है ? आप स्वय मुझे देखने आये। यह मेरे अच्छे भाग्य थे। रात को जब कि तुम और रेखा सो रहे थे, मैं चुपके उस कमरे में गई थी और तुम दोनों का चेहरा पहचानकर लौट आई। मुझे अपनी मौत से खुशी नहीं है। मुझे पुरुष ने ठुकराया है। वह मेरा पति नहीं है। वह मेरा पुरुष है। अन्त में उसने मेरे प्रति दुर्व्यवहार किया कि मुझे छोड़कर भाग गया। वह मेरी मृत्यु का कारण बन गया है। पुरुषों का यही हाल है। वे इसी भांति नारी को कुचलने में अपना गौरव समझते हैं। वे यह नहीं जानते कि दूसरी जाति पर क्या बीतती है। आपके आ जाने से मुझे काफ़ी सहारा मिल गया है। मैं अकेली बहुत डर रही थी। अब खुशी से मर सकती हूँ। मैं स्वयं आपको बुलाने की सोच रही थी कि आपने आकर उबार लिया। आप एक बात मानेंगे ?"

"कौन-सी बात ?"

"मेरे सिर पर हाथ रखकर 'हामी' भरिए।"

दिनेश ने उसके सिर पर हाथ रखकर बात स्वीकार कर ली। तो वह गद्गद होकर बोली, "कभी आपके लड़की हो तो उसका नाम आनन्दी रखना।"

उस लड़की की आंखें भीग गई थीं। दिनेश इस आशीर्वाद को पाकर बोला, "आनन्दी!"

"मैंने अपनी लड़की के लिए यही नाम चुना था।"

दिनेश चुप रहा। कुछ बोल नहीं सका।

"तब कभी आपको मेरी याद आ जाया करेगी। दूसरी बात यह है कि किसी से प्रेम न करना। उससे मन में दुर्बलता आ जाती है। संकोच बढ़ जाता है। मैंने तो प्रेम करके ही धोखा खाया है। यह बहुत देर के बाद ज्ञात हुआ कि पुरुष की दृष्टि में प्रेम एक खेल भर है।"

"यह आपकी झूठी धारणा है।"

"तो वह प्रेम न होगा, उसे आपसी विश्वास कहेंगे। गृहस्थी में प्रेम नहीं चलता। आपसी समझौता रहता है।"

यह दिनेश ने कब जाना था कि इस भांति उत्तर-प्रत्युत्तर उसे कभी स्वीकार करने पड़ेंगे। वह उस लड़की को देख रहा था। उसकी बातों को चाव से सुन रहा था।

"अब आप जावें।" वह अनायास बोली।

"क्यों?" हठात् वह चौंक उठा।

"आपको दुःख हो रहा है।"

"मुझे, और दुःख?"

"मेरे मर जाने का दुःख।" कहते-कहते उसकी आंखों से झर-झर आंसू बहने लगे। इससे पहले कि दिनेश कुछ कहे, नर्स ने आकर टोका डाक्टर आ रहा है।

दिनेश अपने वार्ड में लौट आया। रेखा सो रही थी। उसका चेहरा चमक रहा था। वह बैठ गया। मन में बेचैनी थी। वह किताब पढ़ने लगा। नींद आ गई थी।

आधी रात गुजर गई थी कि नर्स ने जगाकर सुनाया कि वह युवती मर गई।

"मर गई?" दिनेश ने पूछा। मानो विश्वास नहीं हुआ हो।

"यह तो सब जानते थे।"

दिनेश बाहर आया। उस मिट्टी बनी लड़की को देखा, जिसके प्राणों का अभी कुछ देर पहले मूल्य था। उसके चेहरे पर मुसकान थी। वह दार्शनिक बनकर इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यह ज़िन्दगी कुछ नहीं है। कांच की चूड़ी की भांति कहीं खटका पा चटख सकती है। वह इस व्याख्या से बहुत सन्तुष्ट था।

वह चुपचाप बाहर निकला। रेखा के कमरे की ओर नहीं मुड़ा। बाहर निकला और फाटक पार करके तेज़ी से सड़क पर चलने लगा। बड़ी देर तक चलता रहा। जब जरा सँभला तो पाया कि वह लता के बँगले के हाते के भीतर था। चारों ओर सुनसान था। बाग के पेड़ चुपचाप खड़े थे। एक पक्षी की फटफट कानों में पड़ी, फिर चारों ओर चुप्पी छा गई।

लता का मन ठीक नहीं था। दिनेश ने जिस लड़की की बात कही थी, उसकी समस्त घटनाओं को सुनकर उसका मन उद्वेलित हो उठा। उस लड़की की बातें तथा उसकी आकृति अनायास उसके हृदय पर अंकित हो गई थी। दिनेश ने बिना किसी हिचक तथा भावुकता के

सारी बातें कह दी थीं। कहीं कुछ नहीं छिपाया। शीला आज इधर-उधर कूद रही थी। क्या इस शीला का लड़कपन ऐसा ही रहेगा? इतनी बड़ी हो जाने पर भी काम कुछ नहीं करती। दिन भर खेलेगी, स्कूल जाना ही उसकी सारी दिनचर्या है। उसने झुँझलाकर पुकारा—"शीला!"

"क्या जीजी?" कहती हुई शीला भीतर आई।

"जा, अपनी किताबें ले आ। दिन भर बहुत खेल चुकी है।"

"किताबें ले आऊँ?"

"हाँ, जा। इम्तहान नज़दीक है। अब रोज़ तुम लोगों की देख-भाल करनी होगी।"

"जीजी!"

"क्या है?"

"हम तो सिनेमा जा रहे हैं।"

"सिनेमा!"

"बाक्स रिज़र्व है, तुम नहीं चलोगी?"

लता चुप रही। यह साँझ हो आई है। सब तैयार हैं। वह बोली, "शीला, आज तू चली जा। लेकिन कल से पढ़ाई ठीक किया कर। मैं तो न आ सकूँगी। तबियत ठीक नहीं है।"

उसकी मा ने सुन लिया। आकर पूछा, "क्या तबियत ख़राब है लता?"

"माजी चक्कर-सा आ रहा है। तुम चली जाओ।"

वे सब चले गये। वह अकेली-अकेली कमरों में जाकर उनका [illegible]ण करने लगी। सब कमरों में लापरवाही से चीजें रक्खी गई [illegible]ह रसोईघर का मुआयना करने में नहीं चूकी और मिसरानी [illegible]ी की ख़बर ली कि वे दोनों लापरवा होती जा रही हैं। फिर

बाग़ में जाकर माली को तलाश किया। वह नई फलों की कलमों को सींच रहा था। वह कुएँ पर पहुँची, वहां 'डाइनमो' चल रहा था तथा पानी तेज़ी से निकलकर नाली में बह रहा था। वह अपने बाग़ की सब बटियों में घूमी। सब पेड़ों, लताओं, झाड़ियों को सावधानी से देखा। कुछ देर तक टेनिस कोर्ट के लान पर घूमती रही। फिर माली की लड़कियों से फलों के बारे में पूछती रही। जब वहां मन नहीं लगा तो गाय के पास पहुँची। ग्वाला गाय दुह रहा था। काली पालतू बिल्ली उसके चारों ओर चक्कर काट रही थी।

आज वह शीला पर क्यों गुस्सा हुई है। इसीलिए न कि दिनेश पर गुस्सा होने का उसे कोई अधिकार नहीं है। तो यह दिनेश बचपन से इसी भाँति ज़िन्दगी बसर करने का आदी है! उसका अपना सगा कोई नहीं है। किसी से वह अपनी कीमत आँकवाना नहीं चाहता। उसने उस अनाथालयवाली लड़की की बातें सुनाई हैं। जैसे कि उसका अपना वही कर्तव्य है। उस श्रद्धा को वह आज तक बटोरकर सँवारे हुए है और लता के जीवन में कुछ घटनाएँ तेजी से आ रही हैं, जिनके बारे में वह स्वयं कुछ नहीं जानती है। दिनेश कृत्रिम धन्धे का आदी नहीं है। उसे किसी की सहानुभूति नहीं चाहिए। वह किसी का मत सुनना नहीं चाहता है। सुनकर दलील नहीं करता है। वह साधारण बन्धन से मुक्त है।

वह गोल कमरे में पहुँची। वहाँ मेज़ पर साँझ की डाक धरी हुई थी। कुछ चिट्ठियां खुली थीं। पिताजी क्लब चले गये थे। वह उनमें अपनी चिट्ठियां देखने लगी। उसके हाथ एक लिफाफा लगा। किसी लड़की ने उसके नाम भेजा था। पता कॉपिंग पेन्सिल से लिखा हुआ था। आर० एम्० एस्० की मोहर थी। उसने लिफाफा फाड़ डाला। चिट्ठी पढ़ी। सिर्फ चार लाइनें थीं। नीचे दस्तखत नहीं थे। दिनेश के

प्रति सावधान किया गया था कि उसको प्यार करना घातक सिद्ध होगा। उसने सुझाया था कि वह उन दोनों की शुभचिंतक है तथा दोनों को पहचानती है।

उसने एक बार चिट्ठी पढ़कर रख दी। उसने दूर से यह कैसी बात लिखी है। वह स्वयं भेद बनकर क्यों रहना चाहती है। कापिंग पेन्सिल से लिखे अक्षरों के बीच स्याही के धब्बे चमक रहे थे। लगता था कि लिखनेवाली भावुक नारी है, अन्यथा आंसूवाला लोभ न बखेरती। वह आखिर उन दोनों के लिए इतनी चिन्तित क्यों है? उसे पत्र लिखने का अधिकार किसने दिया। वह स्वयं तो अलग रहना चाहती है। वह दिनेश को भली भांति जानती है। दिनेश रेखा जीजी और उसके लिए एक पहेली है। वह स्वयं दिनेश से कभी कोई सरोकार नहीं रखती। आज तो वह दिनेश का भीतरी रूप पहचान गई है। वह एक लड़की की तसवीर दिल में छिपाये हुए है। अब उसे किसी नई तसवीर की इच्छा नहीं है। वह नारी-छाया सदा शाप-सी उसके चारों ओर मँडराया करती है। उसके प्रति अपने कर्तव्य की भावना उसने व्यक्त कर दी है। आज दिनेश के हाथ में रेखा जीजी है। अब वह स्वयं उस भार को ले लेगी। वह रेखा जीजी के पास शीघ्र ही चली जावेगी। लेकिन 'कार' सिनेमा चली गई है। उसकी सेहत ठीक नहीं कि पैदल चली जावे। दिनेश की आंखों में एक दिन उसने खूनी की भावना पाई थी। क्या उसका अनुमान ठीक नहीं था?

मेज पर एक मासिक पत्रिका पड़ी हुई थी। उसने 'रैपर' खोल डाला तथा उसके लेखों की सूची पर दृष्टि डाली। उसके कुछ पन्ने पलटकर रख दिया। मन बहुत ही अस्वस्थ था। वह चुपचाप पलँग पर लेटकर सोचने लगी कि वह चिट्ठी लिखनेवाली लड़की कौन है? अपनी सब सहेलियों के अक्षर तो वह पहचानती ही है। वह उसी प्रकार पड़ी

रही। बड़ी रात को सिनेमा से लौटकर शीला ने उसे जगाया। लता आंखें मलकर उठी। पूछा, "कैसी फिल्म थी ?"

"बहुत अच्छी नहीं थी। सिनेमावाले अभी तक पारसी थियेटर के युग के प्रभाव से बाहर नहीं हैं।"

"यह तो हमारे समाज के सांस्कृतिक विकास की कमी है। तू यही न देख ले कि सिनेमा ने ड्रामा का ख़ात्मा कर दिया है। उसे जड़ से मिटा दिया है।"

"ठीक हुआ। भला आधी-आधी रात तक कौन थियेटर में जागता ?"

"नहीं शीला, अभी हमारी संस्कृति का कुछ और ह्रास होना बाकी है। किसी समाज की संस्कृती जब चरम सीमा पर होती है, तब वहां के साहित्य में सुन्दर-सुन्दर नाटक रचे जाते हैं। जनता को जाग्रत करने के लिए उनका प्रदर्शन होता है। तुम किसी जाति का इतिहास ले लो। मिसर, ग्रीस, रोम हो अथवा भारत; जन-नाट्यशालाओं की आज नितान्त आवश्यकता है।"

तभी माजी आकर बोलीं, "लता, तूने खाना खा लिया ?"

"माजी, मुझे भूख नहीं है।"

"अच्छा, तो ओवलटीन और दूध पी लेना।"

लता का सिर दुख रहा था। शीला दबाने लगी। माजी दूध ले आईं। लता पीकर सो गई।

आधी रात को लता की नींद टूटी। उसकी सारी देह दुख रही थी। मन व्याकुल था। दिल में एक अजीब छटपटाहट थी। सिरहाने से टार्च निकालकर उसकी रोशनी में उसने घड़ी देखी, अभी कुल दो बजे थे। फिर नींद नहीं आई। वह उठकर कमरे में टहलने लगी। आखिर थककर आरामकुरसी पर बैठ गई। तभी उसने धीमी आवाज

सुनी। कोई उसे पुकार रहा था। लता ने पहचाना कि ,दिनेश खिड़की के पास से पुकार रहा है।

लता थरथर काँप उठी। पास जाकर बोली, "मैं आ रही हूँ।"

अब वह नीचे उतरी। बाग़ में पहुँची थी कि दिनेश बोला, "वह टी० बी० वाली लड़की मर गई है।"

"वह मर गई ?"

"तुमको यही सुनाने आया हूँ। वह अभी-अभी मरी। मैं स्वयं नहीं जानता कि वह क्यों मरी है। मुझे यह आशा नहीं थी। इसी लिए मैं तुमको यह बात सुनाने आया हूं।"

लता के शरीर पर सिहरन हुई। उसने उस युवती को देखा था। वह अभी जवान थी। इस छोटी अवस्था में मर जायगी, यह नहीं सोचा था। वह आश्चर्य में पड़ गई कि मौत कितनी आसान होती है। स्वयं सावधान हो गई। कोई उत्तर नहीं दिया।

दिनेश बोला, "इन्सान कुछ नहीं है। कभी और कहीं पर मर सकता है। इसे उसका भाग्य नहीं स्वीकार किया जा सकता है। यह भाग्य दासता के युग में राजपुरोहितों ने हमें दिया है। जनता की दासता उठ जाय, भाग्य स्वयं मिट जायगा। यह तो जनता का एक निर्बल पक्ष है। इस लड़की का भाग्य क्या यही था कि वह अस्पताल में मर जाय।"

"आप तो नास्तिक हैं।"

"लता, बात यह नहीं है। यह व्यक्ति का प्रश्न नहीं है। मैं तो समझता हूँ कि समाज के भीतर व्यक्ति रहता है। उस समाज में लाखों करोड़ों इन्सान रहते हैं। उनको भाग्य से बांध लेना अनुचित बात होगी। लेकिन समाज पिछले संस्कारों तथा विश्वासों पर कुछ पीढ़ियों

तक तो चलता ही है। आगे उस पर लोगों को सन्देह होने लगता है और वे ऐतिहासिक घटनाओं का वैज्ञानिक विश्लेषण कर समाज को नये विचार देते हैं।"

"मैं कहना भूल गई कि मुझे आज एक लड़की की चिट्ठी मिली है।"

"किसकी चिट्ठी?"

"किसी भाग्य और भगवान् पर विश्वास करनेवाली लड़की ने लिखा है कि आप मुझसे प्रेम करते हैं। मेरे उस शुभचिंतक ने अपना नाम नहीं लिखा है। मुझे चेतावनी जरूर दी है कि मैं इस फन्दे में कदापि न फँसूँ।"

"मैं उस लड़की को जानता हूँ लता।"

"आप उसे जानते हैं?"

"हां, मैं उसे भली भांति जानता हूँ।"

"वह कहां रहती है? मैं कल उससे मिलूंगी।"

"वह तो शहर छोड़कर चली गई है। जो बात तुम्हें लिखी है, उसी बात को मुझसे कहने के लिए कल रात वह अस्पताल में आई थी।"

"आप क्या कह रहे हैं?"

"रेखा उस लड़की को मुझसे अधिक जानती है। वह ठीक बातें बता सकेगी। तुम उससे पूछ सकती हो। उसे अच्छी हो जाने दो।"

"जीजी कैसी हैं?"

"रेखा होश में आ गई थी। उसे नींद की दवा दे दी गई है। मेरे आते ही तुम्हारे समाज में एक भूचाल आ गया है। मैं यही देख रहा हूँ। सदा मैं चुप रहा हूँ। जीवन भर झगड़ों के बीच रहा। पुराने सामाजिक आदर्शों पर मेरी आस्था नहीं । उससे समाज का कल्याण

हो सकता है। आज जागृति की भावना समाज के भीतर रहनेवाले हर एक व्यक्ति में है। बुद्धिवादी दरजेवाले व्यर्थ की आलोचना कर, अपनी जागृति को नष्ट कर देते हैं, जब कि और स्वस्थ दरजों में यह भावना स्वयं पनपती है। ये ही स्वस्थ श्रेणियां अगुआ बनेंगी और उनके पीछे खड़ा होगा बुद्धिवादी दल। व्यक्ति समाज को नहीं बदलता। समाज व्यक्तियों को ढालता है। व्यक्ति अपने-अपने प्रभाव से समाज पर असर डालते रहते हैं। समाज के नीचे की सतह से उठे हुए व्यक्ति समाज को सही रूपरेखा दे सकते हैं। उनका बुद्धिवादी होना आवश्यक नहीं है।

"यह तो आपका अपना दावा है न !"

"नहीं लता, तुम शायद सुनकर आश्चर्य करोगी कि उस मरी युवती के चे ह पर, मैंने उस अपनी बचपनवाली लड़की के चेहरे की झलक पाई है। क्या यह कम आश्चर्य की बात है। मैंने चौदह साल की उम्र में एक अठारह साल की लड़की से प्रेम किया था। मैं आज तक उसके प्रभाव से छुटकारा नहीं पा सका। मैंने आज अनुमान लगाया है कि मौत सुखकर होती है। उस लड़की के मुख पर मुसकान खेल रही थी। सोचता हूँ कि शायद वह खुशी-खुशी मरी होगी। मैं आज उसके भार से छुटकारा पा गया हूँ।"

"छुटकारा ?"

"यह सच बात है। अब मुझे उसे याद नहीं करना होगा। पहले मैं सोचता था 'कि वह मेरे पीछे भूत बनी-बनी भटकती होगी।' वह अकसर यही हँसी-हँसी में कहा करती थी। उसकी बात का मुझे पूरा इतमीनान था। लेकिन······"

"कहिए न। आप तो चुप हो गये।"

"चुप, नहीं—नहीं !" कहकर उसने अपना बटुआ खोला और उसमें से काग़ज़ की एक छोटी-सी पुड़िया निकाली।

"यह क्या है ?"

"उस लड़की की एकमात्र यादगार।"

"क्या है ?" लता ने कौतूहल से पूछा।

दिनेश ने पुड़िया लता को दे दी। लता ने खोली। किसी लड़की के झोंटी के बाल थे। वह स्तब्ध रह गई। बालों वाली पुड़िया हाथ से छूट गई।

"उसके पास और क्या धन-दौलत थी, जिसे वह मुझे देती। मैं वहाँ से एकाएक निकाला गया था। यही तोड़कर देते हुए उसने कहा था—ये तुम्हारी रक्षा करेंगे। लेकिन आज मैं स्वयं अपनी रक्षा कर लेता हूँ। शायद इनको रेखा को देता। वह इसकी अधिकारी नहीं है। मुझे गृहस्थ नहीं बनना है। तुमको सौंपना ठीक होगा।"

"मुझे !"

"चिट्ठी में लिखी बातें ठीक हैं। मैं स्वयं समझने लगा था कि दिल में तुम्हारे लिए मोह बढ़ रहा है। आज उस 'टीस' को दिल से निकालकर फेंक देना उचित लगा। अब मैं उस अपराध से अपने को बरी पाता हूँ।"

लता उस पुड़िया को हाथ में लिये हुए खड़ी की खड़ी रह गई। वह अवाक् दिनेश को देख रही थी। दिनेश माना नहीं। कहता ही रहा, "मैं हर बात की जिम्मेवारी स्वीकार कर लेता हूँ। आज उस टी० बी० वाली लड़की ने भी मुझे एक भार सौंपा है। अपने सिर की कसमें खिंचाकर मुझसे प्रार्थना की है कि मैं निकट भविष्य में अपनी होनेवाली लड़की का नाम 'आनन्दी' रक्खूँ। उसने यह नाम अपनी होनेवाली लड़की के लिए चुना था। जिसकी चाहना उसे थी। मैंने उसे मंजूर कर

लिया। लेकिन मैं गृहस्थी के दायरे से अलग रहनेवाला व्यक्ति ठहरा। यह कहाँ ज़रूरी है कि हर एक गैरजिम्मेदार आदमी गृहस्थ बने। गृहस्थी तो स्वस्थ व्यक्तियों के लिए है। इस बात का निपटारा हो ही जाना चाहिए। तुम गृहस्थ बन जाना। तुम उस योग्य हो। यही मेरा अनुरोध है। अधिक कुछ नहीं कहूँगा।"

लता बुत की तरह चुपचाप खड़ी रही। कुछ देर दिनेश को देखती रही। आँखें थक जाने पर उसने उनको झुका लिया। दिनेश माना नहीं। वह बोला, "पेड़ों की कलमें लगाकर स्वस्थ फसलें तैयार की जाती हैं। गन्ने को ले लो। एक ही से भाई-बहन के अंकुर निकालकर कलम तैयार की जाती है। आज विज्ञान ने सारी बातों की व्यवस्था अपने हाथ में ले ली है।"

वह चुप हो गया। वास्तविक बातों से बाहर बहक गया था। अब परिस्थिति समझकर चुप हो रहा। लता खड़ी ही थी। उसे यह जानकारी नहीं थी कि दिनेश 'इतना अधिक पुरुष है। वह अपनी सारी भावुकता को बिसार, विद्रोह को उखाड़कर बोली, "आपकी दोनों बातों पर विचार करके किसी दिन अपना निर्णय सुना दूँगी। इस समय आप क्षमा करें। मैं अस्वस्थ हूँ।" हाथ जोड़कर वह अभिवादन करके चली गई।

दिनेश ने उस जाती हुई लड़की को देखा। वह उसे मुक्त कर चुका है। यही वह लड़की चाहती थी। वह उसे कोई आशा नहीं दे सकता था। लता समझदार थी, उसके मन में भय पैदा करके कोई लाभ नहीं हो सकता है। वह अपने मन में सोचने लगा कि यह लता कभी मा बनेगी। उसका मा का स्वरूप पाकर वह अपने को धन्य समझेगा। यही लता की सही जगह है। वह उस संस्था के योग्य है। इसी तरह की लड़कियाँ गृहस्थी को सँभाल लिया करती हैं। वह बहुत

गम्भीर लड़की है। वह इसी भाँति रेखा पर क्यों विश्वास नहीं कर लेता। रेखा कितनी ही सरल बात करे, उसके आगे दिनेश अपने को छिपाना पसन्द करता है। रेखा नारी है, पर वह यथार्थ में समाज की साधारण नारी की श्रेणी में नहीं आती। वह अपनी रक्षा करना जानती है। उसे लोगों का ख़याल भी है। उसका अपना आश्रय है। बचपन में उस लड़की से उसने प्रेम करने की शिक्षा पाई थी। अब वह महसूस कर रहा है कि वह अकेला नहीं रह सकता। वह अपने बचपनवाले प्रेम से समस्त नारी-जाति की भिन्न-भिन्न मौलिकताओं से व्यर्थ में ही उलझ जाता है। आज वह लता के आगे अपने को असाधारण दार्शनिक पुरुष साबित कर चुका है। जो कि अनुचित बात थी। लता बहुत स्वस्थ नारी है। वह उसके भीतरी नारीत्व को पहचानता है। रेखा की यथार्थ भावनाओं के आगे उसे डर लगता है कि वह कहीं झुक न जाय। इसी लिए वह रेखा से अधिक तर्क नहीं किया करता है। जो कहना होगा, आकर लता से कहेगा। तो वह लता उसे धन्यवाद दे गई है। मानो उसकी भीख स्वीकार कर भीतर भाग गई हो! उसे कहीं कुछ सन्देह हो गया है। वह अधिक सवालों का उत्तर नहीं देना चाहती थी। वह लता के डैने काटकर उससे कह देना चाहता था कि उड़! यह नारी-जाति पुरुष को पालतू बनाना जानती है। उनके लिए जाल फैलाती है, जहाँ कि मनुष्य चुपचाप रहना स्वीकार कर लेता है।

लता अब ओझल हो गई थी। एक बार लता के कमरे में टार्च का प्रकाश हुआ। वह जोर से पुकारना चाहता था—लता! उसकी आवाज नहीं निकली। वह उससे कुछ कहना चाहता था। उस लड़की का भागने से पहले एक अनुरोध था। वह इस बात को लता से नहीं कह सका। लता चली गई थी।

पास के पेड़ पर अजीब से स्वर में कोई पक्षी रोने लगा। वह डर

गया। वह दूसरों के बँगले में चोर-डाकुओं की भाँति क्या ढूँढ़ रहा है। यदि कोई देख ले तो क्या कहेगा ? वह चुपचाप बाहर निकला। आगे बढ़ता-बढ़ता अस्पताल पहुँचा। भीतर पाँव रख रहा था कि देखा नर्स खड़ी है। वह बोली, "आप कहाँ चले गये थे ? मैं बड़ी देर से आपका रास्ता देख रही हूँ।"

"ऐसे ही बाहर घूमने चला गया था।"

"इस आधी रात को अभी-अभी तार आया है।"

"किसका ?"

"उसी लड़के का। अपने व्यवहार की माफी मांगी है। वह स्वयं दो-तीन दिन में आनेवाला है। लाश तो गाड़ने भेज दी गई है।"

"अब उसके लिए सब बेकार है। उसका पता मालूम होगा। मैं उसे तार दे देना चाहता हूँ। अनिश्चित आशा से निश्चित निराशा किसी भाँति बुरी नहीं होती।"

"मैं पता लगाये देती हूँ।" कहकर नर्स चली गई। कुछ देर के बाद लौटकर आई। दिनेश ने पता देखा और उसे लेकर बाहर निकल गया।

पौ फट रही थी। देहाती लोग तरकारियाँ लेकर बाज़ार की ओर बढ़ रहे थे। कहीं कोई ऊँटवाला ऊँट हांक रहा था। धोबी सपरिवार गधों पर कपड़े लादे हुए घाट की ओर जा रहे थे। कहीं 'हॉकर' सुबह की ताजी खबरों का अख़बार बेच रहे थे। दिनेश को ऐसा लगा कि वह सुबह उसके जीवन की एक सुहावनी सुबह है। वह तारघर पहुँच गया था। ऊँघते हुए बाबू को जगाकर उसने सान्त्वनापूर्ण तार लिखकर दे दिया। गर-गट-गट-गट, गर-गर-गट की ध्वनि कानों में पड़ी और कुछ देर के बाद उसे रसीद मिल गई।

वह बहुत थक गया था। एक जाते हुए ताँगे को पकड़कर वह उसमें बैठकर अस्पताल पहुँच गया। मिस्टर सिंह रेखा के सिरहानेवाली कुर्सी पर बैठे हुए थे। उससे पूछा, "कहाँ गये थे?"

"यों ही घूमने।"

"तुम्हारी आँखें तो लाल हैं। मुझे डर है कि कहीं तुम बीमार न पड़ जाओ। चेहरा काला पड़ता जा रहा है।"

"नहीं तो, ऐसी कोई बात नहीं है। अब इस चेहरे की रक्षा का सवाल ही नहीं है।"

"तब पूरे 'फिलासफर' हो गये हो।"

"मैं तो चेचक का 'इंजक्शन' लेकर चाहता हूँ कि भद्दा बन जाऊँ। सुन्दरता का मुझे कोई मोह नहीं है।"

"आपने क्या कहा?" पास ही खड़ी हुई नर्स बोली। उसके चेहरे पर हँसी थी।

"आपको यह बात सुनकर अफसोस हो रहा होगा। पुरुष का सौन्दर्य ही भद्दा होने में है कि वह कुरूप हो। नारी भले ही अपनी कुरूपता के लिए पछतावे, पुरुष को यह सब समझने के लिए बेकार वक्त नहीं है।"

डाक्टर आया था। उसने सुनाया कि रेखा का स्वास्थ्य ठीक-ठीक सुधर रहा है। जल्दी ही वह अच्छी हो जावेगी। दिनेश को यह सुनकर बहुत सन्तोष हुआ। रेखा की ओर देखा, वह मसहरी के भीतर सो रही थी। आज उसे वह बहुत सुन्दर लगी। उसके लिए हृदय में कुछ लोभ उदय हो आया। रेखा अस्वस्थ थी। उस पर वह अधिक और कुछ नहीं सोच सका। इस समय रेखा एक बालिका की भाँति सोई हुई थी। दिनेश ने बार-बार उस पर सोचा और तय किया कि उसके अच्छे हो जाने पर वह उससे कुछ कहेगा।

मिसेज सिंह आ गईं थीं। दिनेश ने उनको आज पहले-पहल देखा। मिस्टर सिंह खड़े हो गये। दिनेश से मिसेज सिंह का परिचय कराया।

मिसेज सिंह ने आगे बढ़कर मसहरी एक ओर सरकाई और रेखा को देखने लगीं। कुछ देर के बाद दिनेश की ओर मुँह फेरकर कहा, "आपको अच्छा काम सौंपा गया है। मैं कल इनसे यही कह रही थी। आपका स्वास्थ्य ठीक नहीं लगता। आप आकर होटल में टिक गये। मैं सोच रही थी कि आप कुछ दिन हमारे यहाँ रहेंगे। मेहमानदारों की खातिर करने के लिए छपी हुई किताबें पढ़ डालीं। आपका गृहस्थी के झंझटों से मारे-मारे फिरना ठीक नहीं जान पड़ता। हमें ही देख लो। आपके लिए उपाय सोच रहे हैं कि कैसा फन्दा डाला जाया—रेशमी या सूती!"

दिनेश ने उत्तर नहीं दिया। आज वह इस नारी से हार गया है। वह सफ़ाई न देता हुआ भी बोला, "धन्यवाद! मैंने मिस्टर सिंह का न्योता पाया था। आप मेरे लिए अपरिचित थीं। आप दोनों सलाह करके लिखते, तब दूसरी बात थी। मैं तो व्यवसायी जीव हूँ। खुद ज़रूर आता।"

"मैं आपकी समझदारी की समस्त बातें सुन चुकी हूँ।"

लता की मा ने आकर दिनेश को उबार लिया। लता साथ नहीं थी। वह लता को देखना चाहता था। वह क्यों नहीं आई? मिसेज सिंह ने माजी से पूछा, "लता इधर नहीं दिखलाई पड़ी।"

"आजकल उसकी तबियत ठीक नहीं है।"

"सुना मिस्टर सक्सेना आये थे।" मिसेज सिंह ने कहा।

"वह कुछ नहीं कहती। लड़कियों को पढ़ाकर पाप मोल ले लेना है। अच्छा घर है सब तरह सम्पन्न घर है और क्या चाहिए?"

दिनेश बोला, "रेखा अच्छी हो जाय, सब ठीक हो जायगा। रेखा के कारण वह बहुत घबरा गई है।"

दिनेश के इस कथन पर विचारकर मिस्टर सिंह ने एक बार दिनेश की ओर देखा। बात पूरी समझ में नहीं आई। मिस्टर सिंह ने पूछा, "शीला की पढ़ाई कैसी हो रही है?"

"वही जाने।"

दिनेश उठकर बाहर जा रहा था कि मिस्टर सिंह ने पूछा, "क्या होटल जा रहे हो?"

"हाँ।"

"पैदल?"

"नहीं, बाहर से ताँगा ले लूँगा।"

मिसेज सिंह ने सुनकर कहा, "मुझे भी जाना है। आप मेरे साथ चले चलिए।"

दिनेश ने आनाकानी नहीं की। वह राजी हो गया। होटल में उतर रहा था कि मिसेज सिंह बोलीं, "कभी-कभी हमारे यहाँ आया कीजिए।"

"ज़रूर आऊँगा।"

"कब?"

"किसी भी दिन। आजकल तो बहुत काम है।"

"रेखा के स्वस्थ होने पर एक दिन उसके साथ ज़रूर आइएगा। तब कोई उलझन नहीं रहेगी।"

दिनेश चुप रहा। मिसेज सिंह ने ड्राइवर से कहा, "अस्पताल चलो। साहब को लेना है।"

कार चली गई। क्या दिनेश सचमुच ही एक दिन रेखा के साथ वहाँ जावेगा?

दिनेश खिलखिलाकर हँस पड़ा। कोई ऐसी बात कह सकता है, उसे अनुमान नहीं था। इस आमन्त्रण को स्वीकार करने के लिए सब उसे बाध्य कर रहे हैं। वह रेखा से कहेगा। उसे कहना चाहिए। जरा रेखा स्वस्थ हो ले।

लता ऊपर कमरे के दरवाज़े पर पहुँची ही थी कि देखा महरी खड़ी है। वह चुपचाप खिसक गई। महरी बोली, "बीबी, यह लच्छन ठीक नहीं है।"

"क्या है महरी?"

"माजी देख लेतीं तो न जाने क्या कहतीं। अब तुम्हारी शादी होनेवाली है। बाहर के लोग सुनेंगे तो......"

"मुझे जाना था—गई।" लता झुँझलाकर बोली।

"यही तो तुम्हारी मर्जी है। मेरा फ़र्ज था समझा दिया।"

लता घबरा गई। छोटी जात की औरत है। न जाने किससे कहाँ कह दे। उसे समझाते हुए बोली, "उनके रिश्तेदार की मौत हो गई। यही कहने आये थे। जा, अब मुझे नींद आ रही है।"

उसके चले जाने पर वह चुपचाप अपने कमरे में जाकर सावधानी से सो गई।

सुबह नींद टूटने पर देखा कि शीला खड़ी है। उसकी आँखें लता पर लगी हुई थीं। लता को उठते हुए देखकर पूछा, "तबियत कैसी है?"

"अच्छी है।"

"जीजी, कल रात तुम बाहर कहाँ चली गई थीं?"

"नहीं तो।"

"देख, झूठ मत बोल। दिनेश बाबू नीचे खड़े थे। तू उनसे बातें कर रही थी। अपनी चप्पियाँ तो देख, और साड़ी पर गोखरू चिपके हुए हैं।"

"तुझे कैसे मालूम हुआ?"

"मैं उस समय जाग रही थी।"

"दिनेशजी आये थे शीला। रेखा कल रात होश में आई थी। वह दौड़ा-दौड़ा मुझे ख़बर देने आया था। चाहता था कि मैं उसी समय उसके साथ चली चलूँ। उसे यह ज्ञात नहीं था कि उस समय सिर्फ़ दो बजे हैं।"

शीला चुप हो गई। कुछ देर के बाद कहा, "मा तो वहीं चली गई हैं। डाक्टर साहब को बुलवाने के लिए कह गई हैं। नौकर भेज दूं। या फोन से कह दूं।"

"मैं कब से बीमार हो गई हूँ शीला?"

"अपना चेहरा आइने में तो देख ले।"

"अच्छा, अब तुझे मेरी फ़िक्र हो गई है। मैं खुद डाक्टर साहब के यहाँ चली जाऊँगी।"

शीला के चले जाने के बाद वह चुपचाप पड़ी रही। यह सच बात है कि उसे नींद नहीं आती। सिर में दर्द रहता है। वह ज़रूर डाक्टर के यहाँ जायगी। वह तैयार हो गई। ताँगा मँगवा लिया और डाक्टर के घर पर पहुँच गई। डाक्टर साहब की लड़की बाहर बाग में टहल रही थी। जोर से बोली, "मिसेज सक्सेना आई हैं पापा?"

"कौन?"

"आप उनको नहीं पहचानते हैं। चलो न जीजी, शर्म क्या है। जीजाजी सुना भाग गये।"

"कौन भाग गये ?" डाक्टर साहब बँगले से बाहर निकलकर बोले।

लता ने झुककर प्रणाम किया। "क्या है लता ? सुस्त बहुत लगती है।" डाक्टर साहब ने पूछा।

"नींद नहीं आती। सिर भारी रहता है।"

"आराम किया कर।" फिर कम्पाउण्डर को बुलाकर नुसख़ा लिख कर दिया। इसके बाद वे और मरीजों से बातचीत करने लगे। इसी बीच डाक्टर साहब के छोटे लड़के-लड़कियों ने लता को घेर लिया। एक ने पूछा, "जीजाजी कैसे हैं ?"

"मैं जानती हूँ।" छोटी लड़की बोली।

"कैसे हैं ?" बहन ने पूछा।

उस शरारती लड़की ने सामने टँगे हुए कैलेण्डर की ओर उँगली की। 'सोलन बियर' का कैलेण्डर टँगा हुआ था जिसमें कि एक बड़ा बन्दर एक बोतल को मुँह से लगाये हुए था। लता खिलखिलाकर हँस पड़ी।

"क्या है लता, आज तू बड़े दिनों में आई है।" श्रीमती डाक्टरानी बोलीं, "सुना तेरी तबियत ठीक नहीं रहती। रेखा को क्या हो गया है। हमें तो अख़बार में यह ख़बर पढ़कर आश्चर्य हुआ था। डाक्टर साहब कह रहे थे कि अब अच्छी है।"

"पिस्तौल से खेल रही थी। गोली लग गई।"

"बच गई। जान का क्या भरोसा है !"

कुछ देर के बाद लता अपने घर लौट आई। सुबह की डाक से मिस्टर सक्सेना का पत्र आया था। उसमें सत्कार के लिए व्यावहारिक धन्यवाद बार-बार दुहराया गया था। सारे पत्र को पढ़ लेने पर लता स्वस्थ हुई। इसी रिश्ते को सब चाहते हैं। वह पत्र का उत्तर अवश्य देगी। वह उठी और मेज़ पर बैठकर पत्र लिखने लगी। रेखा के

बारे में सब बातें लिख डालीं। भेजनेवाले अहसान को स्वीकार कर लिया।

आगे चार-पाँच दिन तक वह कहीं नहीं जा सकी। अपने ही कमरे में पड़ी रहती थी। कई बार उसने चाहा कि रेखा को देख आवें। यह डर लगता था कि दिनेश वहीं होगा। वह उसके आगे नहीं पड़ना चाहती थी। इसी लिए नहीं गई। वह सबसे अलग, अकेली रहना चाहती थी। उसके मन में दिनेश की उस रात को कही दोनों बातें जम गई थीं। उसकी दोनों लड़कियों के अनुरोध। क्या वह अज्ञात लड़की सारी बातें जानती है? इसी लिए तो उसने सूचना दी होगी। दिनेश उस लड़की को जानता है। यह कैसी उदारता है। वह कोई हिचक नहीं बरतता। कहेगा—कहेगा कि वह सब कुछ जानता है। तब वह लड़की कहां चली गई। वह दिनेश से पूरी बात नहीं पूछ सकी थी।

रेखा स्वस्थ हो रही थी। लगभग एक मास कट गया। दिनेश ने इन पिछले दिनों तत्परता से रेखा की रक्षा की। उस रेखा की निर्बलता पर उसकी दया उभर आई थी। अभी तक रेखा बहुत कमज़ोर थी। वह हिलडुल नहीं सकती थी। उसके उतरे सुस्त चेहरे को देखकर दिनेश ने अनुमान लगाया कि सचमुच ही वह बहुत दुखी है। लेकिन अब लता क्या चाहती है? वह रेखा के पास तक नहीं आती। शीला आकर सुना गई है कि लता की सेहत ठीक नहीं है। वह लता के यहां गया तो शीला उसे सावधानी से भांप रही थी। रेखा बहुत कम बोलती है। वह चुपचाप पड़ी रहेगी। हर एक बात के लिए मूक धन्यवाद देने लगती है। वह रेखा की कृतज्ञता के भार के बोझ को

उठा रहा है। अब वे दोनों एक-दूसरे को भलीभांति पहचानकर कुछ अधिक नहीं कहते।

उस दिन रेखा अस्पताल से बँगले में आ गई थी। दिनेश वहीं बैठा रहा। जिस भीड़ से उसे घृणा थी, जिस दायरे से वह दूर भागता था, आज वह वहीं रह रहा है। वह उस वातावरण का आदी हो गया है। रेखा के पास उसकी संगिनियां तथा जान-पहचान के लोग आया-जाया करते थे। वह घर के आदमी की तरह उनका आदर-सत्कार करना सीख गया था। वह उस दिन बड़ी रात को अपने होटल पहुँचा। पांचू ने आकर सुनाया, "वह लड़की लौट आई है।"

"कौन ?"

"जो भाग गई थी।"

"वह कहां है ?"

"यहीं होटल के एक कमरे में टिकी हुई है।"

"वह कब आई है ?"

"आज दिन की गाड़ी से।"

दिनेश उलझन में पड़ गया। बहुत सवाल मन में उठे। वह कुछ सोच न सका। तभी पाँचू ने कहा, "आपसे मिलना चाहती है।"

"मुझसे ! उसका साथ का लड़का कहाँ है ?"

"वह साथ नहीं है। उसकी भी अजीब हालत है। ओंठ फट रहे हैं। चेहरा फ़ीका लगता है। चार दिन में ही वह तो बहुत बदल गई है।"

दिनेश चुप रहा। आखिर बोला, "कुछ देर बाद बुला लाना।"

"आज आप यहीं रहेंगे ?"

"नहीं।"

पाँचू चला गया था। वह उससे मिलकर क्या तय करना चाहती है। दुनिया का कैसा कारोबार चला करता है। वह बड़ी देर तक बैठा रहा। पिछले अखबार मेज पर पड़े हुए थे। कई दिनों से वह उनको नहीं पढ़ सका था। अब वह खाना खाने लगा। चारों ओर सन्नाटा छा गया था। एकाएक दरवाजे पर खटका हुआ। उसने देखा कि वही लड़की आई थी। वह भीतर आई। सावधानी से दरवाजे की चट-खनी चढ़ाकर बोली, "मुझे आपकी सहायता चाहिये दिनेश बाबू। आप मेरी रक्षा का उपाय सोच सकते हैं। आप जो बात तय करेंगे, वह सब मुझे स्वीकार होगी। मैं आज तकरार करने नहीं आई हूँ।"

"तुम लौट क्यों आई हो? बैठ जाओ।" दिनेश बोला।

"वह लड़का मर गया है।"

"मर गया?"

"नहीं, उसका खून हो गया।"

"कैसा हुआ वह कौन था?"

"मैंने स्वयं अपने हाथों उसका खून किया और भागकर यहाँ चली आई हूँ। यह मेरा अपराध है। आपके आगे सारी बात स्वीकार करते हुए मुझे कोई हिचक नहीं।"

"यह तुमने क्या कर डाला। सारी बातें सुनाओ।"

"इसका एक कारण था। जिस 'सब्जा' को बसाने की हमने सोची थी; वह कामयाब नहीं हुआ। सारा पैसा चुक गया था। मैंने आगे किसी भाँति अपने गहने बेचकर होटल का बिल चुकाया। उससे मैंने कई बार कहा कि अब उसे कोई रोजगार ढूँढ़ लेना चाहिए! उसने जवाब दिया कि उससे रोजगार नहीं होगा। वह लाचार है। तब मैं

समझी कि एक उफान के कारण हमने यह ग़लत रास्ता पकड़ा है। होटल का कर्जा बढ़ जाने के कारण मैं परेशान हो उठी। वह होटल-वाले के तकाजे पर मुझसे आकर बोला, "मैं समझा था कि तुम्हारे साथ चैन से जिन्दगी कटेगी। यहाँ पर कुछ और ही हाल है। जब कि तुम रुपया कमा सकती हो, तो व्यर्थ का झंझट क्यों उठाया जाय। एक बार ग्लानि से मेरा सारा शरीर सिहर उठा। लेकिन चुप रही। रात्रि को चुपके नौकर के हाथ मैंने अपनी अन्तिम धरोहर अँगूठी बिकवाई। फिर मैंने उसे खूब शराब पिलाई। जब वह नशे में हो गया तो छुरी से उसका गला काटकर भाग आई हूँ। यह वही छुरी है।"

दिनेश ने छुरी देखी और उस साहसी लड़की की बात सुनी। वह सन्न रह गया। उसने यह कैसी हत्या कर डाली! उसने छुरी ले ली।

"अब मैं क्या करूँ?"

"भला, मैं क्या राय दे सकता हूँ।"

"आप मुझे मेरी ससुराल पहुँचा दें। आपके कहने से पति मुझे साथ रख लेगा। रेखा और लता भी मुझे सहायता दे सकती हैं। मैं अपना जीवन सुधार सकती हूँ। कोई बड़ी देरी नहीं हुई है।"

"लता ने चिट्ठी की बात मुझसे कही थी।"

'क थी?"

"और मैं उससे प्रेम करने का अधिकार बिसार चुका हूँ।"

"वह बात फिर होगी। पहले मेरी बात सुन लो। मैं जीवन से ऊब उठी हूँ। फिर अभी मरना नहीं चाहती। वह लड़का एकाएक अन्तिम बार होश में आया था। उसे ज्ञात हो गया था कि वह मर रहा है। उसे मुझ पर सन्देह नहीं हुआ। आखिरी वक्त मैंने उसके होंठ

चूम लिये थे। वह एकाएक लड़खड़ाकर उठा। फिर धड़ाम से पड़ा। वह मर गया थां। उसका चेहरा कुरूप हो गया था।"

दिनेश ने कभी तीक्ष्ण चाक़ू का बड़े-बड़े मेढकों, गिलहरी, कबूतर आदि पर प्रयोग किया था। तब उसका ख़याल था कि वह डाक्टर बनकर समाज की भलाई करेगा। लेकिन वह आज वकील है। एक यह लड़की है कि गृहस्थी बसाने गई थी और ख़ून करके लौट आई है। अपनी सारी नारी-कोमलता को न जाने कहां बिसार चुकी होगी। यह ख़ून है, जिसे ३०२ दफ़ा का ज़ुल्म कहा जायगा। यह क़ानून की दृष्टि में एक बहुत अपराध है। वह सोचकर बोला —"तुमको पुलिस में चला जाना चाहिए।"

"पुलिस में !"

"इस अपराध का दण्ड फांसी है। शायद जज तुम पर रहम करके कालेपानी की सज़ा दे दे। सब सबूत लेकर तुम चुपचाप अपना अपराध स्वीकार कर लेना। मैं यह सब एक क़ानूनी सलाहकार की हैसियत से कह रहा हूँ। समाज की रक्षा तो होनी ही चाहिए। क़ानून उसकी रक्षा किया करता है। तुम चाहो, तो मैं मिस्टर सिंह को पत्र लिखकर भेज दूँगा। वे बिना किसी ख़ास विज्ञापन के तुमको जेल भिजवा देंगे।"

"दिनेश बाबू आप ज़रा विचार कीजिए। मैं मरना नहीं चाहती हूँ। फांसी हो जाय तो वह दूसरी बात है। एक बद्चलन औरत को कालापानी हो जाना ठीक नहीं है। हमारी जेलों का ढांचा ठीक नहीं है। उसे बनानेवाला और वहां की व्यवस्था करनेवाला वही समाज का एक दल है, जो कि ओहदों पर बैठता है। जेलों के निर्माण से समाज की बुराइयां कम नहीं हो रहीं हैं। वे दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। जेल में मेरे शरीर के लिए प्रलोभन होगा। मुझे फांसी देकर

ही उस ज़ुल्म की भावना नहीं मिट जायगी। यह हिंसा समाज की उन लाखों अबलाओं में है, जो इसी प्रकार अपना गुज़ारा करती हैं। आप वकील हैं और वकालत करते हैं। यह पेशा समाज का कल्याण नहीं करता। वह तो आपकी आजीविका है, जिसे कुछ क़ानून की पुस्तकों के बल पर आपने चलाया है। आपको तो मेरे मामले की पैरवी करके समाज के एक बड़े दल के सवाल को सुलझाने की ओर अग्रसर होना चाहिए था। अब आपका क्या आदेश है ?"

दिनेश ने सोचा कि बात सच है। ये नारियां हर जगह दया की दुहाई देती हैं। उसकी भूखी हैं। अपनी निर्बलता को स्वीकार कर लेती हैं। वह बोला, "तुम्हारा तर्क समझदारी का है। ग़ुस्से की विवशता में वह सब हुआ है। लेकिन तुम उस लड़के को भली भांति जानती थी कि वह अकर्मण्य ही है। अपने चरित्रहीन जीवन की मर्यादा को छिपाने के लिए, तुम उसके साथ भाग गईं। इसमें क़सूर तो तुम्हारा ही है।"

"मैं पतित हूँ और क्या इसी भांति जीवन व्यतीत करना सुखकर समझती हूँ। मैंने वह अन्तिम रास्ता अपनी असमर्थता के कारण स्वीकार किया था। पहले अपने गुज़ारे के साथ-साथ अपने पिता की रक्षा का उत्तरदायित्व मुझ पर था। मुझे यह आशा न थी कि आप यह कहेंगे। आपके आगे मैंने सारी बातें साफ़-साफ़ रख दी थीं। तब आप कुछ नहीं बोले थे। मुझे रोका नहीं। कोई नेक सलाह नहीं दी। परवशता ठीक नहीं होती है। एक ही रास्ता मेरे आगे था। मैं अकेली उस मकान में नहीं रह सकती थी। तब आपको अपने दोस्त मिस्टर सिंह की याद क्यों नहीं आई थी। इसी लिए कि ऐसी औरतों की रक्षा करने का भार वे क़ानूनी पोथियां नहीं लेती हैं, जिनको आपने पढ़ा है। मैं फिर आपकी रक्षा का सवाल नहीं भूली थी। लता को इसी

लिए चिट्ठी लिख दी थी। आपको तो सब लड़कियों पर दया आती है। आप सबकी रक्षा करने का झूठा ढोंग किया करते हैं। यही बात है तो आपने रेखा की रक्षा क्यों नहीं की ? मिस्टर सिंह के हाथों में हथकड़ी क्यों नहीं डाली ? मिस्टर सिंह के कारण ही रेखा के मन में आत्महत्या का प्रश्न उठा था।"

"रेखा की रक्षा !"

"क्यों, आश्चर्य की क्या बात है ? आपको स्वयं रेखा को समझाना चाहिए था। आप भागे-भागे फिरते रहे। समस्या गढ़कर उसे उलझाकर यह चाहते थे कि वह आपके पीछे मारी-मारी दीवानी बनी फिरे। इसके अलावा और आपको क्या आता है ? कल मिस्टर सिंह लता से वही आँख मिचौनीवाला खेल खेलना शुरू कर दें, आप फिर भी तमाशबीन ही रहेंगे।"

"मैं ज्यादा बातें नहीं सुनूंगा। आप क्या चाहती हैं ? बेकार की बातों को उठाकर उन पर दलील करने से कोई लाभ नहीं है।"

"आपकी बात मुझे स्वीकार है।"

"मैं मिस्टर सिंह के लिए चिट्ठी लिख रहा हूँ। तुम वहाँ चली जाना। यह हितकर है।" कहकर दिनेश ने चिट्ठी लिखी और लिफाफे में बन्द करके दे दी। उसे कोई हिचक नहीं हुई।

"दिनेश बाबू आप अभी तक मुझे ग़लत समझ रहे हैं। मैं आपकी बात मानूँगी। अपने विश्वास को ठुकराने का साहस मुझे नहीं है। जिस अतृप्त लालसा के साथ आपने जीवन पाया और दुनिया में प्रवेश किया है, वही निराशा आज आपने इस पत्र में सौंप दी है।"

"मेरी निराशा ?"

"आपका बचपन सुखद नहीं रहा है। आपको बचपन में लड़के-

लड़कियों के साथ खेलने का अवसर नहीं मिला कि सहृदयता पा जाते।"

"आपने यह कैसे जाना ?"

"आपकी कठोरता देखकर।"

"मेरी कठोरता के कारण ?"

"तुम्हारा फैसला उस विधवा की तरह है, जो पति का मुंह देखे बिना ही विधवा हो गई हो। सारी जवानी नियम, धर्म, कर्म में काटकर अन्त में बुढ़ापे में सोचती है की यदि उसके एक बच्चा होता—जायज-नाजायज, तो उसे कितना सुख नहीं मिलता। इसे आप उसका पागलपन ही कहेंगे न ? आप उसी की भाँति छुटकारा पाना चाहते हैं। यह आपका बड़प्पन है ! आपने रेखा के साथ न्याय करने की सोची है। वह भी मेरी ही भाँति कसूरवार है। अपनी हत्या करने का खेल उसने खेला है। क्या वह निर्दोष है ? आपने उसके प्रति रात-रात जागकर अपनी सहानुभूति दिखाई है। लेकिन अपराध तो अपराध ही होता है। उसको कुछ और कहकर आप बिसार नहीं सकते। किन्तु स्वयं मिस्टर सिंह और आप उसे घटना घोषित करते हैं। दुनिया आप लोगों की बात पर विश्वास कर रही है। रेखा की प्रतिष्ठा है। समाज में मान है। उसका हित इसीलिए आप चाहते हैं। वह पुलिस के एक बड़े अफसर की प्रेमिका है। सारा समाज इस बात को जानता है। वह आपके और मिस्टर सिंह, दोनों के स्वार्थ की वस्तु है। रेखा का अपने ऊपर गोली चलाने से भीषण अपराध मेरा नहीं है। मैंने उचित बात की है। ऐसे निकम्मे लड़कों को दुनिया में जीकर व्यर्थ भार बढ़ाकर क्या करना है ? वे औरतों के पीछे दीवाने बने फिरते हैं। उनके लिए कानून की कोई दफा नहीं है। इस मित्रता के बाद आप उदारता क्यों दिखा रहे हैं ? आप अपने जिस चरित्र को उठाने

की धुन में हैं, वह चरित्र नहीं है। उसके भीतर समाज के उस दरजे की रक्षा करने की भावना है, जिसके कारण समाज का अहित हो रहा है।"

"आपकी इस दलील का प्रभाव मुझ पर नहीं पड़ेगा। यह तर्क बहुत लुभावना है। मैंने अपनी राय दे दी है। मानना न मानना आपका अपना काम है। मैं आपके जीवन में कोई रुकावट नहीं डाल रहा हूँ।"

"मैं आपके हुक्म को मान लेती हूँ। उसकी अवज्ञा नहीं करूँगी। आपके चरित्र के बारे में मैंने सच बात कही है। वहां रेखा और लता की प्रतिछायाएँ चला-फिरा करती हैं। किसी दिन एक सही वक्त ताक कर आप किसी एक पर झपट्टा मार सकते हैं। उसके बाद भी आपका चरित्र आइने की तरह साफ़ रहेगा। लता अथवा रेखा उस पर पड़ी धूल की भाँति साफ़ हो जायेंगी। आपमें इस बात को स्वीकार करने का साहस है। मैं अपने 'चरित्र' को मानती हूँ। पुरुष की सहूलियत के लिए, मुझे अपने जीवन को चलाने के लिए पैसा मिला है। मेरा अपना चरित्र बिलकुल खरा है। हर एक इन्सान को आज जीवित रहने के लिए पैसा चाहिए। पैसे की कमी आज का सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। रईसों के दानखातों अथवा बैंकों को लूटकर पैसे का बटवारा कर देने से व्यवस्था नहीं सुधरेगी। समाज को पैसे की चमक से हटाकर, हर एक इन्सान को खरा बनाना होगा। मैं ईमानदारी से अपना पेशा करती हूँ। आपकी वकालत से अधिक मेरी आमदनी हो सकती है। आदान-प्रदान की प्रथा व्यापार कहलाई। मैं खरा व्यापार कर, खरा पैसा लेती रही हूँ। यदि पैसा 'जोंक' है तो वह सबके लिए है। पैसे का महत्व जानकर ही मैं उस लड़के के साथ भाग गई थी कि वह किसी नौकरी पर लग जायगा और हमारी गृहस्थी सुखपूर्वक चलेगी। भागते

समय मैंने आपके आगे सारी परिस्थिति रख दी थी। उसे अकेला छोड़ आना नहीं जँचा। वह कुछ नहीं कर सकता था। उसे मार-कर मैंने समाज की भलाई की है।"

दिनेश चुप रहा। चरित्र पर विचार किया; किन्तु समस्या नहीं सुलझी। वह इसे क्योंकर हत्या कहता है। एक लड़की की हत्या अनाथालय में हुई थी। उसने उस पर क्या किया। रेखा का अपराध केवल सन्देह पर ही है। वैसे आत्महत्या पाप है। वह रेखा से पूछेगा। लेकिन क़ानून की नजीरों पर वह विश्वास नहीं करता। लोकाचार के लिए कुछ लोगों ने मिलकर इनको बनाया है। हर एक व्यक्ति का मत उन पर नहीं लिया गया। शासकों ने शासन करने के लिए यह सब किया है। वह उलझन में था कि वह बोली, "मैं जा रही हूँ।"

दरवाजे की चटखनी खोलकर चली गई। वह रुकी नहीं। एक बार पीछे मुड़कर नहीं देखा। दिनेश उस लड़की की बातों पर सोचने लगा। उसने सब सच-सच बातें कहीं थीं। उसके उस अपराध को नहीं माना जाना चाहिए। जो ताक़तवर है, उसे जीवित रहने का पूरा अधिकार है। वह लड़का कमजोर था। समाज के लिए एक भारी भार था।

वह बाहर निकला। पुकारा, "पाँचू! पाँचू!!"

कोई जवाब नहीं मिला। वह यह जान लेना चाहता था कि वह लड़की किस कमरे में है। उसने नामोंवाली तख्ती पढ़ी। कहीं किसी लड़की का नाम नहीं था। वह चुपचाप लौट आया। अब वह बैठकर सोचने लगा कि वह पुलिस के हाथों गिरफ्तार हो जायगी। वह सबसे बड़ा गवाह बनेगा। क़ानून अपने मुताबिक उसे सजा देगा। यह कैसा क़ानून है, जिसका कि वह बार-बार उपहास उड़ाती थी?

दिनेश उसके तर्क से सहमत है। लेकिन इधर जिन संस्कारों में वह चल रहा है, वहां रेखा का व्यक्तित्व है। लता है। वे उनके संस्कार

हैं। वह शहर के भीतर है, जहां कि व्यक्ति स्वस्थता से कोई बात नहीं सोच सकता है।

दिनेश रेखा के यहाँ पहुँचा। रेखा पलँग पर लेटी हुई थी। उसे यह देख करके आश्चर्य हुआ कि मिसेज सिंह वहीं थीं। वे दिनेश के आने पर बोलीं, "आप बड़ी देर से आये हैं। मैं आपका इन्तज़ार करते-करते थक गई।"

"आज कुछ देर हो गई।"

'अब आप मुझे घर पहुँचाने का इन्तज़ाम कीजिए। रेखा की 'कार' ठीक नहीं है।"

"आप यहीं रहें।"

"वहाँ बच्चा अकेला है।"

"मिस्टर सिंह और नौकर तो हैं ही, मैं भी वहीं जा रहा हूँ। एक से दो भले।"

"आप!" रेखा ने पूछा।

"मुझे एक ज़रूरी मामले में उनकी सलाह लेनी है। सुबह बच्चे को यहाँ ले आऊँगा। आप कुछ दिन यहीं रहें तो ठीक होगा। मैं कल आपसे यही बात कहने की सोच रहा था। किन्तु आपकी गृहस्थी में दखल देना उचित न लगा।"

"आपका आदेश माने लेती हूँ।" मिसेज सिंह बोलीं।

अब दिनेश बाहर निकला। घूमता-फिरता हुआ मिस्टर सिंह के यहाँ पहुँच गया। मिस्टर सिंह गोल कमरे में बैठे हुए थे। उसे आता हुआ देखकर बोले, "आओ दिनेश। मैं अभी तक तुम्हारे बारे में कई बातें सोच रहा था।"

"कोई लड़की आपके पास आई थी ?"

"तुमने चिट्ठी दी थी, फिर भला वह क्यों नहीं आती। मैंने चिट्ठी पढ़ी। वह तो बड़ी ढिठाई से बोली, 'आप जल्दी कोतवाली फोन कर दें।'

'अभी नहीं।' मैं बोला।

'तब मुझे क्या करना है? यह सिफ़ारिशी चिट्ठी इसी लिए लाई थी कि आप मुझे फाँसी पर लटकवा दें अथवा कालापानी भिजवा दें।'

'फाँसी चाहती हो?'

'और अब क्या करूँ? बात समझ में नहीं आती। दिनेशजी जो चाहते हैं, आपको वह स्वीकार नहीं। वह मेरे हक़ में बुरी बात नहीं सोच सकते हैं। आप एक चिट्ठी कोतवाली के लिए लिख दीजिए कि मैं बदचलन औरत हूं। मैंने अपने प्रेमी का ख़ून किया है। आपसे मैं और कुछ नहीं चाहती हूँ।'

'..............'

'मैं असमंजस में पड़ गई हूँ कि क्या करूँ। इधर-उधर मारी-मारी नहीं फिरना चाहती हूँ। मेरे पास अपनी गुज़र करने के लिए पैसा नहीं है। बदचलनी की कैफ़ियत के साथ बाजार में बैठनेवाला 'पास' आसानी से मिल सकता है। मैं वह नहीं चाहती। न होटल में जाकर मेहमानदारी स्वीकार करना चाहती हूँ। इस सबसे मुझे नफ़रत हो गई है। अब उस जिन्दगी को फिर से शुरू नहीं करना चाहती हूँ। क्या आप मेरे पति को नहीं लिख सकते कि पिता के मरने के बाद मैं अनाथ हो गई हूँ? अब वही मेरा आश्रय है। वह मुझे रख ले। वहाँ किसी तरह मुझे पहुँचा दीजिए।'

'मैं ऐसा करने में असमर्थ हूँ।'

'तब आप मुझे कुछ रुपया कर्ज़ा दे दीजिए। इसे दिनेशजी से मांग लीजिएगा। मैं अपनी राह स्वयं ढूँढ़ लूँगी।'

"मैंने चुपचाप तीस रुपये दे दिये।"

"तब वह कहाँ चली गई होगी?" दिनेश ने पूछा।

"शायद पति के पास।"

"पति के?"

"उसके आगे सब अपराध स्वीकार करके माफ़ी मांग लेगी।"

"यह असम्भव है।"

"मैं जो कह रहा हूं, वह सम्भव है। उस लड़के का ख़ून करने के बाद उसे अपने लिए एक आश्रय ढूँढ़ने की चिन्ता हो गई है। पैसे की उसे कोई चिन्ता नहीं है। होटल से उसे काफ़ी आमदनी है। रेखा से वह इस मामले में सलाह लेती, पर वह बीमार है।"

"अच्छा सुनो, आपकी श्रीमतीजी आज रेखा के पास रहेंगी और आप बच्चे को सँभालिएगा। लोरी गानी आती है या नहीं?"

"ठीक है। वह तो सो गया है।"

"मैं होटल जा रहा हूं। शायद वह होटल गई हो। उसे देखने का लोभ फिर भी बाक़ी है। सुबह आऊँगा।"

दिनेश कितना ही व्यस्त रहे। इस भांति जीवन उसका नहीं चल सकता। वह हर एक साधारण बात की तह में पैठना चाहता है। सबसे मतलब रखता है। रेखा ने आत्महत्या कर ली थी, वह मर जाती। लता की शादी होनी ही है। मिस्टर सिंह का तबादला हो जायगा। इससे समाज के रोजाना जीवन में ख़ास असर नहीं पड़ता। चार-पाँच व्यक्तियों के जीवन का असर समाज पर नहीं पड़ता है। उसके भीतर प्रभाव डालने के लिए बहुत बड़ी तादादवाले लोगों की स्वस्थता है। सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और आर्थिक स्तम्भों की मजबूती

साधारण जंग लग जाने से कम नहीं हो जाती। वे सब उसी भांति खड़े रहेंगे। जब तक कि लाखों की तादादवाले परिवार उनको उखाड़ नहीं फेंकते हैं।

होटल में सन्नाटा छाया हुआ था। दिनेश जान गया कि वह लड़की अपनी ससुराल चली गई होगी। वहाँ आश्रय न मिलने पर वह अपनी परिस्थिति पर विचार करके कोई दूसरा रास्ता निकाल लेगी। क्या पति आसानी से उसे जगह दे देगा? पति चरित्र के अविश्वास के बाद उदार नहीं रह सकता। पुरुष 'नारी-संपत्ति' के अधिकार को आसानी से नहीं भुला सकता है। पशु भी इस अधिकार के लिए लड़ते हैं। हर एक पत्नी को एक छोटी-मोटी जायदाद मानता चला आया है। नारी ने चुपके से इसे स्वीकार कर लिया। पति की मौत के बाद भी वह उसकी यादगार बनी रहती है। मानो कोई ऐसा साइनबोर्ड हो; जो कि व्यक्ति की मौत के बाद उसकी यादगार को बनाये रक्खे। नारी पति को 'देवता' मानती है। यह कितनी झूठी धारणा है। वह पतित लड़की अपने अधिकारों को जानती है। वह अपने सीमित ज्ञान के हर एक पहलू से अपने जीवन पर विचार करती है। समाज का ढांचा बदल जाय, वह और उसके दर्जे की सब नारियाँ बदल जायँगी। उस एक को बदल देने से समाज नहीं बदला जा सकता है। उसे फांसी दे देनेवाले फैसले का दृष्टान्त भी समाज में अधिक नहीं चलेगा।

सुबह बड़ी देर से उसकी नींद टूटी। अब मिस्टर सिंह के यहां जाना व्यर्थ था। वह रेखा के यहाँ पहुँचा। देखा, मिसेज सिंह बच्चे से खेल रही थीं। एकाएक उसके मन में वहम उठा कि क्या कभी रेखा! वह बच्चा अपनी दोनों हथेलियों को अपनी उँगलियों से ढक लेता था। फिर कभी अपनी छोटी हथेली से मा का मुँह ढक लेता था और बार-बार अपनी हथेली को मुँह पर जोर-जोर से मारता था। उस

बच्चे तथा उसकी मा की स्वस्थता को देखकर, उसके हृदय का घाव भरने लगा। वह एकाएक बहुत स्वस्थ हो गया।

"बच्चा कै महीने का है?" उसने पूछा।

"सात का।"

"बच्चे के गाल लाल हो रहे हैं। क्या दाँत आ रहे हैं?"

"हाँ, आपको कैसे मालूम हुआ? अभी एक निकला है।"

"पहले मैंने डाक्टरी पढ़ने का विचार किया था, पर पढ़ नहीं सका। एक साल बाद छोड़ दी।" कहकर वह बच्चे को अपने पास बुलाने लगा।

"वह किसी के पास नहीं जाता।" रेखा बोली।

"मेरे पास तो आवेगा ही।"

सचमुच बच्चे ने आनाकानी नहीं की। वह चुपचाप रहा। दिनेश उसे रेखा के पास ले जाकर बोला, "मौसी के पास नहीं जायगा?"

उसने देखा कि रेखा का मुंह स्याह पड़ गया है। जैसे कि इस बात का उसे कोई लोभ न हो। बच्चा भी रोने लगा। दिनेश उसे बाहर लाकर खिलाने लगा। मिसेज सिंह बोलीं, "आप बच्चों को खिलाने में उस्ताद जान पड़ते हैं।"

"बच्चे जानते हैं कि मैं भला आदमी हूँ।"

"और लोग तो...!" रेखा कुछ कहना चाहकर चुप हो गई।

"इसका नाम क्या है?"

"जो आप रख दें।"

"यह काम तो पुरोहितों का है।"

"आप हमारे पुरोहित बन जाइए।"

"तो कभी सोचकर बतला दूँगा।"

"हम इसे दो नाम से पुकारते हैं। मैं बेत्री और वे दोस्त।"

"रेखा क्या कहती है?"

"नरेश!"

"तो वह एक बार फिर स्वप्न देख रही हैं कि नरेशजी महाराज बने, तब तो मुझे राज-पुरोहित बनने में आनाकानी नहीं होगी। इतिहास में राजगुरुओं का काल पढ़कर मुझे बड़ा कौतूहल हुआ था। लेकिन आज वह बात शायद न चले। जमाना तेज़ी से बढ़ रहा है। जनता की छोटी-छोटी श्रेणियों में भी चेतना आ गई है।"

दिनेश बच्चे को अभी गोद में ही लिये हुए था। नौकरानी के आने पर उसे दे दिया। वह उसे लेकर बाग़ में जाने को थी कि वह रोने लगा। वह दिनेश के पास जाने के लिए मचल रहा था। दिनेश ने उसे ले लिया। अब रेखा बोली, "यही पेशा कर लो। वकालत से बुरा न होगा।"

"पेशा!" दिनेश के मुंह से यह शब्द निकला। उसने रेखा की ओर देखा। आज वह स्वस्थ लगी। पूछा, "तबियत तो अब ठीक है?"

"मीठी पीड़ा कभी-कभी होती है।"

"वह भी कुछ दिनों में ठीक हो जायगी।" मिसेज सिंह ने समझाया।

"और घाव?"

"वह पूरा भर गया है!"

मिसेज सिंह बच्चे को ले चली गई।

दिनेश पास पड़ी कुर्सी पर बैठकर बोला, "मैं धन्यवाद का पात्र नहीं हूँ रेखा। मैं यह भी तो नहीं जानता था कि तुम अपने जीवन से इस प्रकार खेल खेलोगी। किस अधिकार से तुमने यह कर डाला, यह

नहीं पूछूंगा। 'जीवन' एक बड़ी कीमती चीज़ है। हर एक को उसकी रक्षा करनी चाहिए। मैं जानता था कि तुम मिस्टर सिंह के परिवार के बीच सन्तुष्ट हो। तुम्हारा यह सोचना कि आत्महत्या के बाद शरीर अमूल्य हो जाता है, एक भारी भूल है। मौत के बाद शरीर पर कफ़न लपेटा जाता है। वह शरीर नग्न ही लकड़ियों में जलता है। वहां भी पुरुष का ऊपरी हाथ रहता है। वह मुंह नीचा किये रक्खा जायगा, जब की नारी का मुंह ऊपर की ओर होता है। वह प्रकृति के नियम का पालन ही है। कुछ साधारण सिद्धान्त हैं। पहले प्रकृति से मानव ने उनको लिया और मानव की इतिहास की कसौटी पर वे समाज में चले आये। आज हमें एक नये सिरे से ऐतिहासिक घटनाओं को सामने रखकर फिर उन सिद्धान्तों की आलोचना करनी पड़ेगी। कुछ नई स्वस्थ धारणाओं के प्रचलन पर सोचना होगा। भगवान्, शास्त्र तथा वेदवाक्यों के बाद इतिहास कई भयानक युद्ध देख चुका है। प्राचीनता का गौरव ही स्वार्थवश हर एक युद्ध का कारण नहीं था। वह था समाज के विभिन्न विचारोंवाले वर्गों का आपसी संघर्ष। आत्महत्या को पाप कहा गया है। वह धर्म की कसौटी है। वैसे समाज में हर एक का उपयोग है। एक व्यक्ति के व्यर्थ नष्ट हो जाने से उस उपयोगिता में उसका अपना भाग कम हो जाता है। भाग्य की दुहाई देने से ही काम नहीं चलेगा। कारण कि वह एक-दो अथवा तीन व्यक्तियों का सवाल नहीं है। वह तो ऐसे वर्गों का सवाल है, लाखों-करोड़ों व्यक्ति हैं। गांवों में रहनेवाले सब किसानों की समस्या एक है—लगान, कर्जा, बेगार, रहने को ठिकाना नहीं, आदि-आदि। इसी भांति कई वर्गों को अभागा घोषित किया जा सकता है। उनको भगवान् की दुहाई देकर जीते रहने को कहा जा सकता है। किन्तु वह सब पाखण्ड है, धोखा है और दिन दोपहर आंखों में धूल झोंकना है।"

वह रेखा के मुँह की ओर टकटकी लगाकर देखता रहा गया। रेखा उसे देख रही थी। वह इन सब बातों से सहमत जान पड़ी। वह उस ऐतिहासिक प्रचलन को स्वीकार करती है। लेकिन व्यक्ति के भीतर भावनाएँ आदिकाल से चली आई हैं। वह जो भावुक है। उसकी भावुकता और व्यवहार की दो दुनिया हैं—एक कल्पना की और दूसरी रोजाना समाज की।

दिनेश उस निर्बल रेखा के मन को बल देने के लिए बोला, "शायद भगवान् की दुहाई और आत्महत्या की धमकी देकर प्रेम को साबित कर लेनेवाला युग भी बीत गया है। तुम भी उन नारियों की भांति क्यों समझती हो कि पुरुष से प्रेम करना ही है। उसे अपनाना है। यह भावुकता का आवेश एक जोंक है जो पुरुष और नारी को तरक्की नहीं करने देता है। भावुकता, रोमांच और प्रेम की पीड़ा में तड़फने-वाले नारी-पुरुष अस्वस्थ सन्तानों के माता-पिता हैं। वे निर्बल बच्चे समाज का कल्याण नहीं कर सकते। नारी तथा पुरुष दोनों को अपनी ज़िम्मेदारी समझ लेनी चाहिए। चरित्र समाज के लिए एक भारी शक्ति है और स्वस्थ गृहस्थों का निर्माण भी बल है। मैं ख़ुद एक रात भावुक बन गया था। डाक्टर ने जब सुनाया कि क्राइसिस टल गई है तो मैं उस भांति नाचना चाहता था, जैसे कि बच्चे किसी की कटी पतंग को लूट लेने पर नाचते हैं। तुम्हारा घाव देखने के बहाने मैंने 'तुमको' भी देखा। वहीं तुम्हारे प्राण थे। वे प्राण रह गये और मुझे विश्वास हो गया कि तुम अब उन प्राणों पर बिना सोचे-समझे कोई घातक हमला नहीं करोगी। मैं कोई बड़ा आदर्शवादी नहीं हूँ कि पिछली आदर्श की धारणाओं को ओढ़कर तुमको धोखा दूँ। मैं चाहता हूँ सामाजिक आदर्शता! विभिन्न वर्गों की आदर्शता!! वह आदर्शता, जिससे समाज के साढ़े निन्नानवे प्रति सैकड़ा लोग अपाहिज न रहें। हर एक को यह

चिन्ता न रहे कि उसके बाद उसके परिवार की क्या दशा होगी? उसका अपना कर्तव्य है कि बच्चों के लिए एक भारी बीमे से लद जाय। अकसर मिस्टर सिंह से मैंने बातें की हैं; क्योंकि मैं उनकी कमज़ोरियों को जानता था। उनके आगे समाज का यह ढांचा रखना एक भूल होगी। शायद कभी एक दिन मौक़ा मिल जाय तो उनसे कहूँगा। लेकिन जिस चमकीली दुनिया में वे रहते हैं, उनके ओहदे की जो शान है, क्या वे उससे बाहर सोच सकते हैं? उन पर आसानी से हावी नहीं हुआ जा सकता है। तुम भी चाहो, तो सफल न होगी। यह सही बात है। और यह जो एक-एक व्यक्ति को लेकर आदर्श उठ रहा है, उससे लाभ न होगा।"

रेखा ने पूछा, "आप खाना खाकर आये हैं?"

"नहीं।"

"महरी से कह दो।"

"होटल जाऊँगा।"

"आपको रोकने में मेरा स्वार्थ है। मैं यहां अकेली हूँ।"

रेखा ने सच बात कही थी। उसकी आंखों में अभी तक काले बादलोंवाली परछाईं थी। वह बाहर आया और नौकरानी को बुलाकर समझाया कि वह उस घर में मालिक की हैसियत से खायगा। अब उसे कोई लिहाज नहीं है।

रेखा के भीतर एक चाहना उठ रही थी। उसकी वही गहरी-गहरी सांसें, जिनको दिनेश ने प्राण कहकर पुकारा, अभी अस्वस्थ थीं। और जो उसकी भावनाओं की एक नई ज़मीन आज बन गई थी, उस पर दिनेश नये-नये बीज बो रहा है। आत्मा का पलायन वह स्वीकार नहीं करता है। उसे यह ज्ञात है कि रेखा मोम की भांति मुलायम नहीं है। वह परिस्थिति को समझकर चलती है। वह एक दिन उस रंगीन

स्वप्न की भांति नष्ट नहीं होगी, जिसके बाद निराशापूर्ण जागरण होता है।

दिनेश जानता है कि रेखा की मौत का टल जाना एक साधारण घटना थी। उस आवेश के पीछे अपनी आलोचनावाला भाव नहीं था। वे साधारण उफ़ान को जीवन कहकर पुकारती हैं। जैसे कि उनका पुरुषसम्बन्धी अनुभव पक्षियों से बढ़कर नहीं हो। जिस दुनिया में नर चोंच से मादा को पुचकारता है। और जो यह प्रेम एक 'लाटरी' वाला जुआ स्वीकार किया जा रहा है। वह खेल भी अन्त में भाग्य की पक्की दीवार पर टकराता है। नारी का अस्वस्थ रूप और उसके विक्षिप्त हाव-भावों के लिए समाज उत्तरदायी है, वह व्यक्ति नहीं। परिवार बढ़ता चला गया। कुछ पुराने विचारों की मज़बूत कड़ियां नहीं टूट सकीं। समाज और फैला। वे कीलें उसी भांति रहीं और अन्त में परिवार जीर्ण होकर उन कीलों में झूलने लगे। कई परिवारोंवाला समाज विचारों में अतीत की दुहाई देता रहा। आज की परिस्थिति पर उसने नहीं सोचा। इसी लिए विचारों के बीच खाइयाँ पड़ गईं। उस कृत्रिम परिस्थिति के कारण हर एक बात पर भाग्य की पेटेंट मोहर आज तक लगती चली आई है।

रेखा ने पूछा, "लता के यहाँ नहीं गये?"

"नहीं।"

"वह इधर यहां नहीं आई। कहीं नहीं जाती है।"

"मैं आज वहां जाऊँगा।"

"साथ ले आना।"

"रेखा!" दिनेश व्यंग्य समझ गया।

रेखा चुप रही। दिनेश टकटकी लगाकर उसे देखता रहा। वह

बहुत सावधान सी जान पड़ी। वह बोला, "तुम किसी .खूनी को माफ़ कर सकती हो?"

"यह परिस्थिति पर निर्भर है।"

"और अपनी आत्महत्या के लिए क्या बचाव तुम्हारे पास है?"

"मैं कुछ नहीं जानती।"

"क़ानून क्या बताता है, यह तो मालूम है न?"

"जानती हूँ।"

"फिर।"

"मैं क्या कहूँ?"

"मैं इस सवाल का उत्तर सुनना चाहता हूँ। शांति ने पहले-पहल सुझाया था कि तुमने आत्महत्या करनी चाही थी। .खुद वह एक लड़के के साथ भाग गई थी। फिर उसका .खून करके अब अपने पति के पास लौटकर चली गई है।"

"ससुराल।"

"हाँ, वहीं।"

"आपने जाने दिया?"

"वह उचित बात थी।"

"मैं न जाने देती। ज़रूर रोकती।"

"क्यों रेखा?"

"वह उसका लड़कपन है?"

"क्या?"

"पति उदार नहीं होगा। वह अपना स्वामीवाला दरजा नहीं बिसार सकता है। सदा उसके चरित्र पर ताना मारेगा। उसे आजीवन अपने कलंक की बात सुननी पड़ेगी। उसके लिए वह स्थान उपयुक्त नहीं था।"

"पति उसे अपना लेगा रेखा।"

"शायद अभी कुछ दिन कोई बखेड़ा नहीं होगा। वह बहुत सुन्दर और लुभावनी है। उसमें आदमी को लुभानेवाले सब गुण विद्यमान हैं। इसका नतीजा ठीक नहीं होगा। वे दोनों दुखी रहेंगे। आपने उसे रोका क्यों नहीं।"

"मैंने उसे पुलिस में जाने को कहा था।"

"गिरफ़्तार होने के लिए?"

"हाँ।"

"आपने वह क्यों किया।"

"उसने तुम्हारा हवाला देकर मेरे क़ानूनी तर्कों को काटने की चेष्टा की थी। स्वयं अपनी वकालत की। फिर भी मैं नहीं पिघला। लेकिन मिस्टर सिंह ने उसे मुक्त कर दिया है।"

"क्या तुम यह नहीं चाहते थे?"

"नहीं, मैं चाहता था कि उसे सजा मिले।"

"तब तुम हिंसक हो।"

"मैं?"

"वह तुम्हारा भरोसा करके राय मांगने आई और तुमने यह नेक सलाह दी। धन्य हो तुम!"

"लेकिन रेखा, यदि तुम अपने अपराध का न्याय पूछतीं तो मैं तुम्हें यही उत्तर देता कि तुम क़ानून की शरण लो।"

"क्या दिनेशजी?"

दिनेश ने देखा कि रेखा का चेहरा स्याह पड़ गया है। तो वह बोला, "रेखा, मुझे माफ़ करना। मैंने वह अपनी राय दी थी। उस समय मैं अपनत्व की भावना भूल गया।"

रेखा मुरझा गई। वह कुछ बोली नहीं। दिनेश ने परिस्थिति सँभाल

ली। बोला, "तबियत न लग रही होगी। ग्रामोफोन पर रिकार्ड लगाऊँ।"

"हां।" रेखा बल पाकर बोली।

दिनेश ने एक सुन्दर रिकार्ड चढ़ा दिया। रेखा आंखें मूँदे हुए झूमती रही। फिर सोचा कि सब झूठ है। दिनेश अब भागेगा नहीं। वह यहीं रहेगा। लेकिन कभी-कभी दिनेश उसे बहुत डरा देता है। वह ऐसी बातें क्यों कहा करता है। रेखा अभी बहुत कमज़ोर थी। दिनेश उठकर बाहर चला गया। बरांडे में खम्भे के सहारे खड़ा हो गया। सामनेवाले 'लान' पर एक दिन पार्टी हुई थी। आज बरांडे पर वह अपनी एक हैसियत से खड़ा है। कब तक यहाँ रहेगा? क्या यह ठीक है? आज सब सही है। बाक़ी सब झूठ और व्यर्थ!

एकाएक रिकार्ड बन्द हो गया। वह भीतर चला गया। आश्चर्य उसने देखा की रेखा अपनी आँखों की पलकें पोंछ रही थी। दिनेश चुपचाप खड़ा रहा। सोचा, किसी दिन पूछ लेगा। आज तो वह अपनी कोमल भावनाओं की पंखड़ियों में लिपटी हुई थी।

दिनेश ने आलोचना के बल पर नारी को कभी जीत लेने की चेष्टा नहीं की है। न वह मन में किसी सुन्दर चिड़िया का ढांचा गढ़कर उसे गुलेल से बेधने का पक्षपाती था। रेखा की उन आंसुओं ने उसे विचलित ज़रूर किया, मगर वह उसके कारण को न पूछ सका। वे केवल खारी आंसू की बूँदे ही नहीं थीं। वह उनका अन्वेषण कर सकता तो भीतरी तत्वों को जान लेने में आसानी होती। उनमें जो क्षार है, वह सब अपदार्थ नहीं है। यहीं नारी से वह डरता है। ऐसी अवस्था में नारी पुरुष के दिल को पिघलाकर उसके ख़ून के भीतर अपना अपनत्व फैला देती है। पुरुष अपने को भारी पाकर नारी को सहज ही अपना लेता है। यह नारी को असहाय पाकर क्षमा करने का

कोई बहाना नहीं है। उसे इस रेखा से अभी कोई निश्चित सम्बन्ध नहीं रखना है। यदि चाहता है तो उसे सारी जिम्मेदारी रेखा को सौंप देनी होगी। वह लता को बहुत भार सौंप चुका है। लता को उस रात एक रोमांचकारी वातावरण सौंपना! आज लता बीमार है और बाहर नहीं निकलती। यह तो अपनी रुचि है। वह व्यर्थ ही अपने मन में एक विवाद मोल ले लेता है।

शीला आई थी। उसके साथ एक सुन्दर कुत्ता था। दिनेश उसे देखता रहा। वह कितनी विभिन्नता पेश कर रही थी। अब रेखा स्वतन्त्र विचार से नहीं सोच पाती। उस पर किसी 'अज्ञात' का प्रभाव है। वह स्वयं उसे नहीं जानती। कभी-कभी उसे छूकर भी तो पहचान नहीं सकी। दिनेश 'प्रेम' को एक शब्द कहकर पुकारता है। अपने भीतर इस कलापूर्ण शब्द को स्थान देने की इच्छा उसे नहीं है। सुन्दर गाना सुनकर, सुन्दर वस्तु देखकर फिर भी कभी-कभी दिल में हलचल मच जाती है। लेकिन उस प्रेम को छानकर अलग फेंक देने की सामर्थ्य उसमें नहीं है। वह नारी और पुरुष के बीच के साधारण प्राकृतिक लुभाव से अलग नहीं है। सब नारियों की शारीरिक गठन एक सी होती है और उनके मस्तिष्क में कुछ ग्रेन दिमाग होता है। उसमें भी लोहा अधिक है, अतएव जंग लग जाने का भय है। जीवन में ऋतुएँ बदलती है और उनका असर भी पड़ता है। केवल रेखा को नारी मानकर ही सब पर राय नहीं दी जा सकती है। रेखा, लता अथवा और लड़कियों को वह अलग-अलग स्वभाव की पाता है।

शीला ने नमस्ते किया। उस परिचय को पाकर वह सुन्दर कुत्ता दिनेश को सूँघने लगा कि मालकिन को उस पुरुष जन्तु से कोई ख़तरा तो नहीं है। वह शीला के साथ भीतर गया। रेखा ने चिट्ठी ले ली और पढ़कर कहा, "मेरी एक यूनिवर्सिटी की सहेली सुबह की गाड़ी

से आई है। वह लता के यहां टिकी है। उसे देखकर आपको ख़ुशी होगी।"

एक और! रेखा की बात का कोई उत्तर न देकर दिनेश ने मन में सोच लिया। रेखा ने कहा, "लता ने पूछा है कि वे कब चलीं आवें।"

"इजाज़त माँगी है?"

"मुझे लिखकर शायद तुमसे।"

"क्यों?"

"इसी लिए कि इस समय मैं असहाय हूँ और तुम मेरी रक्षा कर रहे हो।"

दिनेश शीला से बोला, "वह आ जावें।"

"अच्छा रेखा जीजी।"

"भागने की सोच रही है? कुत्ता कैसा है?"

"अच्छा हो गया।"

"तू साथ आवेगी न?"

"नहीं।"

"आना और वायलिन के साथ।" दिनेश से कहा, "अब तो यह इस विद्या में दक्ष हो गई है।"

"तो ज़रूर आना शीला।"

शीला चुपचाप नमस्ते करके चली गई।

"क्या तुमको भी कुछ शौक़ है?" रेखा ने पूछा।

"गाना तो बिलकुल नहीं आता। वैसे आशावादी समाज के लिए यह बड़ी देन है। इससे अस्वस्थता हट जाती है। कभी-कभी तो उसका प्रभाव अच्छा नहीं पड़ता। तुम तो बहुत सुन्दर गाती हो। मिस्टर सिंह एक दिन कह रहे थे। अच्छा, दूसरा कौन-सा रिकार्ड चढ़ा दूँ?"

"जो आपको अच्छा लगता हो।"

"क्या तुम उसे सुनना पसन्द करोगी ?"

"हां।"

दिनेश ने एक रिकार्ड छाँटकर चुपचाप चढ़ा दिया। जब वह बजने लगा तो रेखा मुसकराई। वह जानवरों की बोलियां सुना रहा था।

दिनेश ने सोचा कि वह रेखा की असहाय अवस्था से अनुचित लाभ उठा रहा है। रेखा छुई-मुई की तरह अपनी टेढ़ी-मेढ़ी बेलों को पसारती जाती है। वह हलका धक्का देगा तो वह टूट जायगी। वह उसका कैसा व्यवहार है ? रेखा ने आंखें मूँद लीं। वह चुपचाप उसे देखता रहा। सोचता कि वह उसकी सुकुमार भावनाओं से कोई वास्ता नहीं रखेगा। वह इस अधीनता से बरी रहेगा। यह रेखा कब तक मार्ग-प्रदर्शिका बनेगी ? या वह स्वयं गृहस्थ बनना चाहता है। मौजूदा समाज में निम्न-मध्यवर्गी व्यक्ति के मार्ग में नारी रुकावट डालती है। लेकिन एक लड़की उसे अपना हृदय सौंपकर, उसके हृदय पर ताला लगाकर मर गई थी। आज रेखा उस ताले को खोल लेने के लिए उत्सुक लगी। आज वह रेखा से यह स्पष्ट नहीं कह सकता कि वह जा रहा है। उसे यहाँ अधिक नहीं रहना है। भविष्य में एक दिन उसे यह बात जान लेनी होगी। यहां वह ठीक पैसे नहीं कमा रहा है। उसे भले आदमी की तरह रहने के लिए कमाई-धमाई करनी पड़ेगी। पैसा न कमानेवाले निकम्मे लड़के का ख़ून उस छोकरी ने किया था। दिनेश वैसा ही है। उस लड़के से कदापि अच्छा नहीं है। इस शहर में वकालत करने के बदले चन्द सुन्दर लड़कियों के साथ खेल खेल रहा है। उसे वकालत करनी चाहिये और उसके बाद उस समाज की भीतरी बुराइयों को सुलझाना है, जो वह बचपन से अपने मन में जमा किये

हुए है। पहली बात उसका अनाथालय में अनायास चला आना और दूसरी उस लड़की की आत्महत्या। कई बातों का सबक उसने पढ़ा है। अपने अनुभव तथा समाज की पिछली घटनाओं के वैज्ञानिक आधार पर वह उस समाज के वर्गों के साथ काम करेगा, न कि 'देव-दूत' की भांति।

रेखा ने आंखें खोलीं और चिन्तामग्न दिनेश से पूछा, "दिनेशजी एक बात पूछती हूं, बुरा न मानना। क्या तुम्हारी दृष्टि में सब लड़कियां नेतृत्व ही करना चाहती हैं? उनका यही दस्तूर है। तुमने कभी इस भेद को मिटाने की चेष्टा की थी?"

दिनेश समस्त बात सुनकर चुप रहा।

"क्या सोच रहे हो?"

"कुछ नहीं।"

"यही कि यहां छोड़कर जल्दी किस प्रकार भागा जाय, ताकि कोई जल्दी बेड़ियां न डाल दे। त्रिया-चरित्र से तुम बहुत घबराते हो न!"

दिनेश इस बात को सुनकर हँस पड़ा।

"मैं खोटा चरित्र रखती हूँ, लोगों की ऐसी धारणा है। लेकिन मैं बहुत दुःखी हूँ। तुम सभी बातें जानते ही हो। अपने चरित्र पर फिर भी मैंने कभी अविश्वास नहीं किया।"

"तुम्हारे चरित्र को मैं पहचानता हूँ रेखा! उसमें मोह का इतना अधिक अंश हितकर नहीं है।"

"दिनेशजी, मुझे जीवित रहने की कोई इच्छा नहीं है। किसी चाह के प्रति उत्साह नहीं है। यह देख रही हूँ कि तुम बातों में 'मैगनीशियम' की भाँति चमककर अपने मन में राख बनते जा रहे हो। यह बात

अधिक दिनों तक नहीं चलेगी। क्यों, क्या मैं झूठ बोल रही हूँ? इस पर आपको क्या कहना है?"

"तो क्या प्रेम का पाठ पढ़ लेने पर मेरी रक्षा होगी? तुम अस्वस्थ हो रेखा। इन भावनाओं की महीन डोरियों में उलझ जाती हो। अभी तुम इन पर अधिक न सोचा करो। यही हितकर है।"

"मैं मोटा ताँत बुनना नहीं जानती हूँ न! अस्वस्थ हूँ—इसीलिये। इस समय मैं किसी पंगु को सँभाल सकने तक में असमर्थ हूँ। आज की अपनी बेबसी स्वीकार कर लेती हूं।" रेखा हाँफने लगी।

"लेकिन रेखा, एक व्यक्ति का इच्छा का मूल्य दूसरा शायद कम आँके, यह बात तुम मानती हो।"

"हाँ।"

"तब मेरा कोई दावा तुम पर नहीं है। मैं कभी अपने मन में घमण्ड नहीं करता। तुम्हारे एक 'अन्धे प्रेम' को मैंने प्यार किया है, यह सच बात है। यह तो तुम जानती ही हो, जब तुम बेहोश पड़ी थीं, उस समय तुम्हारे मैं प्राणों को प्यार करने का लोभ नहीं सँवार सका था। ऐसी अवस्था वाले उपकार के लिए कोई बदला नहीं चाहता हूँ।"

शीला, लता तथा एक और युवती आ गई थीं। दिनेश चुप हो गया। वह उस जंगली जानवर की तरह भयभीत जान पड़ा जिसके आगे धरा हुआ शिकार दूसरा बलवान् पशु छीन लेता है। अब वह खड़ा हुआ। लता ने उसे नमस्ते किया। उन सबका अभिवादन स्वीकार कर वह बाहर चला आया।

रेखा डरी। वह उत्तेजित हुई। फिर लगा कि कहीं वह उन सबके आगे चकनाचूर न हो जाय। वह उदाहरण नहीं बनना चाहती थी। अपने हृदय की चेतना में वह अभी तक दिनेश के जीवन को झाँक-झाँककर देख रही थी कि अवसर पाते ही वहाँ स्थान बना ले। अब वह

छूटता -सा प्रतीत होने लगा। लता ने आकर उसे और अधिक सोचने का अवसर दिया है। आज अब वह दिनेश से डरने लगी है। एक दिन जिस प्रकार मुक़ाबला करना निश्चय किया था, उसे भूल गई है। दिनेश आज उसे निर्जीव बनाकर फिर प्राण डालना चाहता है। लेकिन वह इस भाँति क्यों चला गया ?

युवती ने पूछा, "अब कैसी हो रेखा ?"

अपनी भावुकता को समेटकर बोली, "अब मैं अच्छी हो गई हूँ।" लता से पूछा, "बहुत दिनों में आई ?"

"जीजी, इधर मेरा मन ठीक नहीं था।"

"सगाई तक नहीं हुई और........." रेखा की सहेली ने कहा।

लता तो बोली, "हमारे साहस बहुत अच्छे हैं। कल चौथा ख़त पहुँचा है। लेकिन तुम, अपनी सुनाओ कि तीन साल में दो की भरती कर ली है। यही रफ़्तार रही तो जीजाजी की निभ चुकी।"

आगन्तुक रेखा से बहुत बातें पूछने लगीं। अपना हाल सुनाया कि बच्चों के मारे घर नहीं छोड़ सकी। छोटा बीमार था।"

"तब माफ़ करती हूँ।" रेखा बोली।

शीला वायलिन की ओर देख रही थी। रेखा ने कहा, "शीला, सुना तो कि तूने कितना सीख लिया है।"

शीला वायलिन बजाने लगी। वह बड़ी देर तक बजाती रही। एक गहरा मीठा स्वर बाहर। बाग़ में गूँजने लगा। दिनेश ने उधर मुड़कर देखा कि शीला ही थी। उन तारों की झंकार ने उसके हृदय में थिरकन पैदा कर दी। वह एक घने शाखाएँ फैलाये हुए पेड़ के नीचे खड़ा हो गया। नीचे देखा कि ज़मीन पर रंगीन पर फैलाये हुए एक तितली मरी पड़ी थी। वही एक बलवान् सन्तोष मानो कि हो। दिनेश व्यक्ति को

स्वस्थतापूर्वक स्वतन्त्र ही उठने देने का पक्षपाती है। वह बाज की भांति ताक़तवर बनना चाहता है—स्वयं और समाज की अलग-अलग श्रेणियों के साथ। आकाश में उड़कर दुनिया को देखने का लोभ उसे नहीं है। वह तो सबके बीच रहना चाहता है। उनमें से किसी के साधारण घर में रहना चाहता है। दुनिया की दृष्टि में वह बुद्धिवादी है। वैसे उसकी कोई बड़ी ख्वाहिश नहीं है। विश्वविद्यालय की परीक्षाएँ सम्मान से पास कर लेने पर मिस्टर सिंह ने पूछा था, 'किस 'कम्पिटिशन' में बैठोगे?' उस क उत्तर था कि वह यह नहीं चाहता है। मिस्टर सिंह को आश्चर्य हुआ था। उनकी धारणा थी कि दिनेश ओहदों को लालच से देखेगा। आज भी मिस्टर सिंह यही चाहते हैं कि वह उनके समाज का जीव बन जाय। यहाँ अपनी अनिच्छा पर भी उसे मिस्टर सिंह के अनुरोध से आना पड़ा।

शीला बायलिन बजा रही थी। वह पिछले युग की फूहड़ लड़की से भिन्न लगी। वह अपना व्यक्तित्व रखना जानती है। एकाएक बायलिन बन्द हो गया। दिनेश ने देखा कि लता उसे लिये हुए थी। अब वह बजाने लगी। लता का बजाना उसे बहुत अच्छा लगा। एक नई चेतना आई। उसका मन वहाँ जाने को कर रहा था। उसने देखा कि घर की नौकरानी उधर आ रही थी। पास आकर बोली, "खाना तैयार है, चलिए।"

इस बहाने को पाकर वह चुपचाप आगे बढ़ गया। दरवाज़े से देखा कि लता बजाने में तल्लीन थी। वह वहीं पर खड़ा हो गया। रेखा देखकर बोली, "जेण्टस् फ्री हैं।"

लता ने दिनेश को देखा। एक अजीब स्वर के साथ एक तार टूट गया। लता उसी भाति बायलिन लिये हुए थी कि दिनेश ने पास

आकर पूछा. "तबियत कैसी है ? मैं नहीं आ सका। शीला से सब बातें मालूम हो जाती थीं।"

"अच्छी हूँ", कहकर लता ने पास बैठी युवती से परिचय कराया।

रेखा बोली, "मिसेज माथुर मेरे साथ पढ़ती थीं।"

फिर कमरे में सन्नाटा छा गया। कुछ देर के बाद रेखा ने दिनेश से कहा, "नौकरानी बड़ी देर से इन्तज़ार कर रही है।"

"तुमने दूध पी लिया ?"

"हाँ।"

लता ने यहाँ दिनेश का एक नया रूप पाया। अब रेखा मिसेज माथुर से बोली, "ये न होते तो मैं मर गई होती। मैं इनकी ऋणी हूँ।"

"आप क्या कह रही हैं। यह तो मेरा कर्तव्य था। मैं इस लायक नहीं कि इस ऋण का बोझ ढोते-ढोते फिरूँ। आप न जाने क्यों चार आदमियों के बीच मुझे लाचार करना सीख गई हैं।"

और बिना किसी जवाब के सुने ही खाने के कमरे में चला गया। वह अपनी किसी उदारता के लिए बंधन स्वीकार नहीं करेगा। वह बड़ा नहीं है। उसे भूख लगी थी। वह खाना खाकर रेखा के कमरे में लौट आया। रेखा बोली, "सिगरेट पी लो। आलमारी में टिन धरा हुआ है।"

दिनेश ने सिगरेट निकाला। अब शीला बोली, "जीजी, हम तो किसी ने भी खाने को नहीं पूछा ?"

"मैं होटल को फोन करके तीन थाल मँगवाये लेता हूं।"

"यह तो हम बहुत दिनों से उम्मेद कर रहे हैं। अब जीजी अच्छी हो जाय, तब दावत रहेगी।"

शीला ने कहा, 'माजी इन्तज़ार कर रही होंगी।"

"क्या मिसेज माथुर भी जावेंगी ?"

"इस वक्त तो वह हमारे यहाँ चलेंगी। साँझ को आप होटल में 'दो प्याजा' तथा 'काश्मीरी कोफता' बनवाकर रखिएगा।"

वे तीनों चली गईं। अब दिनेश बोला, "तुम मुझे इस भांति क्यों उबारना चाहती हो रेखा ?"

"मैं !"

"हाँ, बार-बार तुम मुझे ऊपर उठाकर साबित करना चाहती हो कि मैं महान् हूँ।"

"मैं सच बात कहती हूं। लेकिन फिर न जाने क्यों पीड़ा हो रही है ?"

"कहाँ ?" पूछकर दिनेश ने देखा अभी पट्टी बँधी थी।

रेखा बोली, "यहीं आपने एक दिन मेरे प्राणों को पहचाना है। वह मेरा सौभाग्य था। लेकिन इन प्राणों का मूल्य बढ़ाकर आपने एक झंझट मोल ले लिया है।"

"उसी भाग्य की बात से फिर घटना तोलने लगो हो। भाग्य तो कुछ शकों और अन्धविश्वासों के सहारे पनपा है। आज भी यह समाज के प्राणियों का पथ-प्रदर्शक बना हुआ है। समाज के प्राणियों की आस्था जिस प्रकार भगवान् से कम हो गई, उसी प्रकार भाग्य से भी कभी एक दिन छुटकारा मिल जायगा।"

"क्या आप भाग्य को बिलकुल नहीं मानते हैं ?"

"मैंने भाग्य पर बचपन से ही भरोसा नहीं रक्खा। आज ही अब उसका आसरा ताकना कहाँ तक उचित बात है ?"

"लेकिन.........."

"लेकिन मैंने भाग्य से कभी सांत्वना नहीं बटोरी है। भाग्य ने इन्सान में भिन्न सा आत्मभाव ला दिया है। कर्तव्य आवश्यक है। भाग्य तो गुड़िया है। बचपन में एक खास अवस्थावाली लड़कियाँ गुड़िया-

गुड़िया खेला करती हैं। भले ही मुसीबत का मारा हुआ व्यक्ति अपनी भावुकता में एक तिनका इसे समझकर सहारा पा जाय, पर लाभ कुछ नहीं है।"

"अच्छा, लता को देखकर तुम भाग क्यों गये थे?"

"ताकि वह स्थिर होकर इस नये वातावरण को अपना ले। मैंने उसे थोड़ा समय इसी लिए दे दिया था। आज वह बड़ी हो जाने पर पिता के घर की स्वतन्त्र आदतों में पल रही है। वह मा की लाड़ली बेटी है। वह अपनी पूरी आवश्यकताओं तक को नहीं जानती। उसे कुछ समझाया जाय, मान लेगी। तुम्हारी तरह तकरार नहीं करती है।"

"तभी तुमने उसे शादी कर लेने के लिए दिलासा दिया है।"

"आप यह बात समझ गईं।"

"मैं सब कुछ भाँप कर चुप रही। लता इसी लिए यहाँ नहीं आती कि हम दोनों एक साथ हैं। वह आपसे बहुत डरती है।"

"यह सही बात है।"

"वह आपमें अपने पति की प्रतिछवि पाती है।"

"देवता पति की, न कि शारीरिक पति की।"

"फिर भी वह लाज बरतती है।"

"वह इसी लिए कि उसने मेरे मारफ़त पति को पाया है। यदि मैं उससे वादा न करवा लेता, तो वह इस बात को स्वीकार न करती। उस पर किसी का प्रभाव नहीं था। मैंने तुम्हारी आड़ नहीं ली। मैंने उससे परिस्थिति साफ़ कर दी कि मैं देवता और दासीवाला दरजा नहीं मानता हूँ।"

"क्या कह रहे हो तुम?"

"मैं न रेखा! सच बात है। बस्ती के बीच जन्म पाकर वहां की

सभ्यता का असर मुझ पर नहीं हुआ। स्वभावतः मैं कुछ उजड्ड रहा हूँ। पढ़-लिखकर भी ठीक-सा दुनियादार जन्तु नहीं बन पाया। सभ्य किसे कहते हैं? मैंने अपने संस्कारों पर बाहरी असर नहीं पड़ने दिया। साधारण व्यक्ति की भांति उठा हूँ। एक दिन जिस लड़की को मैंने प्यार किया, वह कोई 'मिस' न थी। मेरी ही भांति थी। उसके साथ किसी सड़क के कोने पर 'लाई की मिठाई' मैं आसानी से खा सकता था। वह न मरती तो उसकी कोई गृहस्थी होती और मैं वहीं रहता। मैं उससे गृहस्थी चलाना सीखकर अपनी गृहस्थी भी जुटाता। मैं इस भांति उस ओर से उदासीन और लापरवा न रहता। मैं अपाहिजों की एक छोटी टोली का नेतृत्व नहीं चाहता हूँ। यह जरूर चाहता हूं कि हर एक व्यक्ति जान जाय कि कमी कहाँ है? और अपनी आलोचना करने के बाद निश्चित कर लिया जाय कि उसे किस भांति हटाया जा सकता है।"

मिस्टर सिंह आ गये थे। मिसेज सिंह ने बच्चे को उसे सौंपते हुए चुपके से उसके कान में कहा, "मेरी बात आपको याद है?"

"हाँ।"

रेखा ने चुपचाप बात सुन ली।

मिसेज सिंह रेखा के पास बैठ गईं। दिनेश और मिस्टर सिंह गोल कमरे की ओर बढ़ गये। वे सोफे पर बैठकर बोले, "मैं कल सुबह की गाड़ी से जा रहा हूँ। फिलहाल एक महीने वहाँ रहना होगा। बच्चे यहीं रहेंगे।"

"मैं भी जाने की सोच रहा हूँ।"

"कहाँ?"

"अभी खुद मैंने नहीं सोचा है।"

"जाओगे कब तक?"

"यह भी तय करना है, क्योंकि भाग जाने का प्रश्न नहीं है। न कहीं एकान्त में वंशी बजाने को जा रहा हूँ और तुमको सारी बातें लिखकर सूचित करता रहूँगा।"

"एक महीने तो रहोगे?"

"शायद नहीं। अब मुझे किसी काम पर जुट जाना है।"

"दिनेश!"

"क्या है मिस्टर सिंह?"

"बात क्या है?"

"मैं वकालत नहीं करना चाहता हूँ।"

"कहीं नौकरी करोगे?"

"नहीं।"

"फिर क्या तय किया है?"

"अपना 'प्लान' तुमको एक दिन बता दूँगा।"

"क्या क्रान्तिकारी दल जाओगे?"

"एक व्यक्ति का उस भाँति समाज की समस्या हल करनेवाला जादू मेरी समझ में नहीं आता है। न एक, दो, तीन, चार व्यक्तियों की संस्था, जो राजनीतिक डकैती और हत्याएँ सिखलाती हैं, उस पर मेरा विश्वास है। मैं तो समाज की ऐतिहासिक पद्धतियों की सही आलोचना करके रास्ता ढूंढ़ने पर विश्वास रखता हूँ।"

"और यहां?"

"रेखा के लिए चिन्तित हो न? तुम्हारा ख़याल है कि मैं रेखा के नागफांस में बँध गया हूँ। जब रेखा लाचार थी, तब मैंने उसे जीता। वह मेरा कर्तव्य था। आज रेखा चाहती है कि मेरी राह के कांटों को हटाकर मेरे लिए सरल रास्ता बना दे। वह सारा भार निभा लेने के लिए तैयार है। वह मेरे उपकार का बदला मुझे चुकाना चाहती है।

मेरी कृतज्ञता का अहसान बार-बार दुहराती है। आज अपनी उस ख़ुशी में यह मेरी किसी भी बात को स्वीकार कर सकती है। मैं उसका विश्वासपात्र बन गया हूँ।"

"दिनेश !"

"यह सब सच है। आज मैं धोखा देकर उसके आंचल पर दस्तख़त कर सकता हूँ। उसके बाद यदि भाग जाऊँगा तो रेखा को दुःख नहीं होगा। लेकिन यह समाज के लिए कितना ग़लत उदाहरण होगा। रेखा मुझसे कोई आशा नहीं रखती है। यदि वह मुझे रोकना चाहती तो कह देती कि रुक जाओ। वह जानती है कि मैं यहां नहीं रह सकूंगा। इसी लिए मेरी ओर से निश्चित है।"

"दिनेश, तुम रेखा को न छोड़ो। तुम्हारी भाभी चाहती हैं कि तुम साथ रहो।"

"तुम ठीक कह रहे हो मिस्टर सिंह। जहाँ वह घाव है, उसके आसपास का शरीर मैंने देखा है। यदि उसे न देखा होता तो सम्भवतः कुछ दिन रुका रहता। वह शरीर बहुत सुन्दर है। उस शारीरिक रूप में शीघ्र ही रेखा स्वस्थ हो जायगी। उसका मस्तिष्क अभी स्वस्थ नहीं है। वह बड़े विचारों की ऊबड़-खाबड़ राह को पार कर रही है। इस घटना ने उसका मन दुनिया की टीमटाम से हटा दिया है। यदि उसका अधिकार होता तो वह बौद्ध भिक्षुणी की भांति निर्वाण की तलाश में चल देती। अब तुमसे भी उसका नाता टूट गया है। अब तुम उसे उलझाने की चेष्टा न करना। एक बार वह तुम्हारे सम्मुख आत्महत्या कर चुकी है। अब तुम उसे मुक्त कर दो। वह अपने लिए गृहस्थ ढूँढ़ लेगी। वह स्वयं इस योग्य है। वह भविष्य आशाप्रद है। इसी लिए मुझे यहां से चले जाने का ख़ास दुःख नहीं है। अब वह पुरुष की सही सहानुभूति चाहती है।"

"दिनेश, मैं स्वयं यही चाहता हूँ ?"

"तुम !"

"तुम्हारा त्याग देखकर।"

"मेरा !"

"मैंने समझा था कि तुम रेखा के साथ आजीवन रहोगे। यही तुम्हारी भाभी सोचती है। यह बात मैंने आज पहले-पहल उसी से सुनी है। लेकिन तुम्हारी बातों ने उस नये भविष्य के ढाँचे को मिटा डाला है।"

"लेकिन यह तो अपनी-अपनी सुविधा है।"

नर्स आई थी। रेखा की दवा की व्यवस्था करने के लिए; दिनेश उनके साथ चला गया।

मिस्टर सिंह सोचने लगे कि इस कमरे में रेखा के साथ अकसर वे बैठे हैं। आज अब उन दोनों को दिनेश ने अलग-अलग कर दिया है। दिनेश के अलावा अन्य कोई व्यक्ति यह सुझाव देता, वे स्वीकार नहीं करते। आज तो इस सम्पत्ति को छोड़ रहे हैं। रेखा को उबारने के लिए नहीं, दिनेश की बात को मानकर। वह रेखा जब गृहस्थी में प्रवेश करेगी, वे उसका स्वागत भारी उत्साह से करेंगे। आज तक यह बात वे नहीं सोच सके थे कि रेखा का समाज के निर्माण में बड़ा भाग है। वह अपने परिवार के साथ-साथ छोटी-छोटी कड़ियों के द्वारा परिवारों के समूहों पर अपना प्रभाव डालेगी। दिनेश चाहता है कि रेखा अपना व्यक्तित्व बनाये रहे। वह अपने व्यक्तित्व के बोझे में उसे नहीं पड़ा रहने देना चाहता है।

रेखा यह बात जानती है कि दिनेश सामर्थ्यवान् है। वह उसके आगे लाज-शरम नहीं बरतती है। जब दिनेश नर्स को सहायता दे रहा

था, वह चुपचाप उसे देख रही थी। दिनेश समझकर भी मुरझाया नहीं। नर्स चली गई। दिनेश बोला, "अब तुम कुछ दिन में बैठ सकोगी।"

मिसेज सिंह बाहर बरामदे में टहल रही थीं। रेखा ने कहा, "एक बात पूछूँ, बुरा तो नहीं मानोगे ?"

"क्या बात है ?"

"मिसेज सिंह ने क्या कहा था ?"

हँसता हुआ दिनेश बोला, "वे हमें दूल्हा-दुलहिन के रूप में देखना चाहती हैं।" और वह ठहाका मारकर हँसा।

इतने में मिसेज सिंह भीतर आईं। पूछा, "क्या बात है ?"

"कुछ भी नहीं। अच्छा, बेबी का क्या हाल है ?" पूछकर उसने बच्चे को ले लिया। उसे लेकर रेखा के बिस्तर के पास पहुँचा। रेखा ने बेबी की उँगलियाँ अपने मुँह में डाल लीं। पहले तो वह अचरज में चुप रहा। फिर एकाएक रोने लगा। दिनेश ने उसे चुप कराया।

मिस्टर सिंह आ गये थे। रेखा उत्साह से बोली, "बेबी को देखा ?"

"क्यों क्या बात है ?"

मिसेज सिंह बोलीं, "आप अपने पास तो बुलाइए।"

"बेबी" बाप के पूरे अधिकार से मिस्टर सिंह ने उसे अपने आप लेना चाहा। लेकिन वह फूट-फूटकर रोने लगा। दिनेश हँस पड़ा और कहा, "यह फुटबाल का मैच नहीं है मिस्टर सिंह।"

"वह डरता है।"

"आप पुलिस के आदमी हैं।" रेखा के मुंह से निकला।

अब दिनेश मिसेज सिंह से बच्चों की कई आदतों के बारे में कह रहा था। बीच-बीच में कुछ साधारण रोगों का उपचार सुझाने में नहीं

चुकता था। अब वह बेबी को रेखा के पास ले गया। बोला, "अपनी उँगली देना।" रेखा ने दे दी। दिनेश ने देखकर कहा, "तुम्हारी लम्बी नुकीली उँगली है। तुम्हें चित्रकार होना चाहिए था।"

रेखा 'ओ मा!' हलके चीखी।

"क्या हुआ?" मिस्टर सिंह ने पूछा।

"कुछ नहीं। बेबी ने रेखा की उँगली पर अपने दाँतों की आजमाइश की है।"

मिसेज सिंह मुसकराईं और रेखा शरमा गई।

मिसेज और मिस्टर सिंह चले गये। दिनेश उठा और खिड़की के पास खड़ा होकर बाहर की ओर देखने लगा।

"क्या देख रहे हो?"

"छोटी-छोटी चिड़ियों का घोंसला बनाना। बाज ऊँची-ऊँची चट्टानों के बीच घोंसला बनावेगा। उसके बच्चे ज्ञान आते ही शिकार करने लगते हैं। वे इतना ही जानते हैं कि कुछ ऐसी चिड़िया दुनिया में हैं, जिनको वे अपनी खुराक बनावेंगे। इसी लिए उस घोंसले से दूर-दूर तक छोटी-छोटी चिड़ियाँ नहीं रहती हैं।"

"उस हिंसक चिड़िया का हवाला देकर तुम मुझे क्यों डराते हो?"

"मेरा बचपन उन छोटी-छोटी चिड़ियों की तरह कटा। एक दिन मैंने देखा कि समाज में बाजोंवाला दल भी है। उसके एक प्रतिनिधि ने एक लड़की की हत्या की। उस बात को समझकर मैंने दुनिया का ज्ञान प्राप्त किया। मेरी आँखें खुलती चली गईं। आज मेरी अवस्था सत्ताइस साल की है। इस बीच घटनाएँ बटोरने के अतिरिक्त मैंने कुछ नहीं किया। अब समझ में आया कि मैं ग़लती पर था। घटनाओं की गठरी लादे-लादे फिरने से कोई उपकार नहीं है। मेरा यहाँ का जीवन एक साधारण अनुभव है, जहाँ पर कि तुम्हारे प्राणों को पहचाना

है। लेकिन मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में तुम मुझे भूल जाने की चेष्टा करोगी।"

"मैं?"

"मैं यही चाहता हूँ।"

"इन्सान क्या-क्या नहीं सोचता है?"

"अच्छा रेखा, यदि याद ही करती रहोगी तो हित क्या होगा? यह 'यूटिलिटी' का जमाना है। उसके लिये हमें अपने पर विचार करना होगा। मैं आज यहाँ के वातावरण से भाग जाना नहीं चाहता हूँ। मैं अपने बचपनवाले ज्ञान के आधार पर भविष्य का ढांचा बना चुका हूँ।"

रेखा चुपचाप सारी बातें सुन रही थी। दिनेश फिर बोला, "अब अधिक नहीं कहूंगा। तुम आराम कर लो। कल मिस्टर सिंह भी बाहर जा रहे हैं। अभी उनसे मालूम हुआ है।"

"कहाँ?"

"एक महीने के लिए जा रहे हैं। तुम्हारी सहेली यहाँ कब तक रहेगी?"

"यही चार-पांच दिन।"

"लो, फिर आ पहुँची। अच्छा, तो मैं साँझ को आऊँगा।"

"खाना यहीं खाओगे न?"

"कितनी मेहमानदारी करना चाहती हो?"

"बार बार आप यह क्या कहा करते हैं?"

"ज्यादा भीख लेते-लेते झोली न फट जाय।"

"भीख!"

"यह दया एक तरह की भीख ही होती है।" कहकर वह बाहर चला गया। रेखा चुपचाप उसे देखती रह गई।

वह भीख रेखा के हृदय पर एक भारी सूराख कर गई। एक क्षण तो वह स्तब्ध रह गई। तभी मिसेज माथुर ने आकर पूछा, "तेरे दार्शनिक दोस्त कहाँ हैं?"

"क्या!" रेखा अपनी खाली आंखों से खिड़की के बाहर देख रही थी, ताकि वह उस बाज़ को देख ले जो अपनी चोंच में कपड़े का पुराना चीथड़ा लिए हुए घोंसला बनाने जा रहा है। वह बाज़ दिनेश की भाँति हिंसा का भय तो बार-बार नहीं दिखलाता होगा।

"वे होटल चले गये होंगे।" समाधान लता ने कराया। यह लता अधिक नहीं सोचती है। वह जानती है कि दिनेश बहुत सावधान रहा करता है। वह बार-बार यह सिद्ध करना चाहता है कि वह कुछ तलाश कर रहा है। उस अनाथालयवाली लड़की के कारण वह भावुकता में कोई ऐसी संस्था बनाना चाहता है, जहाँ ये कठिनाइयाँ न हों।

यह बात सच थी। दिनेश होटल जाकर फिर कम्पनी बाग गया। उसी भाँति 'समरहाउस' के पासवाली बेंच पर बैठकर मिस्टर सिंह के चम्पा के पेड़ को देखा। वहाँ उसने रेखा की पत्नीत्ववाली महक पाई। वह घबराया नहीं। वह जानता है कि कभी एक दिन रेखा मा भी बनेगी। लेकिन वह खून करनेवाली लड़की तो रेखा के प्रति बहुत दयालु थी। सन्ध्या हो आई। आसपास नारी-पुरुष आ-जा रहे थे। बच्चे नौकरानियों के साथ खेल रहे थे। रात होने को आई। सब लोग बसेरों की ओर बढ़ गये। बाग से केवल ममत्व रह गया तो अब चौकीदार को। वह लाठी लिये खाँसता हुआ पहरा देने लगा। दिनेश जान गया कि रात को अब वहां किसी को आने की इजाज़त नहीं है। जिस भांति कुछ देर पहले कौओं का दल कांव-कांव करता हुआ अपने बसेरे की

ओर चला गया था, उसी प्रकार यह इन्सानों का काफ़िला भी चला गया है। सब रात को किसी सुरक्षित स्थान में रहना चाहते हैं। सबको अपना-अपना डर लगा रहता है।

पास चम्पा के पेड़ में अभी तक चिड़िया का एक जोड़ा चूँ-चूँ कर रहा था। उधर बिजली के तार के ऊपर भी एक जोड़ा ऊँघ रहा था। ये दोनों भी अपने-अपने आश्रय में हैं। वह दिनेश इसी भांति बैठा नहीं रह सकता है। सब चले गये हैं। घना अन्धकार है और उसके बीच बिजली के बल्ब चमक रहे हैं। वह वहां कब तक बैठा रहेगा। आजकल वह होटल से कुछ अलग है। रेखा के पास रहा करता है। रेखा को उसके आश्रय में रहने की सम्भावना नहीं है। भूत बीत गया। वर्तमान को रौंदता हुआ वह भविष्य की ओर बढ़ रहा है। रेखा अपने उत्तरदायित्व को पहचानती है। रात और बीत गई—बहुत बीत गई। अब शहर के लोग सो गये होंगे। वह कई घंटों से ख़ाली बैठा हुआ है। एक बार वह सारे शहर का चक्कर काटना चाहता है कि इसका निर्माण किस प्रकार के ढांचे से हुआ है। कितने बड़े-बड़े मकान हैं और वहां कितने परिवार रहते होंगे। साथ ही साथ वह जायदाद-वाली समस्या भी समझ लेगा। नाम के विज्ञापन की तख्तियां उसे फाटक पर टँगी मिलेंगी। इन तख्तियोंवाले इन्सान पेड़ की पीली पत्ती की भांति एक दिन ज़मीन में मिल जावेंगे।

वह उठकर चलने लगा। किन्तु गोरखधन्धावाली इन सड़कों का कोई अन्त न मिला। अब वह चौक बाज़ार पहुँच गया। वहां अभी कुछ जीवन की चहल-पहल मिली। तँबोलियों की दूकानें खुली हुई थीं। तभी किसी ने एकाएक उसके कंधे पर हाथ रख करके पूछा, "बाबूजी, कहाँ घूम रहे हो?"

"शहर में। यहाँ ख़ास रौनक तो है नहीं।"

"आप बाहर से आये है ?"

"हाँ।"

"यहाँ कब तक रहेंगे ?"

"मैं यह .खुद नहीं जानता।" कहकर दिनेश ने उस आदमी पर एक तीव्र दृष्टि डाली। वह परिस्थिति समझकर बोला, "मेरा नाम दिलावर है।"

"दिलावर ?"

"क्या आपने मेरा नाम नहीं सुना ? यहां का बच्चा-बच्चा जानता है।"

"अच्छा, मिस्टर दिलावर, तुम क्या चाहते हो ?"

"क्या आपको मुझे देखकर डर नहीं लग रहा है ? मेरा काम कुछ नहीं है। मैं लोफर हूँ और मैंने आज तक ग्यारह .खून किये हैं।"

"ग्यारह !"

"उन्नीस साल जेल भी काट आया हूँ।"

"तब आप ज़रूर बहादुर आदमी हैं।" दिनेश मुसकराया और बोलता रहा, "अच्छा दिलावर, तुम मुझसे क्या चाहते हो ? मेरा बारहवां .खून करने पर आठ-दस रुपये से अधिक तुम्हारे हाथ कुछ नहीं आवेगा। इससे ज्यादा रुपये की ज़रूरत हो तो शायद मैं दो-तीन दिन में जमाकर दे सकूँ। मुझे यह देखकर .खुशी हुई कि तुम सच बोले हो। मैं यहाँ वकालत करता हूँ। वकील साहब हूँ, समझे। कभी कोई कानूनी राय-मशविरा करना हो तो मेरे पास चले आना। मैं 'न्यू रायल' होटल में रहता हूँ। तुम फरार व्यक्ति तो नहीं हो ?"

"मैं फरार नहीं हूँ बाबूजी।"

"अच्छा, मैंने समझने में भूल की। तुम भी शहर के बाशिन्दे हो।

तुम्हारा यहाँ घर-बार होगा। मैं तो हूँ परदेशी। होटल में पड़ा हुआ हूँ। तुम्हारे बीबी-बच्चे हैं ?"

"एक रखेल है।"

"रखेल !"

"बाबूजी, एक 'टखहारी' को कुछ दिनों के लिए घर में डाल लिया है। वह भागना चाहती है, पर मेरे डर के मारे नहीं भागती। मैंने समझा दिया है कि भागेगी तो उसकी नाक काट डालूँगा। ढाई साल की सज़ा और सही। वह इसी लिए ज्यादा हल्ला-गुल्ला न मचाकर चुपचाप पड़ी रहती है। आप अब कहाँ चलेंगे ?"

"कहीं नहीं।"

"तब इतनी रात यहाँ क्यों घूम रहे थे ?"

"यों ही शहर घूमकर घर जा रहा हूँ।"

"अब मैं आपको नहीं जाने दूँगा। आप मेरे मेहमान हैं।"

दिनेश बिना किसी आनाकानी के चुपचाप साथ हो लिया। दिलावर उसे रास्ता दिखला रहा था। एक जगह दिनेश ठिठककर खड़ा हो गया।

"आओ बाबूजी। दिलावर के मेहमान की सब ख़ातिर करेंगे।"

दिनेश हिचक के साथ सीढ़ियों पर चढ़ गया। देखा, एक सुन्दर लड़की बैठी है और उसके पास साज-बाजवाले सारंगी और तबलाधारी। उधर दो-तीन टाईधारी बाबू लोग तकिये पर अधलेटे हुए थे। आगुन्तकों को देखकर वहाँ पर एक सुरसुरी फैल गई। 'फेल्टहैट' हाथ में लिये हुए एक साहबज़ादे ने दूसरे के कान में अँगरेजी में कहा, "गुंडा आ गया है। यह शहर का हाल है।"

दिलावर ने दिनेश से पूछा, "क्या कह रहे हैं !" और दिनेश ने सच बात कही दी।

दिलावर चट से खड़ा हो गया और उसने एक साहब की टाई पकड़ ली। गरजकर बोला, "ये हैं शरीफज़ादे !"

"दिलावर !" दिनेश ने पुकारा।

दिलावर पास आकर बोला, "माफ़ कीजिएगा। मुझे ग़ुस्सा जल्दी चढ़ आता है।"

बाबू साहब अपनी टाई सँभालते हुए उठे। दिलावर बोला, "आप बैठें हम जा रहे हैं।" कहकर अपने हाथ का रूमाल उस लड़की के आगे फेंक दिया। पास बैठी बुढ़िया ने फुर्ती से उसमें दो रुपये बाँधकर लौटा दिया। दिलावर के पास आकर बोली, "पान तो खाते जाते।" "आप पान खाते हैं बाबू ? "दिलावर ने पूछा।

"नहीं।"

"तो चलिए।"

दिनेश चाहता था कि उस लड़की को एक रुपया निकालकर दे दे। वह सारी बातों के लिए जिम्मेदार है। पर दिलावर ने मना कर दिया। वह बोला, "यह साली बदज़ात है।"

नीचे गली में उतरकर वह एक तंग गली की ओर बढ़ने लगा, तो दिनेश हिचका। वह बात समझकर बोला, "क्या आपको मुझ पर विश्वास नहीं है ?"

वे मैली और सड़ी गंदगी से भरी गली पार करने लगे। आसपास मिट्टी के तेल की छोटी-छोटी चिमिनियाँ वाले इधर-उधर औरतें बैठी हुई थीं। कुछ जो जरा उजली थीं, वे गुल लगी डिज लालटेन में चमकने लगीं। सारी सजावट बहुत सस्ती थी। दिलावर आगेवाली दूकान पर खड़ा हो गया। भट्ठीवाले से बोतल ख़रीदी और गट-गट-गट उसे पी गया। मुँह पोंछकर दिनेश से कहा, "तीखी थी साली। बीड़ी होगी ?"

दिनेश ने सिगरेट दे दी। तब उसने कहा, "रोज पीता हूँ साहब! चीज मस्त बना देती है।"

उसके बाद दिनेश कई जगह गया। हर एक लड़की के चेहरे को पहचानकर कुछ ढूंढ़-सा रहा था। इन इतनी लड़कियों के बीच कहीं 'अपना' सा चेहरा नहीं मिला। अनाथालय की इस सनाथालय से तुलना की। सबका एक-सा बर्ताव था। एक ही सत्कार था। हर एक की आँखों की पुतलियों में अनोखी चमक थी। सबकी सब असाधारण-सी सजावट में सजी थीं।

एक जगह दिनेश के कान में दिलावर बोला, "आप यहाँ रहें।"

"क्या?"

"यह सबसे अच्छी लड़की है—मलका। जिस पर सारा शहर लट्टू है।"

वह बार-बार उसे देखने लगा। दिलावर का प्रस्ताव सही था। लेकिन आज वह इस पर सोचने नहीं आया है। वह लड़की पुरुष के सब सवालों का जवाब आसानी से दे सकती है। जो बातें कहती है—आसान सी। पहेली नहीं है। दिलावर चाहता है कि वह रात भर वहीं रहे। एक रात काटकर अपना अपनत्व भूल जाय। ऐसा आश्रय पाकर सभी कृतार्थ होंगे। रेत भरे जीवन-पथ में यदा-कदा छोटी-छोटी सरायें होती हैं लेकिन आज उसे आश्रय की चाहना नहीं। वह भागना नहीं चाह रहा है। फिर भी रेखा ने आज अभी मुक्त नहीं किया है। उसे रेखा के प्राणों का मोह है। वह उसे अनायास प्यार करने लगा है। रेखा उसे प्यार करती है, यही बात बार-बार प्रतिबिम्बित हो रही है। वह सिर्फ़ रेखा के प्राणों को प्यार करता है, शरीर को नहीं। यहाँ वह लड़की सब आगन्तुकों को आश्रय देती है। उसे जाति-पाँति, ऊँच-

नीच, धर्म-अधर्म का विचार नहीं है। फिर भी उसकी अपनी मर्यादा बनी हुई है। वह बोला, "उठो दिलावर!"

"क्या?"

"हाँ चलो। मुझे जल्दी पहुँचना है। मेरी देख-रेख में आजकल एक मरीज़ है।"

"क्या आप डाक्टर हैं?" उस लड़की की अभिभावक बोली, "इसे भी दरद रहा करता है।"

"मैं डाक्टर नहीं हूँ।" और उठकर सीढ़ियों से नीचे उतरा।

"बाबूजी?"

"क्या है दिलावर?"

"आपको एक जगह और चलना पड़ेगा।"

"तेरी चहेती के यहाँ न?"

"हाँ, आप समझ गये।" कहकर वह खीसें निकालकर हँस पड़ा। वह स्वाभाविक हँसी थी।

वे मैली-कुचैली, सिर्फ एक आदमी के चलने लायक़ गली पार कर रहे थे। गली छूट गई। वह एक नीचे दरवाज़े पर खड़ा हो, उसे खटखटाने लगा।

दरवाज़े के खुलने पर बोला, "चीजें सँभालकर रख लो।"

घर की संरक्षिका ने ठीक से आसन बिछा दिये। दिनेश ने उस घर की ग़रीबी देखी। कहीं भी पिछले घरोंवाली चमक नहीं थी। बाईस-तेईस साल की काली अधेड़-सी युवती बैठी हुई थी। वह उस सुन्दरी को देखकर मन में हँस पड़ा। दिलावर के कन्धे को ज़ोर से थपथपाकर बोला, "तुम्हारा अहसान भूल नहीं सकूँगा।"

"क्या बाबूजी?"

"तुम एक ईमानदार दोस्त हो।" कहकर हाथ हटाया था कि एकाएक उसके छुरे को उँगलियाँ छू गईं। वह चौंक उठा।

दिलावर ने समझकर छुरी निकाली और दिनेश को देते हुए बोला, "यह तो छुरी है बाबूजी। मेरे पास और क्या है? इस डाकू की यादगार में आप इसे अपने पास ज़रूर रख लें।"

दिनेश छुरी ले ली। वह उसे गली के बाहर तक पहुँचाने आया। अब दिनेश ने पूछा, "यही है वह?"

नहीं बाबूजी, वह तो घर पर है। दो-तीन को उलझाये रखता हूँ न जाने कौन कब छोड़ दे।"

दिनेश चुपचाप आगे बढ़ गया। अपरिचित शहर में इस व्यक्ति से मिलकर उसे बड़ी ख़ुशी हुई। ऐसे चरित्र के व्यक्ति भी दुनिया में हैं। उसका अपना घर है। जहाँ वह एक रखेल ज़रूर डाले रहता है। कल कोई दिनेश से कहे कि दिनेश तुम रात को एक ख़ूनी और गुण्डे के साथ घूमते रहे हो, तो क्या उसे शर्म नहीं लगेगी? वह आसानी से कह देगा—वह दिलावर मेरा दोस्त है। उसके प्रति मुझे श्रद्धा है। मैं उसे ठीक-ठीक पहचानता हूँ। उसके जीवन का मूल्य ग्यारह ख़ून और उन्नीस साल की जेल है। वह असाधारण व्यक्ति है। उसका व्यक्तित्व शहर जानता है। अनायास ही मुलाक़ात हो जाने पर उसने एक परिचित-वाला व्यवहार बरता था। यह दिलावर देर से मिला। अब देर हो गई है। क्या वह उसे फिर मिलेगा? वह उसे ढूँढ़ेगा।

रेखा और उसकी सहेली सो रही थी। दिनेश वहां से लौट रहा था कि रेखा की नींद उचट गई। हड़बड़ी में पूछा, "कहाँ रहे? यहाँ तो इन्तज़ार करते-करते थक गये।"

"एक दोस्त से मुलाक़ात हो गई। उसी के साथ चला गया था।"

"कहाँ गये थे?"

"शहर देखने के लिए।"

उसकी सहेली जाग गई थी। रेखा ने पूछा, "जेब में क्या है ?"

"छुरी।" कहकर दिनेश ने उसे बाहर निकाला। उसकी धार को छूता हुआ बोला, "बहुत पैनी है मेरे दोस्त ने अपनी यादगार में यह तोहफा दिया है। तुम सुनकर आश्चर्य करोगी कि आज तक उसने ग्यारह ख़ून किये और गवाही ठीक न मिलने के कारण छूट गया। छोटी-मोटी सजा मिलाकर वह उन्नीस साल जेल में रहा है। वह शहर का नामी गुँडा है। फिर भी हमारी दोस्ती हो गई। मैंने ऐसे जीवट के आदमी कम देखे हैं। बाईस आउंस के ठर्रे की बोतल तो वह तीन-चार साँस में पी जाता है।"

"आपने खाना खा लिया है ?" रेखा की सहेली ने पूछा।

"नहीं।"

"चलिए।" कहकर वह डाइनिंग रूम में चली गई। दिनेश ने चुपचाप आदेश का पालन न किया। वह कमरे में ही खड़ा रहा। वहाँ प्लेटों की आवाज सुनाई पड़ी। रेखा ने उलझन हटाते हुए कहा, "जाइए न, वह बेचारी न जाने क्या सोचती होगी! लता ने आपकी कई सिफ़ारिशी शिकायतें की हैं, इसी लिए बेचारी बार-बार रसोईघर का मुआयना करती रही है। अभी थोड़ी देर हुई, खाना खाया है। एक बज गया है।"

दिनेश चला गया। प्लेटों पर सुन्दरता से खाना सँवारा धरा था। वह गृहस्थ की इस नारी की चतुरता पर मुग्ध हो गया। खाना खाता रहा और खा-पीकर धन्यवाद देकर लौट आया। अब दोनों रेखा के कमरे में थे। रेखा अवाक् उस छुरी को देख रही थी।

दिनेश बोला, "यह पिस्टल नहीं है रेखा!"

"पिस्टल ?"

दिनेश ने छुरी ले ली। रेखा मुसकराकर बोली, "धन्यवाद देना तो नहीं भूल गये हो?"

"नहीं-नहीं! भला अपने सत्कार करनेवालें को भूल सकता हूँ?"

रेखा मिसेज माथुर से बोली, "अब ये कोई नया मजहब चलाने की सोच रहे हैं!"

"क्या वहाँ चेलियाँ भी बनेंगी?"

"नहीं!" रेखा ने सुझाया।

बात को टालने के लिए दिनेश ने कहा, "आप यहाँ कुछ दिन रहें। ये अकेली हैं!"

"वहाँ घर वैसे ही छोड़ आई हूँ।"

"कोई तो होगा ही?"

"नौकरों पर घर नहीं छोड़ा जाता। वे दौरे में जानेवाले हैं।"

रेखा चुपचाप लेटी हुई थी। अब दिनेश ने कहा, "कल सुबह की गाड़ी से मिस्टर सिंह जानेवाले हैं।" और उठ खड़ा हुआ।

"होटल जा रहे हो? कल सुबह सिविल सर्जन आवेंगे।"

"मैं दस तक आ जाऊँगा।"

वह सन्तोष की गहरी साँस लेकर चुपचाप बढ़ गया। बार-बार वह छुरी को अपनी पतलून की पाकेट में छू लेता था। एक बार सोचा कि यदि उस लड़की के बाल उसके पास होते तो वह उस नस्ल की बालों-वाली लड़की को पहचान लेता। दिलावर एक लड़की के यहाँ उसे विश्राम दिलाना चाहता था। वह कैसी लुभावनी लड़की थी! वह वहां नहीं रहा। नैतिक बल भारी रहा। उसे दिलावर की तरह जीवन बसर करनेवाली चाह नहीं है। सम्भव है, दिलावर-सरीखे व्यक्तियों को वह ढूंढ़कर उनको सही परिस्थिति समझा दे।

होटल पहुँच करके उसने चुपके से अपने कमरे का दरवाजा खोला। कपड़े पहने हुए ही पलँग पर लेट गया। नींद आ गई।

दिनेश बड़ी सुबह मिस्टर सिंह के कमरे में पहुँचा। देखा कि वे अखबार पढ़ रहे थे। उसे देखकर बोले, "आओ।"

"गाड़ी कै बजे जाती है?"

"साढ़े आठ पर।"

"हमारी दोस्ती भी अब समाप्त समझो।"

"क्या दिनेश?"

"कल रात मैंने एक नया दोस्त ढूँढ़ निकाला है। या यों कहूँ कि उसने मुझे ढूँढ़ निकाला तो आश्चर्य नहीं होगा। वह उन्नीस साल जेल काट आया है और ग्यारह खून करने के यश का भागी है।"

"दिलावर तो नहीं है?"

"वही है।"

"वह पकड़ा गया है। अभी-अभी कोतवाली से फोन आया है। उसने अपनी रखैल की नाक काट डाली। मजाक़-मजाक़ में झगड़ा हुआ। वह छोकरी गाली देती रही। वह बहुत शराब पिये हुए था। नशा और गुस्सा तो तुम जानते ही हो। उसने तरकारी काटने का चाक़ू उठाकर उसकी नाक काट दी है। शोरगुल सुनकर पुलिस ने उसे पकड़ा है।"

"जेल फिर होगी?"

"हाँ, चार-पांच साल की।"

"बेचारा अब जेल नहीं जाना चाहता था। उसका इरादा अब

भले आदमियों की भांति जीवन बसर करने का था। मैं उसकी पैरवी करूँगा।"

"तुम!"

"हां मिस्टर सिंह। इसमें आश्चर्य क्या है? कल रात उसने मुझे अपनी छुरी देकर दोस्त बनाया है। हम अब दोस्त हैं। मेरा कर्तव्य है कि मैं उसकी पैरवी करूँ।"

"वह पुराना बदमाश है। जेल होगी ही। तुम्हारे हित में भी ठीक बात नहीं है। ऐसे गुण्डों को मुँह नहीं लगाना चाहिए।"

"लेकिन मिस्टर सिंह........."

"मैं तुम्हारी बात समझ गया। क़ानून फिर भी क़ानून ही है। मैं इस मामले में कोई सहायता नहीं दे सकता। उस लड़की के कसूर के लिए तुम दंड देना चाहते थे और आज? उसकी रक्षा जरूरी थी, लेकिन दिलावर की नहीं।"

"मिस्टर सिंह आपका और मेरा दृष्टिकोण भिन्न है। मैं दिलावर को ईमानदार साथी मानता हूँ। वह चाहता, भाग सकता था। लेकिन अब वह उस जीवन से ऊब गया है।"

"यह तुम्हारा ख़याल है। तुम कब जा रहे हो और कहां?"

"जल्दी ही चला जाना चाहता हूँ। सुना है, शहरों से बाहर देहात के लोगों में एक नई चेतना आ गई है। मैं वहाँ की स्वस्थ जमीन पर नई चेतनावाले लोगों के बीच रहना चाहता हूँ। बुद्धवादियों की भांति 'स्कीमों' पर रहना हितकर नहीं। न मेरा उन पर विश्वास ही है। शहर का जीवन भली भाँति देख लिया है।"

"रेखा से कोई बातें हुईं?"

"वह कुछ कहना चाहती है। पर मौक़ा नहीं मिलता। स्वयं मैं

नहीं चाहता हूँ कि वह कुछ कह दे। आजकल वह बहुत निर्बल है। इसी लिए उसकी भावुकता उमड़ती रहती है। शायद वह भी इस समाज से ऊब गई है। अपने थोथे वैभव को पहचानती है। उसे स्वयं कुछ सोच लेने का अवसर दे रहा हूँ। आज इसी लिए उससे अधिक बातें नहीं करता हूँ।"

"रेखा ने अभी कुछ नहीं कहा है।"

"मिस्टर सिंह लता, रेखा सब अपने समाज के जीव हैं; पर उनकी श्रेणी ऊँची है। वहाँ से बाहर वे नहीं देख पातीं। तुम स्वयं अपने अहलकारों के समाज की चापलूसियों और साथी अफ़सरों की बातों के अतिरिक्त क्या ज्ञान रखते हो?"

मिसेज सिंह आ गई थीं। बोलीं, "बेबी आज सुस्त है।"

दिनेश देखकर बोला, "दाँतों के मारे हरारत है।"

"रेखा कैसी है?"

"अच्छी हो गई है।"

"और मेरा वादा!"

"कौन-सा?"

"आप भूल गये।"

"वह आपकी असम्भव उदारता थी।"

"तब आप सच ही फ़कीर हो रहे हैं।"

"किसने कहा?"

"लता ने।"

"वह जो न सोच ले, थोड़ा ही है।"

"क्यों?"

"अपने आप फन्दे में फँस गई है, इसी लिये।"

"उसने स्वीकृति दे दी?"

"हाँ-हाँ ! आप एक दिन राजरानी बनाकर उसे बिदा करेंगी।"

"उसके बाद रेखा को ?"

"उसे मरघट पर पहुँचाकर आप मुझसे कपाल-क्रिया क्यों करवाना चाहती हैं।"

"आपके मुँह से ऐसी अशुभ बात शोभा नहीं देती।"

"तभी तो चाहता हूँ कि आप ऐसी चर्चा उसके कानों तक न पहुँचावें। मैं उसके लिए स्वयं चिन्तित हूँ। वह आज सात भाँवरें करने की पक्षपाती नहीं है। न दिल उबाल के लिए किसी से 'प्रेम' करती है। वह सबल होते ही अपना साथी स्वयं चुन लेगी।"

"आप सात भांवरों से क्यों घबरा गये हैं ?"

"आपको अपनी शरारतों से भरी मंजिल याद आ रही है न ? आप लोगों की शादी के बाद फोटो का एक प्रिंट मिस्टर सिंह ने मेरे पास भेजा था। मैं स्वयं शादी में आता, किन्तु उसी दिन एक पड़ोसी स्वर्ग सिधार गये। अट्ठाइस दिन तक मैंने उनकी देखभाल की थी। चेचक निकली और चुपचाप बहाना बन गया।"

"लता की शादी तक तो आप यहीं रहेंगे ?"

"मैं न भी रहूँ। फोटो अखबार में देखने को मिल ही जायगा।"

"हमारा ज़माना तो फूहड़ों का था। ये नये ज़माने की हैं।"

"यह कौन कहता है ?"

"वे।"

"मिस्टर सिंह ! ठीक ही कहते हैं। मैं उनका दोस्त और वकील हूँ।"

"मेरे वकील भी आप ही रहे।"

"रेखा को बना लो।" दिनेश हँस पड़ा।

बेबी रोने लगा था। मिसेज सिंह उसे नौकरानी को सौंपने चली

गई। दिनेश ने बाहर आ कर देखा कि मिस्टर सिंह कई पुलिस अफ़सरों के साथ बैठे हुए थे। वह चुपचाप लौट आया।

मिसेज सिंह ने आकर पूछा, "वकालत का क्या हाल है?"

"रेखा की बीमारी के साथ छूट गई।"

मिस्टर सिंह आकर बोले, "सब ठीक-ठाक हो गया है न? वक़्त हो चला है।"

मिसेज के चले जाने पर कहा, "तो तुम जा रहे हो न दिनेश? रुपया कितना चाहिये? मांगोगे तुम कभी नहीं।"

"कुछ नहीं चाहिए।"

"तुम सुस्त क्यों हो?"

"दिलावर के बारे में सोच रहा हूँ।"

"उस बदमाश के?"

"बदमाश?"

"उसके घर में तलाशी लेने पर ग्यारह हज़ार की 'कोकीन' मिली है। पुलिस का तो तुम पर भी शक है।"

"मुझ पर?"

"कल तुम उसके साथ थे, इसी लिए। इन लोगों का एक बड़ा गिरोह पकड़ा गया है।"

"मिस्टर सिंह, उनके व्यवसाय से तुमको घृणा क्यों है? हर एक को अपना-अपना व्यवसाय पसन्द होता है। जेल जाने पर सुधार न होकर वे और भयंकर अपराधों को करने की शिक्षा लेकर लौटते हैं। जेल की आधुनिक प्रणाली व्यक्ति को नष्ट कर देती है, न कि उसका सही उपयोग करती है।"

"यह है तुम्हारा कोरा दर्शन-शास्त्र!"

"तुम 'पेनल कोडों' पर चलते हो। अन्तर बहुत थोड़ा है।"

"तुम उससे मिलना चाहो, मिल सकते हो।"

"लेकिन किस मुंह से। मुझमें शक्ति होती तो उससे जाकर कहता—चल दिलावर, अब तू मुक्त है। मेरे साथ चल। तेरे अनुभवों के आधार पर मुझे बहुत बातों की आसानी से जानकारी प्राप्त हो जायगी।"

"अच्छा दिनेश, समय बहुत कम है। गाड़ी का वक्त हो चला है। तुम मुझसे कभी भविष्य में मिलने जरूर आना। यहां तुमको बुलाकर मेरी धारणा थी कि एक वर्ग की रौनक दिखलाकर तुमको ललचा लूंगा। पर वह मेरी भूल थी। रेखा के सहारे भी तुमको उलझाने में असमर्थ रहा। वह 'चम्पा' के पेड़वाली बात झूठी थी। तुमको उलझाने को मैंने वह सब लिखा था। लेकिन रेखा को मैं प्यार करता रहा, यह सच है। मेरी गृहस्थी में जगह नहीं थी, इसी लिए मुझे थोड़ा दुःख जरूर होता था।"

"खाना तैयार है।" मिसेज सिंह आकर बोलीं।

"चलो दिनेश।"

"मैंने तो अभी मुँह तक भी नहीं धोया है।"

"वे यहाँ का नमक नहीं खायँगे।"

"बेबी कहाँ है?"

"अपने कमरे में।"

"तुम खाना खाओ। मैं अपने छोटे दोस्त के पास हो आऊँ।"

वह चला गया।

कुछ देर के बाद मिस्टर सिंह ने कहा, "चलो रेखा के घर तुमको छोड़ आऊँ।"

वे दोनों कार पर बैठ गये। दिनेश बोला, "मिस्टर सिंह, रेखा को स्वयं पनपने देना। मैं उसे चिट्ठी लिखूँगा। वह स्वस्थ हो जायगी।"

रेखा लेटी हुई थी। मिस्टर सिंह बिदा लेकर चले गये। दिनेश

बाहर दालान में खड़ा था। इस दोस्त को बिंदा करते हुए दिनेश का हृदय पिघला। एक लम्बे अरसे तक उसने उनका बल पाया था। मिस्टर सिंह ने दिनेश को सदा अपनाया। उसकी मुसीबतों में सहायक हुए। वह उस बल के कारण विश्वविद्यालय में सफल रहा। वह पहचान निपट गई थी। दोनों अलग-अलग हो गये थे। वह दूर तक देख रहा था। चौड़ी सड़क पर नजर पड़ी, जहाँ एक अरसे से आदमी चलता रहता है। वही कोई खास मुसाफ़िर नहीं है। वह तो आज वक्त के 'कैनवास' पर पड़े हुए अपने पांव के चिह्नों को मिटा रहा था।

अब दिलावर से भी भेंट नहीं होगी। वह सिद्धान्त नहीं बन सका। वह लौटकर रेखा के सिरहाने खड़ा हो गया।

उसने रेखा को देखा। वह चुपचाप पड़ी हुई थी। वह उसे त्याग रहा है। लेकिन रेखा का सामाजिक दरजा उससे बड़ा है। सिविल सर्जन आये थे। उन्होंने कहा कि निर्बलता के अतिरिक्त रेखा अब स्वस्थ है। एक हफ्ते के बाद वह चल-फिर सकेगी। वे चले गये।

दिनेश सोचने लगा कि वह उस श्रेणी के बीच मुसाफिर की हैसियत से आया था। रेखा वही है, वैसी ही। मिसेज माथुर बैठी हुई थी। दिनेश ने रेखा से पूछा, "कार ठीक होगी?"

"शोफर कल बनाकर ले आया है।"

"मैं ले जा रहा हूँ! एक घंटे में लौट आऊँगा।"

और वह चला गया।

वह बाज़ार पहुँचा। गली से बाहर सड़क पर 'कार' खड़ी करवाई। चुपचाप अकेले ही भीतर गया। गली बहुत मैली थी। पिछवाड़े के परनालों से पानी की छड़छड़ाहट लगी थी। बदबू थी और मक्खियां कूड़े के ऊपर भिनभिना रही थीं। वह नाली से बचता हुआ किनारे-किनारे दीवार से लगकर चलने लगा। मकान को पहचानकर

उसने दरवाजा खटखटाया। एक बूढ़ी ने दरवाजा खोलकर पूछा, "आप क्या चाहते हैं?"

"वह लड़की कहां है?"

"कौन?"

"जिसकी नाक दिलावर ने काटी है।"

"पुलिस गवाही के लिए पकड़कर ले गई है।"

"वह क्या कहती थी?"

"वह सुबह से रोती रही। उसने पुलिस से कहा कि गुस्से में उसने खुद अपनी नाक काटनी चाही थी।"

"लेकिन दिलावर को जेल हो जायगी।"

"तो यह छोकरी ज़िन्दा नहीं रहेगी।"

"क्यों? ऐसी बात कौन-सी है?"

"बाबूजी, यह ऐसा ही खेल है। हर एक आदमी नहीं समझ सकता। यह उस पर दिलोजान से मरती है।"

"उस पर..."

"उसके पीछे दीवानी है।"

"दीवानी?"

"पुलिसवालों से कहती थी कि अगर दिलावर को कुछ हुआ, तो वह उनका खून पी जायगी।"

दिनेश ज्यादा बात न कर लौट आया। वह पग-पग पर गोखरू पाकर उनको बटोरने का पक्षपाती नहीं है। इन दोनों दीवानों का जोड़ा उसे खूब पसन्द आया। वह लौट रहा था कि देखा, वह सांवली युवती लौट आई है।

"तुम आ गईं?"

"हां, आपसे कुछ बातें करनी हैं।"

"क्या ?" दिनेश ने देखा कि उसकी नाक पर भद्दा-सा घाव था। वह बोली, "मेरे बच्चा होनेवाला है। रात इसी की परवरिश के लिए रुपये जमा करने की बात मैंने कही थी। वे नाहक ही गुस्सा हो गये। अच्छा, आपने खाना खा लिया।"

"अब जाऊँगा।"

"तो लस्सी मँगवाये लेती हूँ।"

"घर पर खाना तैयार होगा।"

"हमारे यहां परहेज हो तो ......"

"नहीं ! नहीं !!"

"तो कचौड़ियाँ मँगवा लेती हूँ।"

इस अनुरोध के बाद दिनेश कुछ नहीं कह सका। वह गली से बाहर निकलकर 'शोफर' से बोला, "तुम जा सकते हो। मुझे एक मुवक्किल से बातें करनी हैं। खाना खाने नहीं लौटूंगा।"

लौट कर देखा कि युवती अकेली थी। बुढ़िया बाजार चली गई थी। युवती बोली, "वे कहते थे, आप वकील हैं। क्या आप उनको नहीं छुड़ा सकते हैं ?"

"कोकीन का पकड़ा जाना गड़बड़ हो गया है। अब तो नामुमकिन बात है।"

"क्या वे जेल के भीतर से नहीं छुड़ाये जा सकते ?"

"कैसे ?"

"मैं जेल के जमादार को जानती हूँ। वह पहले मेरे यहां आया करता था। वह ज़रूर मेरी मदद करेगा। मैं उसके पास जाऊँगी।"

"तुम कोशिश कर सकती हो। लेकिन उसे छुड़ाना आसान नहीं।"

"लेकिन यह बच्चा ?"

"तुम उसे पालना। बड़े होने पर उसे समझाना कि तेरा पिता एक बहादुर आदमी था।"

"लेकिन हमारा काम कैसे चलेगा ?"

"ठीक-ठीक ! मुझे पता लिखकर दे दो। मैं कुछ माहवारी भेजने का बन्दोबस्त कर दूँगा।"

खाना आ गया था। दिनेश चुपचाप खाना खाने लगा।

"बाबूजी और मुकदमा ?"

"वह अपने हाथ की बात नहीं है।"

दिनेश सान्त्वना देकर लौट आया। राह में तांगा मिल गया था। रेखा उस समय पढ़ रही थी। वह पूछ बैठा, "वे कहां गई हैं ?"

"लता के साथ शहर। आप भी तो मेहमानदारी में रुक गये थे। ऐसा कौन-सा मुवक्किल मिल गया ?"

"दिलावर की रखेल !"

"वही मैं पढ़ रही थी। अख़बारों में बड़ी सनसनी पैदा करनेवाली ख़बर छपी है।"

"वह मुकदमा लड़ना चाहती थी।"

"मुक़दमा तो अच्छा मिला है।"

"बड़ी ढीठ है। कहती थी कि पुलिस से बदला लेगी।"

"दिनेशजी !"

"क्या है रेखा ?"

"मैं सोच रही हूँ कि कुछ दिनों के लिए इस शहर से चली जाऊँ।"

"तब चली जाना।"

"तुम नहीं चलोगे ?"

"मैं ?" दिनेश चिन्तित-सा बोला।

"मैं अब अनुरोध न करूँगी। मेरी बुआ का भाई पटने में रहता है। वहीं चली जाऊँगी।"

"रेखा अभी उत्तेजित होना ठीक नहीं। स्वस्थ होने पर इस बात पर विचार करेंगे। ऑफिस का कमरा तो ठीक होगा। मुझे कुछ काम करना है।"

वह उस कमरे में चला गया। वहाँ निश्चिंत हो बैठकर सोचने लगा कि वह भी कोकीन का व्यापारी है और रेखा उसे गिरफ्तार करना चाहती है।

उसने पैड निकाला और यह चिट्ठी लिखी :—

"रेखा,

यह मेरा पहला और अन्तिम पत्र है। आगे मैं तुम्हारे जीवन में रुकावट नहीं डालूंगा। मैंने सदा चाहा है कि तुम भविष्य में स्वाभाविक गति के साथ समाज के बीच चलो। जिस मोह के कारण तुम भावुक बनकर सोचती हो कि आजीवन मेरी दासी बनकर रहोगी, वह गलत है। तुम कभी एक दिन स्वस्थ हो जाने पर गृहस्थ बन जाना। वह मेरी खुशी होगी। रेखा, यह मोह-ममता धर्म भगवान् का जाल सदा से ही समाज में रहा है यह झूठा है।

मैं तुमसे प्रेम करता हूँ रेखा। वह मेरा स्नेह है। बड़ी-बड़ी रात जागकर मैंने तुम्हारे चेहरे को पढ़ा है। यहां की दुनिया में तुम लोगों के बीच रहा हूँ। तुम सब लोगों के उपकार को नहीं भूल सकूंगा। आज मुझे ख़ुशी है कि तुम मुझे बन्धन से दूर पाओगी। तुम्हारी कोमल भावनाओं के साथ, तुम्हारे समीप मेरा रहना हितकर नहीं।

"मुझे विश्वास है कि निकट भविष्य में कभी एक दिन हम जरूर मिलेंगे। उस दिन की बाट जोह रहा हूँ।

तुम्हारा

दिनेश।"

दिनेश होटल पहुँचा। बड़ी देर तक वहां पड़ा रहा। कुछ सोचकर उसने लता को फोन किया। लता से बोला कि वह नौकर भेज रहा है। उसे तीन सौ रुपये की तुरंत आवश्यकता आ पड़ी है।

नौकर रुपये ले आया। उसने पांचू से कहा कि सब सामान ठीक कर ले। ख़ुद मैनेजर के पास हिसाब चुकाने के लिए पहुँच गया।

पांचू से तांगा मँगवाकर उसने सामान लदवाया। फिर दिलावर की रखेल को सौ रुपये दे आया। रास्ते में रेखा के नाम की तख्ती पढ़ी। तांगा आगे बढ़ गया।

अब वह स्टेशन के प्लेटफार्म पर खड़ा हुआ गाड़ी का इन्तजार कर रहा था। रात हो चली थी। उसने देखा कि पेड़ के नीचे कोई लड़की बैठी हुई है। उसे पहचान वह अचरज में पड़कर बोला, "तुम कहां जा रही हो?"

"अभी गाड़ी से उतरी हूँ। पति ने दूसरी शादी करके मुझे घर से निकाल दिया है।"

"अब तुम कहां जा रही हो?"

"मैं रेखा के पास जाने की सोच रही थी कि किसी स्कूल में नौकरी दिलवा दे। और तुम?"

"मैंने शहर छोड़ दिया है।"

"आठ-दस महीने में ही ऊब गये।"

"तुम मेरे साथ चलना चाहो, चल सकती हो।"

"मैं?"

"हां।"

"और समाज!"

"मैं नये समाज के बीच जा रहा हूँ।"

दिनेश दो टिकट ले आया था। गाड़ी आई। दोनों बैठ गये।

युवती ने देखा कि दिनेश के चेहरे पर गंभीर मुस्कान थी।